टाल्स्टायकी कहानियां

लेखक—

काउन्ट टाल्स्टाय

सम्पादक—

स्व० प्रेमचन्द

प्रकाशक—

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी

ज्ञानवापी, काशी।

...वीं बार] १९४० [मूल्य १...

विषय-सूची

टाल्स्टायकी कहानियां

१

क्षमादान

दिल्ली नगरमें भागीरथ नामका युवक सौदागर रहता था। वहाँ उसकी अपनी दो दूकानें और एक रहनेका मकान था। वह सुन्दर था, उसके बाल कोमल, चमकीले और घुंघराले थे, वह हँसोड़ और गानेका बड़ा प्रेमी था। युवा अवस्थामें उसे मद्य पीनेकी बान पड़ गयी थी। अधिक पी जानेपर कभी-कभी हल्ला भी मचाया करता था, परन्तु विवाह कर लेनेपर उसने मद्य पीना छोड़ दिया था।

गरमीमें एक समय वह कुम्भपर गंगा जानेको तैयार हो अपने बच्चों और स्त्रीसे बिदा मांगने आया।

स्त्री—प्राणनाथ, आज न जाइये, मैंने बुरा सपना देखा है।

भागीरथ—प्रिये, तुम्हें भय है कि मैं मेलेमें जाकर तुम्हें भूल जाऊँगा?

स्त्री—यह तो मैं नहीं जानती कि मैं क्यों डरती हूँ, केवल

इतना जानती हूँ कि मैंने बुरा स्वप्न देखा है। मैंने देखा है कि जब तुम घर लौटे हो तो तुम्हारे बाल श्वेत हो गये हैं।

भागीरथ—यह तो सगुन है, देख लेना मैं सारा माल बेच मेलेसे तुम्हारे लिये अच्छी-अच्छी चीजें लाऊंगा।

यह कह गाड़ीपर बैठ वह चल दिया, आधी दूर जाकर उसे एक सौदागर मिला, जिससे उसको जान-पहचान थी। वह दोनों रातको एक ही सरायमें ठहरे। सन्ध्या-समय भोजन कर पासकी कोठरियोंमें सो गये। भागीरथको सबेरे जग उठनेका अभ्यास था। उसने यह विचार करके कि ठंडे-ठंडे राह चलना सुगम होगा, मुँह-अन्धेरे उठ गाड़ी तैयार करायी और भटियारे के दाम चुकाकर चलता बना। पचीस कोस जानेपर घोड़ोंको आराम देनेके लिये एक सरायमें ठहरा और आँगनमें बैठकर सितार बजाने लगा।

अचानक एक गाड़ी आयी—एक पुलिसका कर्मचारी और दो सिपाही उतरे। कर्मचारी उसके समीप आकर पूछने लगा कि तुम कौन हो और कहाँसे आये हो—वह सब कुछ बतला-कर बोला कि आइये भोजन कीजिये—परन्तु कर्मचारी बार-बार यही पूछता था कि तुम रातको कहाँ ठहरे थे। अकेले थे या कोई साथ था। तुमने साथीको आज सबेरे देखा या नहीं। तुम मुंह अन्धेरे क्यों चले आये ?

भागीरथको अचम्भा हुआ कि बात क्या है ? यह प्रश्न क्यों पूछे जा रहे हैं। बोला—आप तो मुझसे इस भाँति पूछते हैं

कि जैसे मैं कोई चोर या डाकू हूँ। मैं तो गंगास्नान करने जा रहा हूँ। आपको मुझसे क्या मतलब है?

कर्मचारी—मैं इस प्रान्तका पुलिस अफसर हूँ, और यह प्रश्न इसलिये करता हूँ कि जिस सौदागरके साथ तुम कल रातको सरायमें सोये थे, वह मार डाला गया। हम तुम्हारी तलाशी लेने आये हैं।

यह कह उसके असबाबकी तलाशी लेने लगा। एकाएक थैलेमेंसे एक छुरा निकला, वह लोहूसे भरा हुआ था, यह देखकर भागीरथ डर गया।

कर्मचारी—यह छुरा किसका है, इसपर लोहू कहाँसे लगा?

भागीरथ चुप रह गया, उसका कण्ठ रुक गया, हिचकता हुआ कहने लगा—म...मेरा नहीं...म...मैं नहीं जानता।

कर्मचारी—आज सबेरे हमने देखा कि वह सौदागर गला कटे चारपाईपर पड़ा है। कोठरी अन्दरसे बन्द थी, सिवाय तुम्हारे भीतर कोई न था, अब यह लोहूसे भरा हुआ छुरा इस थैलेमेंसे निकला है। तुम्हारा मुख ही गवाही दे रहा है, बस तुमने ही उसे मारा है, बतलाओ किस तरह मारा और कितने रुपये चुराये हैं।

भागीरथने सौगन्ध खाकर कहा—मैंने सौदागरको नहीं मारा। भोजन करनेके पीछे फिर मैंने उसे नहीं देखा, मेरे पास अपने आठ हजार रुपये हैं, यह छुरा मेरा नहीं।

परन्तु उसकी बातें उखड़ी हुई थीं, मुख पीला पड़ गया था और वह पापीकी भाँति भयसे कांप रहा था।

पुलिस अफसरने सिपाहियोंको हुक्म दिया कि इसकी मुश्कें कसकर गाड़ीमें डाल दो। जब सिपाहियोंने उसकी मुश्कें कसी तो वह रोने लगा। अफसरने पासके थानेपर ले जाकर उसका रुपया पैसा छीन उसे हवालातमें दे दिया।

इसके बाद दिल्लीमें उसके चाल-चलनकी जांचकी गई, सब लोगोंने यही कहा कि पहले वह मद्य पीकर बक झक किया करता था, पर अब उसका आचार बहुत अच्छा है। अदालतमें तहकीकात होनेपर उसे रामपुर-निवासी सौदागरके वध करने और बीस हजार रुपये चुरा लेनेका अपराधी ठहराया गया।

भागीरथकी स्त्रीको इस बातपर विश्वास न होता था। उसके बालक छोटे-छोटे थे। एक अभी दूध ही पीता था। वह सबको साथ लेकर पतिके पास पहुँची। पहले तो कर्मचारियोंने उसे उससे मिलनेकी आज्ञा न दी, परन्तु बहुत विनय करनेपर आज्ञा मिल गई और पहरेवाले उसे कैदघरमें ले गए। ज्योंही उसने अपने पतिको बेड़ी पहने हुये चोरों और डाकुओंके बीचमें बैठा देखा, वह बेसुध होकर धरतीपर गिर पड़ी। बहुत देरमें उसे सुध आई। वह बच्चों-सहित पतिके निकट बैठ गई और घरका हाल कहकर पूछने लगी कि यह क्या बात है? भागीरथने सारा वृतान्त कह सुनाया।

स्त्री—तो अब क्या हो सकता है?

भागीरथ—हमें महाराजसे विनय करनी चाहिये कि वह निरपराधीको जानसे न मारें।

स्त्री—मैंने महाराजसे विनय की थी, परन्तु वह स्वीकार नहीं हुई।

भागीरथने निराश होकर सिर झुका लिया।

स्त्री—देखा मेरा सपना कैसा सच निकला। तुम्हें याद है न, मैंने तुमको उस दिन मेले जानेसे रोका था। तुम्हें उस दिन न चलना चाहिये था लेकिन तुमने मेरी बात न मानी सच-सच बताओ तुमने तो उस सौदागरको नहीं मारा न?

भागीरथ—क्या तुम्हें भी मेरे ऊपर सन्देह है?

यह कहकर वह मुंह ढांप रोने लगा, इतनेमें सिपाहीने आकर स्त्रीको वहांसे हटा दिया और भागीरथ सदैवके लिये अपने परिवारोंसे बिदा हो गया।

घरवालोंके चले जानेपर जब भागीरथने यह विचारा कि मेरी स्त्री भी मुझे अपराधी समझती है तो मनमें कहा—बस मालूम हो गया, परमात्माके बिना और कोई नहीं जान सकता कि मैं पापी हूं या नहीं। उसीसे दयाकी आशा रखनी चाहिये।

फिर उसने छूटनेका कोई यत्न नहीं किया। चारों ओरसे निराश होकर ईश्वरहीके भरोसे बैठ रहा।

भागीरथको पहले तो कोड़े मारे गये। जब घाव भर गये तो उसे लोहगढ़के बन्दीखानेमें भेज दिया गया।

वह २६ वर्ष बन्दीखानेमें पड़ा रहा। उसके बाल पककर

सनकेसे हो गये, कमर टेढ़ी हो गयी, देह घुल गयी, सदैव उदास रहता कभी हंसता न बोलता, परन्तु भगवानका भजन नित्य किया करता था।

वहां उसने दरी बुननेका काम सीखकर कुछ रुपया जमा किया और भक्तमाल मोल ले ली। दिनभर काम करनेके बाद सांझको जबतक सूरजका प्रकाश रहता वह उस पुस्तकको पढ़ा करता और एतवारके दिन वन्दीखानेके निकटवाले मन्दिरमें जाकर पूजा-पाठ भी कर लेता था। जेलके कर्मचारी उसे सुशील जानकर उसका मान करते थे। कैदी लोग उसे बूढ़ा बाबा अथवा महात्मा कहकर पुकारा करते थे। कैदियोंको जब कभी कोई अर्जी भेजनी होती तो वह उसे अपना मुखिया बनाते और अपने झगड़े भी उसीसे चुकाया करते।

उसे घरका कोई समाचार न मिलता था। उसे यह भी न मालूम था कि स्त्री-बालक जीते हैं या मर गये।

एक दिन कुछ नये कैदी वहां आये। संध्या समय पुराने कैदी उनके पास आकर पूछने लगे कि भाई तुम कहांसे आये हो और तुमने क्या-क्या अपराध किये हैं। भागीरथ उदास बैठा सुनता रहा। नये कैदियोंमें एक साठ वर्षका हट्टा-कट्टा आदमी जिसकी दाढ़ी बाल खूब छटे हुए थे अपनी रामकहानी यों सुना रहा था—

भाइयो, मेरे मित्रका घोड़ा एक पेड़से बंधा हुआ था। मुझे घर जानेकी जल्दी पड़ी हुई थी। मैं उस घोड़ेपर सवार होकर

घर चला गया। वहाँ जाकर मैंने घोड़ा छोड़ दिया। मित्र कहीं चला गया था। पुलिसवालोंने चोर ठहराकर मुझे पकड़ लिया। यद्यपि कोई यह नहीं बतला सका कि मैंने किसका घोड़ा चुराया और कहाँसे, फिर भी चोरीके अपराधमें मुझे यहाँ भेज दिया है। इससे पहले एक बेर मैंने ऐसा अपराध किया था कि मैं लोहगढ़में भेजे जानेके लायक था परन्तु मुझे उस समय कोई नहीं पकड़ सका। अब बिना अपराध ही यहाँ भेज दिया गया हूँ।

एक कैदी—तुम कहाँसे आये हो?

नया कैदी— दिल्लीसे, मेरा नाम बलदेव है।

भागीरथ—भला बलदेव सिंह, तुम्हें भागीरथके घरवालोंका कुछ हाल मालूम है, जीते हैं कि मर गये?

बलदेव—जानना क्या? मैं उन्हें भलीभांति जानता हूँ। अच्छे मालदार हैं—हाँ, उनका पिता यहीं कहीं कैद है। मेरे ही जैसा अपराध उसका भी था। बूढ़े बाबा तुम यहाँ कैसे आये?

भागीरथने अपनी विपत्ति-कथा न कही। केवल हाय कह कर बोला— मैं अपने पापोंके कारण २६ वर्षसे यहाँ पड़ा सड़ रहा हूँ।

बलदेव—क्या पाप, मैं भी सुनूं?

भागीरथ—भाई जाने दो, पापोंका फल अवश्य भोगना पड़ता है।

वह और कुछ न कहना चाहता था, परन्तु दूसरे कैदियोंने बलदेवको सारा हाल कह सुनाया कि वह एक सौदागरके बध

करनेके अपराधमें यहाँ कैद है। बलदेवने यह हाल सुना तो भागी· रथको ध्यानसे देखने लगा। घुटनेपर हाथ मारकर बोला—वाह वाह, बड़ा अचरज है! लेकिन दादा तुम तो बिल्कुल बूढ़े हो गये।

दूसरे कैदी बलदेवसे पूछने लगे कि तुम भागीरथको देख कर चकित क्यों हुए, तुमने क्या पहले कहीं उसे देखा है? परन्तु बलदेवने कोई उत्तर नहीं दिया।

भागीरथके चित्तमें यह संशय उत्पन्न हुआ कि शायद बल- देव रामपुरी सौदागरके असली मारनेवालेको जानता है। बोला—बलदेवसिंह, क्या तुमने यह बात पहले सुनी है और मुझे भी पहले कहीं देखा है?

बलदेव—यह बात तो सारे संसारमें फैल रही है। मैं किस तरह न सुनता, पर बहुत दिन बीत गये, मुझे कुछ याद नहीं रहा।

भागीरथ—तुम्हें मालूम है कि उस सौदागरको किसने मारा था?

बलदेव—हँसकर, जिसके थैलेमेंसे छुरा निकला वही उसका मारनेवाला. यदि किसीने थैलेमें छुरा छिपा भी दिया हो तो जबतक कोई पकड़ा न जाय उसे चोर कौन कह सकता है? थैला तुम्हारे सिरहाने धरा था। यदि कोई दूसरा पास आकर छुरा थैलेमें छिपाता तो तुम अवश्य जाग उठते।

यह बातें सुनकर भागीरथको निश्चय हो गया कि सौदा- गरको इसीने मारा है। वह उठकर वहाँसे चल दिया पर सारी रात जागता रहा। दुःखसे उसका चित्त व्याकुल हो रहा.

था। उसे अनेक प्रकारकी बातें याद आने लगीं। पहले स्त्रीकी उस समयकी सूरत दिखायी दी जब वह उसे मेले जानेको मना कर रही थी। सामने ऐसा जान पड़ा कि वह खड़ी है। उसकी बोली और हंसीतक सुनाई दी। फिर बालक दिखाई पड़े, फिर युवा अवस्थाकी याद आयी, कितना प्रसन्नचित्त था, कैसा आनन्दसे द्वारपर बैठा सितार बजाया करता था। फिर वह सराय दिखाई दी जहां वह पकड़ा गया था। तब वह जगह सामने आयी जहां उसपर कोड़े लगे थे। फिर बेड़ी और बन्दीखाना, फिर बुढ़ापा और २६ वर्षका दुःख, यह सब बातें उसकी आंखोंमें फिरने लगीं। वह इतना दुःखी हुआ कि जीमें आया कि अभी प्राण दे दूं।

"हाय इस बलदेव चाण्डालने यह क्या किया। मैं तो अपना सर्वनाश करके भी इससे बदला अवश्य लूंगा।

सारी रात भजन करने पर भी उसे शान्ति नहीं हुई। दिनमें उसने बलदेवको देखातक नहीं। पन्द्रह दिन बीत गये, भागीरथकी यह दशा थी कि न रातको नींद न दिनको चैन, क्रोधाग्निमें जल रहा था।

एक रात वह जेलखानेमें टहल रहा था कि उसने कैदियोंके सोनेके चबूतरेके नीचेसे मिट्टी गिरते देखी। वह वहीं ठहर गया कि देखूं मिट्टी कहांसे आ रही है। सहसा बलदेव चबूतरेके नीचेसे निकल आया और भयसे कांपने लगा। भागीरथ आंखें मूंदकर आगे जाना चाहता था कि बलदेवने उसका हाथ पकड़ लिया

और बोला—देखो, मैंने जूतोंमें मिट्टी भरके बाहर फेंककर यह सुरंग लगायी है, चुप रहना। मैं तुमको यहांसे भगा देता हूं। यदि शोर करोगे तो जेलके अफसर मुझे जानसे मार डालेंगे, परन्तु याद रखो कि तुम्हें मारकर मरूंगा यों नहीं मरता।

भागीरथ अपने शत्रुको देखकर क्रोधसे कांप उठा और हाथ छुड़ाकर बोला—मुझे भागनेकी इच्छा नहीं, और मुझे मारे तो तुम्हें २६ वर्ष हो चुके। रही यह हाल प्रकट करनेकी बात, जैसी परमात्माकी आज्ञा होगी वैसा होगा।

अगले दिन जब कैदी बाहर काम करने गये तो पहरेवालोंने सुरंगकी मिट्टी बाहर पड़ी देख ली। खोज लगानेपर सुरंगका पता चल गया। हाकिम सब कैदियोंसे पूछने लगे। किसीने न बतलाया क्योंकि वह जानते थे कि यदि बतला दिया तो बलदेव मारा जायगा। अफसर भागीरथको सत्यवादी जानते थे, उससे पूछने लगे—बूढ़े बाबा तुम, सच्चे आदमी हो। सच बताओ कि यह सुरंग किसने लगायी है।

बलदेव पास ही ऐसे खड़ा था कि कुछ जानता ही नहीं। भागीरथके होंठ और हाथ कांप रहे थे। चुपचाप विचार करने लगा कि जिसने मेरा सारा जीवन नाश कर दिया उसे क्यों छिपाऊं? दुःखका बदला दुःख उसे अवश्य भोगना चाहिये, परन्तु बतला देनेपर फिर वह बच नहीं सकता। शायद यह सब मेरा भ्रममात्र हो, सौदागरको किसी और नेही मारा हो। यदि इसने ही मारा है तो इसे मरवा देनेसे मुझे क्या लाभ होगा?

अफसर—बाबा, चुप क्यों हो गये, बतलाते क्यों नहीं ?

भागीरथ—मैं कुछ नहीं बतला सकता—आप जो चाहें सो करें ।

हाकिमने बार-बार पूछा, परन्तु भागीरथने कुछ भी नहीं बतलाया, बात टल गई ।

उसी रात भागीरथ जब अपनी कोठरीमें लेटा हुआ था, बलदेव चुपकेसे भीतर आकर पास बैठ गया, भागीरथने देखा, और कहा—बलदेवसिंह अब और क्या चाहते हो? यहाँ तुम क्यों आये ?

बलदेव चुप बैठा रहा ।

भागीरथ—तुम क्या चाहते हो, यहाँसे चले जाओ नहीं तो मैं पहरेवालेको बुला लूँगा ।

बलदेव—(पाँवपर पड़कर) भागीरथ, मुझे क्षमा करो, क्षमा करो ।

भागीरथ—क्यों ?

बलदेव—मैंने ही उस सौदागरको मारकर छुरा तुम्हारे थैलेमें छिपाया था । मैं तुम्हें भी मारना चाहता था । परन्तु बाहरसे आहट हो गयी, मैं छुरा थैलेमें रखकर भाग निकला ।

भागीरथ चुप हो गया, कुछ नहीं बोला ।

बलदेव—भाई भागीरथ भगवानके वास्ते मुझपर दया करो, मुझे क्षमा करो । मैं केवल अपना अपराध अंगीकार कर लूँगा, तुम छूटकर अपने घर चले जाओगे ।

भागीरथ—बातें बनाना सहज है। २६ वर्षके इस दुःखको देखो, अब मैं कहाँ जा सकता हूँ। स्त्री मर गयी, लड़के भूल गये, अब तो मेरा कहीं ठिकाना नहीं है।

बलदेव धरतीसे माथा फोड़ रो रोकर कहने लगा—मुझे कोड़े लगनेपर भी इतना कष्ट नहीं हुआ था जो अब तुम्हें देख कर हो रहा है, तुमने दया करके सुरगकी बात नहीं बतलायी, क्षमा करो, क्षमा करो, मैं अत्यन्त दुःखी हो रहा हूं।

यह कह बलदेव धाड़ मारकर रोने लगा, भागीरथके नेत्रोंसे भी जलकी धारा बह निकली। बोला—पूर्ण परमात्मा, तुमपर दया करें, कौन जाने कि मैं अच्छा हूँ अथवा तुम अच्छे हो। मैंने तुम्हें क्षमा किया।

अगले दिन बलदेवसिंहने स्वयं कर्मचारियोंके पास जाकर सारा हाल सुना करके अपना अपराध मान लिया, परन्तु भागीरथको छोड़ देनेका जब परवाना आया, तो उसका देहान्त हो चुका था।

———

२

राजपूत कैदी

१

धर्मसिंह नामी राजपूत राजपूतानेकी सेनामें एक अफसर था। एक दिन माताकी पत्री आयी कि मैं बूढ़ी होती जाती हूँ, मरनेसे पहले एक बेर तुम्हें देखनेकी अभिलाषा है, यहां आकर मुझे बिदाकर आशीर्वाद लो और क्रिया-कर्म करके आनन्द-पूर्वक नौकरीपर लौट जाना। तुम्हारे वास्ते मैंने एक कन्या खोज रखी है, वह बड़ी बुद्धिमती और धनवान है, यदि तुम्हें भावे तो उससे विवाह करके सुखपूर्वक घर ही पर रहना।

उसने सोचा ठीक ही है, माता दिनोंदिन दुर्बल होती जा रही है, संभव है कि फिर मैं उसके दर्शन न कर सकूँ। इस कारण चलना ही ठीक है। कन्या यदि सुन्दर हुई तो विवाह करनेमें क्या हानि है। वह सेनापतिसे छुट्टी लेकर साथियोंसे बिदा हो चलनेको प्रस्तुत हो गया।

उस समय राजपूतों और मरहठोंमें युद्ध हो रहा था। रास्ते चलनेमें सदैव भय रहता था। यदि कोई राजपूत अपना किला छोड़कर कुछ दूर बाहर निकल जाता था तो मरहठे उसे पकड़-कर कैद कर लेते थे। इस कारण यह प्रबन्ध किया गया था

कि सप्ताहमें दो बेर सिपाहियोंकी एक कम्पनी मुसाफिरोंको एक किलेसे दूसरे किलेतक पहुँचा आया करती थी।

गरमीकी रात थी। दिन निकलते ही किलेके नीचे असबाबकी गाड़ियाँ लदकर तैयार हो गयीं। सिपाही बाहर आ गये और सबने सड़ककी राह ली। धर्मसिंह घोड़ेपर सवार हो आगे चल रहा था। सोलह मीलका सफर था, गाड़ियाँ धीरे-धीरे चलती थीं। कभी सिपाही ठहर जाते थे। कभी गाड़ीका पहिया निकल जाता था। कभी कोई घोड़ा अड़ जाता था।

दोपहर ढल चुकी थी। रास्ता आधा भी नहीं कटा था। गरम रेत उड़ रही थी। धूप आगका काम कर रही थी। छाया कहीं नहीं थी। साफ मैदान था। सड़कपर न कोई वृक्ष न झाड़ी। धर्मसिंह आगे था और कभी-कभी इस कारण ठहर जाता था कि गाड़ियाँ आकर मिल जायं। मनमें विचारने लगा कि आगे क्यों न चलूं। घोड़ा तेज है, यदि मरहठे धावा करेंगे तो घोड़ा दौड़ाकर निकल जाऊँगा। यह सोच ही रहा था कि चरनसिंह बन्दूक हाथमें लिये उसके पास आया और बोला—आओ, आगे चलें, इस समय बड़ी गरमी है, मैं भूखके मारे व्याकुल हो रहा हूँ, सभी कपड़े पसीनेमें भींग रहे हैं। चरनसिंह भारी भरकस आदमी था। उसका मुँह लाल था।

धर्मसिंह—तुम्हारी बन्दूक भरी हुई है?

चरनसिंह—हाँ, भरी हुई है।

धर्मसिंह—अच्छा चलो, पर बिछुड़ न जाना।

वह दोनों चल दिये, बातें करते जाते थे, पर ध्यान दायें-बायें था। साफ मैदान होनेके कारण दृष्टि चारों ओर जा सकती थी। आगे चलकर सड़क दो पहाड़ियोंके बीचसे होकर निकली थी।

धर्मसिंह—उस पहाड़ीपर चढ़कर चारों ओर देख लेना उचित है। ऐसा न हो कि अचानक मरहठे कहींसे आकर हमें पकड़ लें।

चरनसिंह—अजी चले भी चलो।

धर्मसिंह—नहीं आप यहाँ ठहरिये, मैं जाकर देख आता हूँ।

धर्मसिंहने घोड़ा पहाड़ीकी ओर फेर दिया। घोड़ा शिकारी था, उसे पक्षीकी भाँति ले उड़ा। वह अभी पहाड़ीकी चोटीपर नहीं पहुँचा था कि सौ कदम आगे तीस मरहठे दिखाई पड़े। धर्मसिंह लौट पड़ा, परन्तु मरहठोंने उसे देख लिया और बन्दूकें संभालकर घोड़े दौड़ा उसपर लपके। धर्मसिंह बेतहाशा नीचे उतरा और चरनसिंहको पुकारकर कहने लगा—बन्दूक तैयार रखो और घोड़ेसे बोला—प्यारे, अब समय है। देखना ठोकर न खाना, नहीं तो झगड़ा समाप्त हो जायगा, एक बेर बन्दूक ले लेने दे, फिर मैं किसीके बांधनेका नहीं। उधर चरनसिंह मरहठोंको देखकर घोड़ेको चाबुक मार ऐसा भागा कि गरदेमें घोड़ेकी पूंछ ही पूंछ दिखाई दी और कुछ नहीं।

धर्मसिंहने देखा कि बचनेकी आशा नहीं है, खाली तलवारसे क्या बनेगा, वह किलेकी ओर भाग निकला, परन्तु छः मरहठे

उसपर टूट पड़े। धर्मसिंहका घोड़ा तेज था पर उनके घोड़े उससे भी तेज थे। तिसपर बात यह हुई कि वह सामनेसे आ रहे थे, धर्मसिंह चाहता था कि घोड़ेकी बाग मोड़कर उसे दूसरे रास्ते पर डाल दूँ, परन्तु घोड़ा इतना तेज जा रहा था कि रुक नहीं सका। सीधा मरहठोंसे जा टकराया। सबजे घोड़ेपर सवार बन्दूक उठाये लाल दाढ़ीवाला एक मरहठा दाँत निकालता हुआ उसकी ओर लपका, धर्मसिंहने कहा कि मैं इन दुष्टोंको भली-भाँति जानता हूँ, यदि वह मुझे जीता पकड़ लेंगे तो किसी कंदरा-में फेंककर कोड़े मारा करेंगे; इसलिये या तो आगे निकलो नहीं तो तलवारसे एक दोका ढेर कर दो। मरना अच्छा है, कैद होना ठीक नहीं। धर्मसिंह और मरहठोंमें दस हाथका ही अंतर रह गया था कि पीछेसे गोली चली। धर्मका घोड़ा घायल होकर गिरा और वह भी उसके साथ ही धरतीपर आ रहा।

धर्मसिंह उठना चाहता था कि दो मरहठे आकर उसकी मुश्कें कसने लगे, धर्मसिंहने धक्का देकर उन्हें दूर गिरा दिया परन्तु दूसरोंने आकर बन्दूकके कुन्दोंसे उसे मारना शुरू किया और वह घायल होकर फिर पृथ्वीपर गिर पड़ा। मरहठोंने उसकी मुश्कें कस लीं, कपड़े फाड़ दिये, रुपया-पैसा सब छीन लिया। धर्मसिंहने देखा कि घोड़ा जहाँ गिरा था वहीं पड़ा है, एक मरहठेने पास जाकर जीन उतारनी चाही। घोड़ेके सिरमें एक छेद हो गया था। उसमेंसे कोला रक्त बह रहा था। दो हाथ इधर-उधरकी धरती कीचड़ हो गयी थी। घोड़ा

चित्त पड़ा हवामें पैर पटक रहा था। मरहठेने गलेपर तलवार फेर दी, घोड़ा मर गया। उसने जीन उतार ली।

लाल दाढ़ीवाला मरहठा घोड़ेपर सवार हो गया। दूसरोंने धर्मसिंहको उसके पीछे बिठाकर उसे उसकी कमरसे बाँध दिया और जंगलका रास्ता लिया।

धर्मसिंहका बुरा हाल था, मस्तक फटा था, लोहू बहकर आँखोंपर जम गया था, मुश्कोंके मारे कन्धा फटा जाता था। वह हिल नहीं सकता था। उसका सिर बार-बार मरहठेकी पीठ से टकराता था। मरहठे पहाड़ियोंपर ऊपर नीचे होते हुए एक नदीपर पहुंचे, उसे पार करके एक घाटी मिली। धर्मसिंह यह जानना चाहता था कि वह किधर जा रहे हैं परन्तु उसके नेत्र बन्द थे, वह कुछ न देख सका।

शाम होने लगी, मरहठे दूसरी नदी पार करके एक पथरीली पहाड़ीपर चढ़ गये। यहाँ धुआं और कुत्तोंका भूंकना सुनायी दिया। मानों कोई बस्ती है। थोड़ी दूर चलकर गांव आ गया। मरहठोंने गांव छोड़ दिये, धर्मसिंहको एक ओर धरतीपर बिठा दिया। बालक आकर उसपर पत्थर फेंकने लगे। परन्तु एक मरहठेने उन्हें वहांसे भगा दिया। लाल दाढ़ीवालेने एक सेवकको बुलाया, वह दुबला-पतला आदमी फटा हुआ कुरता पहने था। मरहठेने उसे कुछ कहा, वह जाकर बेड़ी उठा लाया, मरहठोंने धर्मसिंहकी मुश्कें खोलकर उसके पांवमें बेड़ी डाल दी और उसे कोठरीमें कैद करके ताला लगा दिया।

२

उस रात धर्मसिंह जरा भी नहीं सोया, गरमीकी ऋतुमें रातें छोटी होती हैं, शीघ्र प्रातःकाल हो गया। दीवारमें एक झरोखा था उसीसे अन्दर उजाला आ रहा था, झरोखेके द्वारा धर्मसिंहने देखा कि पहाड़ीके नीचे एक सड़क उतरी है, दायीं ओर एक मरहठेका झोपड़ा है। उसके सामने दो पेड़ हैं, द्वारपर एक काला कुत्ता बैठा हुआ है। पास एक बकरी और उसके बच्चे पूंछ हिलाते फिर रहे हैं। एक स्त्री चमकीले रंगकी साड़ी पहने पानीकी गागर सिरपर धरे हुए एक बालककी उंगली पकड़े झोपड़ेकी ओर आ रही है। वह अन्दर गई कि लाल दाढ़ीवाला मरहठा रेशमी कपड़े पहने चांदीके मुट्ठेकी तलवार लटकाये हुए बाहर आया और सेवकसे कुछ बात करके चल दिया। फिर दो बालक घोड़ोंको पानी पिलाकर लौटते हुए दिखाई पड़े। इतनेमें कुछ बालक कोठरीके निकट आकर झरोखेमें टहनियां डालने लगे। प्यासके मारे धर्मसिंहका कण्ठ सूखा जाता था; उसने उन्हें पुकारा, परन्तु वे भाग गये।

इतनेमें किसीने कोठरीका ताला खोला। लाल दाढ़ीवाला मरहठा भीतर आया, उसके साथ एक नाटा पुरुष था, उसका सांवला रंग, निर्मल काले नेत्र, गोल कपोल, कतरी हुई महीन-दाढ़ी थी, वह प्रसन्नमुख हँसोड़ था। यह पुरुष लाल दाढ़ीवाले मरहठेसे बहुत बढ़िया वस्त्र पहने हुए था, सुनहरी गोट लगी हुई नीले रंगकी रेशमी अचकन थी। चांदीके म्यानवाली तलवार

कलाबत्तूका जूता था। लाल दाढ़ीवाला मरहठा कुछ बड़बड़ाता, धर्मसिंहको कनखियोंसे देखता हुआ द्वारपर खड़ा रहा। सांवला पुरुष आकर धर्मसिंहके पास बैठ गया और आंखें मटकाकर जल्दी जल्दी अपनी मातृभाषामें कहने लगा—बड़ा अच्छा राजपूत है।

धर्मसिंहने एक अक्षर भी न समझा, हां पानी मांगा। सांवला पुरुष हसा, तब धर्मने होंठ और हाथोंके संकेतसे जनाया कि मुझे प्यास लगी है, साँवले पुरुषने पुकारा—सुशीला!

एक छोटो-सी कन्या दौड़ती हुई भीतर आयी, तेरह वर्षकी अवस्था, सांवला रंग, दुबली-पतली, नेत्र काले और रसीले, सुन्दर बदन, नीली साड़ी, गलेमें स्वर्णहार पहने हुए, वह सांवले पुरुषकी पुत्री मालूम पड़ती थी। पिताकी आज्ञा पाकर वह पानी का एक लोटा ले आयी और धर्मको भौचक्की होकर देखने लगी कि वह कोई वनचर है।

फिर खाली लोटा लेकर सुशीलाने ऐसी छलांग मारी कि सांवला पुरुष हँस पड़ा। तब पिताके कहनेसे कुछ रोटी ले आई। इसके पीछे वह सब बाहर चले गये और कोठरीका ताला बन्द कर दिया गया।

कुछ देर पीछे एक सेवक आकर मराठीमें कुछ कहने लगा। धर्मने समझा कि कहीं चलनेको कहता है। वह उसके पीछे हो लिया, बेड़ीके कारण लंगड़ाकर चलता था। बाहर आकर धर्मने देखा कि दस घरोंका एक गांव है। एक घरके सामने तीन लड़के तीन घोड़े पकड़े खड़े हैं। सांवला पुरुष बाहर आया और

धर्मको भीतर आनेको कहा। धर्म भीतर चला गया, देखा कि मकान स्वच्छ है, गोबरी फिरी हुई है, सामनेकी दीवारके आगे गद्दा बिछा हुआ है। तकिये लगे हुए हैं। दायीं-बायीं दीवारोंपर परदे गिरे हुए हैं। उनपर चाँदीके कामकी बन्दूकें, पिस्तौल और तलवारें लटकी हुई हैं। गद्देपर पाँच मरहठे बैठे हैं। एक सांवला पुरुष, दूसरा लाल दाढ़ीवाला और तीन अतिथि और सब भोजन पा रहे हैं।

धर्मसिंह धरतीपर बैठ गया। भोजनसे निश्चिन्त होकर एक मरहठा बोला – देखो राजपूत, तुम्हें दयारामने पकड़ा है, (सांवले पुरुषकी ओर उंगली करके) और सम्पतरावके हाथ बेच डाला है, अतएव अब सम्पतराव तुम्हारा स्वामी है।

धर्मसिंह कुछ न बोला। सम्पतराव हँसने लगा।

वही मरहठा--वह यह कहता है कि तुम घरसे रुपये मंगवा लो, दण्ड दे देनेपर तुमको छोड़ दिया जायगा।

धर्मसिंह—कितने रुपये ?

मरहठा—तीन हजार।

धर्मसिंह—मैं तीन हजार रुपया नहीं दे सकता।

मरहठा—कितना दे सकते हो ?

धर्मसिंह--पांच सौ।

यह सुनकर मरहठे सिटपिटाये; सम्पतराव दयारामसे तकरार करने लगा और इतनी जल्दी जल्दी बोलने लगा कि उसके मुँहसे झाग निकल आया, दयारामने आँखें नीची कर लीं।

थोड़ी देरमें मरहठे शान्त हुए और फिर मोल-जोल करने लगे। एक मरहठेने कहा—पांच सौ रुपयेसे काम नहीं चल सकता। दयारामको सम्पतरावका रुपया देना है। पाँच सौ रुपयेमें तो सम्पतरावने तुम्हें मोल ही लिया है, तीन हजारसे कम नहीं हो सकता यदि रुपया न मंगाओगे तो तुम्हें कोड़े मारे जायंगे।

धर्मने सोचा कि जितना डरोगे, यह दुष्ट उतना ही डरायेंगे। वह खड़ा होकर बोला—इस भलेमानुससे कह दो कि यदि मुझे कोड़ोंका भय दिखावेगा तो मैं घरवालोंको कुछ नहीं लिखूँगा, मैं तुम चांडालोंसे नहीं डरता।

सम्पतराव—अच्छा, एक हजार मँगाओ।

धर्मसिंह—पांच सौसे एक कौड़ी ज्यादा नहीं। यदि तुम मुझे मार डालोगे तो इस पांच सौसे भी हाथ धो बैठोगे।

यह सुनकर मरहठे आपसमें सलाह करने लगे। इतनेमें एक सेवक एक मनुष्यको साथ लिये हुए भीतर आया। यह मनुष्य मोटा था, नंगे पैर बेड़ी पड़ी हुई। धर्मसिंह उसे देखकर चकित हो गया। वह पुरुष चरनसिंह था। सेवकने चरनसिंहको धर्मके पास बैठा दिया। वह एक दूसरेसे अपनी विथा कहने लगे। धर्मसिंहने अपना वृत्तान्त कह सुनाया। चरनसिंह बोला—मेरा घोड़ा अड़ गया, बन्दूक रंजक चाट गई और सम्पतरावने मुझे पकड़ लिया।

सम्पतराव—(फिर) अब तुम दोनों एक ही स्वामीके वशमें हो। जो पहले रुपया दे देगा वही छोड़ दिया जायगा। (धर्मसिंह की ओर देखकर) देखो, तुम कैसे क्रोधी हो और तुम्हारा साथी

कैसा सुशील है। उसने पांच हज़ार रुपये भेजनेको घर लिख दिया है, इस कारण उसका पालन-पोषण भली-भांति किया जायगा।

धर्मसिंह—मेरा साथी जो चाहे सो करे, वह धनवान है और मैं निर्धन हूँ। मैं तो पांच सौ रुपयेसे अधिक नहीं दे सकता, चाहे मारो चाहे छोड़ो।

मरहठे चुप हो गये। सम्पतराव झटसे कलमदान उठा लाया। कागज कलम दावात निकालकर धर्मकी पीठ ठोंक, उसे लिखनेको कहा। वह पांच सौ रुपए लेनेपर राजी हो गया था।

धर्मसिंह—जरा ठहरो, देखो हमारा पालन-पोषण भली-भांति करना, हमें एक साथ रखना, जिससे हमारा समय अच्छी तरह कट जाय। बेड़ियां भी निकाल दो।

सम्पतराव—जैसा चाहो वैसा भोजन करो। बेड़ियां नहीं निकाल सकता। शायद तुम भाग जाओ। हां, रातको निकाल दिया करूंगा।

धर्मसिंहने पत्र लिख दिया। परन्तु पता सब झूठ लिखा क्योंकि वह मनमें निश्चय कर चुका था कि कभी न कभी भाग जाऊंगा।

तब मरहठोंने चरनसिंह और धर्मसिंहको एक कोठरीमें पहुंचाकर एक लोटा पानी, कुछ बाजरेकी रोटियां देकर ऊपरसे ताला बन्द कर दिया।

३

धर्मसिंह और चरनसिंहको इस प्रकार रहते-रहते एक महीना

गुजर गया। सम्पतराव उनको देखकर सदैव हंसता रहता था, पर खानेको बाजरेकी अधपकी रोटीके सिवाय और कुछ न देता था। चरनसिंह उदास रहता और कुछ न करता। दिन भर कोठरीमें पड़ा सोया रहता और दिन गिनता रहता था कि रुपया कब आवे कि छूटकर अपने घर पहुँचूं। धर्म तो जानता था कि रुपया कहाँसे आना है। जो कुछ घर भेजता था माता उसीपर निर्वाह करती थी। वह बिचारी पाँच सौ रुपये कैसे भेज सकती है। ईश्वरकी दया होगी तो मैं भाग जाऊँगा। वह घातमें लगा हुआ था, कभी सीटी बजाता हुआ गाँवका चक्कर लगाता, कभी बैठकर मिट्टीके खिलौने और टोकरियाँ बनाता, वह हाथोंका चतुर था।

एक दिन उसने एक गुड़िया बनाकर छतपर रख दी। गाँव की स्त्रियाँ जब पानी भरने आयीं तो सुशीलाने उनको बुलाकर गुड़िया दिखलायी। वह सब हँसने लगीं। धर्मसिंहने गुड़िया सबके आगे कर दी, परन्तु किसीने नहीं ली। वह उसे बाहर रखकर कोठरीमें चला गया कि देखें क्या होता है, सुशीला गुड़िया उठाकर भाग गयी।

अगले दिन धर्मने देखा कि सुशीला द्वारपर बैठी गुड़ियाके साथ खेल रही है। एक बुढ़िया आयी। उसने गुड़िया छीनकर तोड़ डाली, सुशीला भाग गयी, धर्मसिंहने और गुड़िया बनाकर सुशीलाको दे दी। फल यह हुआ कि वह एक दिन छोटा-सा लोटा लायी, भूमिपर रखा और धर्मको दिखाकर भाग गई।

धमने देखा तो उसमें दूध। अब सुशोला नित्य अच्छे-अच्छे भोजन लाकर धर्मको देने लगी।

एक दिन आँधी आयी। एक घण्टा मूसलाधार मेंह बरसा, नदियाँ नाले भर गये। बाँधपर सात फुट पानी चढ़ आया, जहाँ तहाँ झरने झरने लगे, धार ऐसी प्रबल थी कि पत्थर लुढ़के जाते थे। गांवकी गलियोंमें नदियाँ बहने लगीं। आँधी थम जानेपर धर्मसिंहने सम्पतरावसे चाकू माँगकर एक पहिया बना, उसके दोनों ओर दो गुड़ियाँ बाँधकर पहियेको पानीमें छोड़ दिया, वह पानीके बलसे चलने लगा। सारा गांव इकट्ठा हो गया और गुड़ियोंको नाचते देखकर तालियां बजाने लगा। सम्पतरावके पास एक पुरानी बिगड़ी हुई घड़ी पड़ी थी। धर्मसिंहने उसे ठीक कर दिया। उसके पीछे और लोग अपने घण्टे, पिस्तौल, घड़ियाँ ला लाकर धर्मसे ठीक कराने लगे। इस कारण सम्पतरावने प्रसन्न होकर धर्मसिंहको एक चिमटी, एक बरमी और एक रेती दे दी।

एक दिन एक मरहठा रोगी हो गया। सब लोग धर्मसिंहके पास आकर दवा-दारू मांगने लगे। धर्म कुछ वैद्य तो था ही नहीं, पर उसने पानीमें रेता मिलाकर कुछ मन्त्र-सा पढ़कर कहा कि जाओ यह पानी रोगीको पिला दो। पानी पिलानेपर रोगी चंगा हो गया। धर्मके भाग अच्छे थे, अब बहुतसे मरहठे उसके मित्र बन गये। हाँ, कुछ लोग अब भी उसपर संदेह करते थे।

दयाराम धर्मसिंहसे चिढ़ता था। जब उसे देखता मुंह फेर

लेता। पहाड़ीके नीचे एक और बूढ़ा रहता था। मन्दिरमें आनेके समय धर्मसिंह उसे देखा करता था। यह बूढ़ा नाटा था। दाढ़ी, मूंछ बर्फकी भाँति श्वेत, मुंह लाल, उसमें झुर्रियां पड़ी हुईं, नाक नुकीली, नेत्र निर्दयी, दो दाढ़ोंके सिवाय सब दाँत टूटे हुए। वह लकड़ी टेकता, चारों ओर भेड़ियेकी तरह झाँकता हुआ मन्दिरमें जानेके समय जब कभी धर्मसिंहको देख पाता था तो जलकर राख हो जाता और मुँह फेर लेता था।

एक दिन धर्मसिंह बूढ़ेका घर देखनेके लिए पहाड़ीके नीचे उतरा। कुछ दूर जानेपर एक बगीचा मिला। चारों ओर पत्थरकी दीवार बनी हुई थी। बीचमें मेवेके वृक्ष लगे हुए थे। वृक्षोंमें एक झोपड़ा था। धर्मसिंह आगे बढ़कर देखना चाहता था कि उसकी बेड़ी खड़की। बूढ़ा चौंका। कमरसे पिस्तौल निकालकर उसने धर्मसिंहपर गोली चलाई, पर वह दीवारकी ओटमें हो गया। बूढ़ेको आकर सम्पतरावसे कहते सुना कि धर्मसिंह बड़ा दुष्ट है। सम्पतरावने धर्मको बुलाकर पूछा—तुम बूढ़ेके घर क्यों गये थे?

धर्मसिंह बोला—मैंने उसका कुछ नहीं बिगड़ा, मैं केवल यह देखने गया था कि वह बूढ़ा कहाँ रहता है। सम्पतने बूढ़ेको शांत करनेका बहुत यत्न किया पर वह बड़बड़ाता ही रहा। धर्मसिंह केवल इतनाही समझ सका कि बूढ़ा यह कह रहा है कि राजपूतोंका गांवमें रहना उचित नहीं, उन्हें मार देना चाहिये। बूढ़ा चल दिया, तो धर्मसिंहने सम्पतरावसे पूछा कि बूढ़ा कौन है?

सम्पतराव—यह बड़ा आदमी है, इसने बहुत राजपूत मारे हैं।

पहले यह बड़ा धनाढ्य था, इसके तीन स्त्रियां और आठ पुत्र थे। सब एक ही गाँवमें रहा करते थे। एक दिन राजपूतोंने धावा करके गाँव जला दिया। इसके सात पुत्र तो मर गये, आठवाँ कैद हो गया। यह बूढ़ा राजपूतोंके पास जाकर और उनके संग रहकर अपने पुत्रकी खोज लगाने लगा। अन्तमें उसे पाकर अपने हाथसे उसका बध करके भाग आया। फिर विरक्त होकर तीर्थयात्रा को चला गया। अब यह पहाड़ीके नीचे रहता है। यह बूढ़ा कहता था कि तुम्हें मार डालना उचित है, परन्तु मैं तुमको मार नहीं सकता, फिर रुपया कहांसे मिलेगा, इसके सिवाय मैं तुम्हें यहाँसे जाने भी न देता।

इस तरह धर्म यहाँ एक महीना रहा। दिनको वह इधर उधर फिरा करता था। कोई चीज बनाता, लेकिन रातको वह दीवारमें छेद किया करता। दीवार पत्थरकी थी। खोदना सहज नहीं था। लेकिन वह पत्थरोंको रेतीसे काटता था। यहाँ तक कि अन्तमें उसने अपने निकलने भरका एक छेद बना लिया। बस अब उसे यह चिंता हुई कि रास्ता मालूम हो जाय।

एक दिन सम्पतराव बाहर गया हुआ था। धर्मसिंह भोजन करके तीसरे पहर रास्ता देखनेकी इच्छासे सामनेवाली पहाड़ाकी ओर चल दिया। सम्पतराव बाहर जाते समय अपने पुत्रसे सदैव कह जाया करता था कि धर्मसिंहको आंखोंसे परे न होने देना। इस कारण बालक उसके पीछे दौड़ा और चिल्लाकर

कहने लगा—मत जाओ, मेरे पिताकी आज्ञा नहीं है, यदि तुम नहीं लौटोगे तो मैं गाँववालोंको बुला लूंगा ।

धर्मसिंह बालकको फुसलाने लगा—मैं दूर नहीं जाता, केवल उस पहाड़ीपर जानेकी इच्छा है । रोगियोंके वास्ते मुझे एक बूटी-की जरूरत है, तुम भी साथ चलो, बेड़ीके होते कैसे भागूंगा ? असम्भव है, आओ, कल मैं तुमको तीर कमान बना दूँगा ।

बालक मान गया । पहाड़ीकी चोटी कुछ दूर न थी, बेड़ीके कारण चलना कठिन था, परन्तु ज्यों-त्यों करके धर्मसिंह चोटी-पर पहुँचकर चारों ओर देखने लगा । दक्षिण दिशामें एक घाटी दिखायी दी । उसमें घोड़े चर रहे थे । घाटीके नीचे एक गांव था । उससे परे एक ऊँची पहाड़ी थी, फिर एक और पहाड़ी थी । इन पहाड़ियोंके बीचोंबीच जंगल था, उससे परे पहाड़ थे एकसे एक ऊंचा; पूर्व और पश्चिम दिशामें भी ऐसी ही पहाड़ियाँ थीं । कन्दराओंमेंसे जहाँ-तहाँ गाँवोंका धुआँ उठ रहा था, वास्तवमें यह मरहठोंका देश था । उत्तरकी ओर देखा, तो पैरों-तले एक नदी बह रही है और वही गाँव है जिसमें वह रहा करता था । गांवके चारों ओर बगीचे लगे हुए हैं और स्त्रियां नदीपर बैठी वस्त्र धो रही थीं और ऐसी जान पड़ती थीं मानो गुड़ियां बैठी हैं । गांवसे परे एक पहाड़ी थी परन्तु दक्षिण दिशा-वाली पहाड़ीसे नीची, उससे परे दो पहाड़ियां और थीं, उनपर घना जंगल था, इनके बीचमें मैदान था । मैदानके पार बहुत दूरपर कुछ धुआँ सा दिखायी दिया, अब धर्मसिंहको याद

आया कि किलेमें रहते हुए सूर्य कहांसे उदय होता और कहां अस्त हुआ करता था। उसे निश्चय हो गया कि धुएँका बादल हमारा किला है और उसी मैदानमेंसे जाना होगा।

अन्धेरा हो गया, मन्दिरका घंटा बजने लगा, पशु घर लौट आये, धर्मसिंह भी अपनी कोठरीमें आ गया। रात अन्धेरी थी, उसने उसी रात भागनेका विचार किया, पर दुर्भाग्यसे सन्ध्या-समय मरहठे घर लौट आये, आज उनके साथ एक मुर्दा था। मालूम होता था कि कोई मरहठा युद्धमें मारा गया है।

मरहठे उस शवको स्नान कराकर श्वेत वस्त्रमें लपेट, अर्थी बना 'राम नाम सत्त' कहते हुए गांवसे बाहर जाकर श्मशान भूमिमें दाह करके घर लौट आये। तीन दिन उपवास करनेके बाद चौथे दिन बाहर चले गये। सम्पतराव घरमें ही रहा। रात अन्धेरी थी, शुक्ल पक्ष अभी लगा ही था।

धर्मसिंहने सोचा कि आज रातको भागना ठीक है। चरन-सिंहसे कहा—भाई चरन, सुरंग तैयार है, चलो भाग चलें।

चरनसिंह—(भयभीत होकर) रास्ता तो जानते ही नहीं, भागेंगे कैसे ?

धर्मसिंह—रास्ता मैं जानता हूँ।

चरनसिंह—माना कि तुम रास्ता जानते हो, परन्तु एक रातमें किलेतक नहीं पहुँच सकते।

धर्मसिंह—यदि किलेतक नहीं पहुँच सकेंगे तो रास्तेमें कहीं जंगलमें छिपकर दिन काट लेंगे। देखो, मैंने भोजनका प्रबन्ध भी

कर लिया है। यहां पड़े-पड़े सड़नेसे क्या लाभ है ? यदि घरसे रुपया न आया तो क्या बनेगा ? राजपूतोंने एक मरहठा मार डाला है। इस कारण यह सब बहुत बिगड़े हुए हैं। भागना ही उचित है।

चरनसिंह—अच्छा चलो।

४

गांवमें जब सन्नाटा हो गया तो धर्मसिंह सुरंगसे बाहर निकल आया। पर चरनसिंहके पैरसे एक पत्थर गिर पड़ा। धमाका हुआ तो सम्पतरावका कुत्ता भूँका, लेकिन धर्मसिंहने उसे पहले ही हिला लिया था, उसका शब्द सुनकर वह चुप हो गया।

रात अन्धेरी थी। तारे निकले हुए थे, चारों ओर सन्नाटा था, घाटियां धुंधसे ढंकी हुई थीं। चलते-चलते रास्तेमें किसी छतपरसे एक बूढ़ेके राम नाम जपनेकी आवाज सुनाई दी। दोनों दबक गये। थोड़ी देरमें फिर सन्नाटा छा गया, तब वह आगे बढ़े।

धुंध बहुत छा गयी। धर्मसिंह तारोंकी ओर देखकर राह चलने लगा। ठडके कारण चलना सहज था; धर्मसिंह कूदता-फाँदता चला जाता था, चरनसिंह पीछे रहने लगा।

चरनसिंह—भाई धर्म, जरा ठहरो, जूतोंने मेरे पैरोंमें छाले डाल दिये।

धर्मसिंह—जूते निकालकर फेंक दो, नंगे पैर चलो।

चरनसिंहने जूते निकालकर फेंक दिये, पत्थरोंने उसके पांव घायल कर दिये, वह ठहर-ठहर कर चलने लगा।

धर्मसिंह—देखो चरन, पांव तो फिर भी चंगे हो जायगे, यदि मरहठोंने आ पकड़ा तो फिर समझ लो कि जान गयी।

चरनसिंह चुप होकर पीछे चलने लगा। थोड़ी दूर जानेपर धर्मसिंह बोला—हाय हाय, हम रास्ता भूल गये, हमें तो बायीं ओरकी पहाड़ीपर चढ़ना चाहिये था।

चरनसिंह—ठहरो, जरा दम लेने दो। मेरे पैर घायल हो गये हैं। देखो, लोहू बह रहा है।

धर्मसिंह—कुछ चिन्ता नहीं, ये सब ठीक हो जायंगे तुम चले चलो।

वह लौटकर बायीं ओरकी पहाड़ीपर चढ़ गये, आगे जंगल मिला। झाड़ियोंने उनके सब वस्त्र फाड़ डाले, इतनेमें कुछ आहट हुई, वह डर गये, समीप जानेपर मालूम हुआ कि बारहसिंगा भागा जा रहा है।

प्रातःकाल होने लगा, किला यहांसे अभी सात मीलपर था। मैदानमें पहुंचकर चरनसिंह बैठ गया और बोला—मेरे पांव हार गये, मैं अब नहीं चल सकता।

धर्मसिंह—(क्रोधसे)—अच्छा तो राम राम, मैं अकेला ही चलता हूँ।

चरनसिंह उठकर साथ हो लिया। तीन मील चलनेपर अचानक सामनेसे घोड़ेकी टाप सुनाई दी। वे भागकर जंगलमें घुस गये।

धर्मसिंहने देखा कि घोड़ेपर चढ़ा हुआ एक मरहठा जा रहा है, जब वह निकल गया तो धर्म बोला कि भगवानने बड़ी दया की कि उसने हमें नहीं देखा। चरन भाई, अब चलो।

चरनसिंह--मैं नहीं चल सकता, मुझमें ताकत नहीं।

चरनसिंह मोटा आदमी था, ठण्डके मारे उसके पैर अकड़ गये। धर्मसिंह उसे उठाने लगा, तो चरनसिंहने चीख मारी।

धर्मसिंह--हैं, हैं! यह क्या, मरहठा तो अभी पास ही जा रहा है, कहीं सुन न ले, अच्छा, यदि तुम नहीं चल सकते हो तो मेरी पीठपर बैठ जाओ।

धर्मसिंहने चरनसिंहको पीठपर बिठलाकर किलेकी राह ली।

धर्मसिंह--भाई चरनसिंह, सीधी तरह बैठे रहो, गला क्यों घोंटते हो।

५

अब उधरकी बात सुनिये। मरहठेने चरनसिंहका शब्द सुन लिया, उसने गोली चलायी, परन्तु खाली गयी। मरहठा दूसरे साथियोंको लेनेके लिये घोड़ा दौड़ाकर चल दिया।

धर्मसिंह--चरन, मालूम होता है कि उस दुष्टने तुम्हारी आवाज सुन ली, वह अपने साथियोंको बुलाने गया है। यदि उसके आनेसे पहले-पहल हम दूर नहीं निकल जायंगे तो समझो कि जान गयी। (मनमें) यह बोझा मैंने क्यों उठाया, यदि मैं अकेला होता तो अबतक कभीका निकल गया होता।

चरनसिंह—तुम अकेले चले जाओ, मेरे कारण प्राण क्यों

खोते हो ।

धर्मसिंह—कदापि नहीं, साथीको छोड़कर चल देना धर्मके विरुद्ध है ।

धर्मसिंह फिर चरनसिंहको कन्धेपर लादकर चलने लगा। आध मील चलनेपर एक झरना मिला, धर्मसिंह बहुत थक गया था, चरनसिंहको कंधेसे उतारकर विश्राम करने लगा। पानी पीना ही चाहता था कि पीछेसे घोड़ोंकी टाप सुनायी दी, दोनों भागकर झाड़ियोंमें छिप गये ।

मरहठे ठीक वहीं आकर ठहरे, जहां दोनों छिपे हुए थे। उन्होंने सूंघ लेनेको कुत्ता छोड़ा। फिर क्या था, दोनों पकड़े गये, मरहठोंने दोनोंको घोड़ोंपर लाद लिया। राहमें सम्पतराव मिल गया, अपने कैदियोंको पहचाना। तुरन्त उन्हें अपने साथ वाले घोड़ोंपर बैठाया और दिन निकलते-निकलते वह सब ग्राममें पहुंच गये ।

उसी समय बूढ़ा भी वहां आ गया, सब मरहठे विचार करने लगे कि क्या किया जावे, बूढ़ेने कहा कि कुछ मत करो, इन दोनोंका तुरन्त बध कर दो ।

सम्पतराव – मैंने तो उनपर रुपया लगाया है, मार कैसे डालूं।

बूढ़ा – राजपूतोंको पालना पाप है, वह तुम्हें सिवाय दुःखके और कुछ न देंगे, मारकर झगड़ा समाप्त करो ।

मरहठे इधर-उधर चले गये, संपतराव धर्मसिंहके पास आया और बोला—देखो धर्मसिंह, पन्द्रह दिनके अन्दर यदि रुपया न

आया, और तुमने फिर भागनेका साहस किया, तो मैं तुम्हें अवश्य ही मार डालूंगा, इसमें सन्देह नहीं; अब शीघ्र घर-वालोंको पत्र लिख डालो कि तुरन्त रुपया भेज दें।

दोनोंने पत्र लिख दिये। फिर वह पहलेकी भांति कैद कर दिये गये, परन्तु कोठरीमें नही, अबकी बेर ६ हाथ चौड़े गढ़ेमें बन्द किये गये।

६

अब उन्हें अत्यन्त कष्ट दिया जाने लगा। न बाहर जाने पाते थे न बेड़ियां निकाली जाती थीं। कुत्तोंके समान अधपकी रोटी और एक लोटेमें पानी पहुंचा दिया जाता था और कुछ नहीं। गढ़ा सीला था, उसमें अन्धेरा और अति दुर्गन्ध थी। चरनसिंहका सारा शरीर सूज गया, धर्मसिंह मन-मलीन तन-छीन रहने लगा, करे तो क्या करे।

धर्म एक दिन बहुत उदास बैठा था कि ऊपरसे रोटी गिरी, देखा तो सुशीला बैठी हुई है।

धर्मसिंहने सोचा क्या सुशीला इस काममें मेरी सहायता कर सकती है, अच्छा इसके लिये कुछ खिलौने बनाता हूँ, कल जब आवेगी तब इसे देकर फिर बात करूँगा।

दूसरे दिन सुशीला नहीं आयी। धर्मसिंहके कानमें घोड़ोंके टापोंकी आवाज आयी। कई आदमी घोड़ोंपर सवार उधरसे निकल गये। वह सब कुछ बातें करते जाते थे। धर्मसिंहको और

तो कुछ न समझमें आया, हां 'राजपूत' शब्द बार-बार सुनायी दिया। जिससे उसने अनुमान किया कि राजपूतोंकी सेना कहीं निकट आ पहुंची है ।

तीसरे दिन सुशीला फिर आयी और दो रोटियां गढ़ेमें फेंक दी, तब धर्म बोला—तू कल क्यों नहीं आयी, देख, मैंने तेरे वास्ते यह खिलौने बनाये हैं।

सुशीला—खिलौने लेकर क्या करूँगी, मुझे खिलौने नहीं चाहिये। उन्होंने तुम्हें मार डालनेका विचार कल पक्का कर लिया है, सब मरहठे इकट्ठे हुए थे; इसी कारण मैं कल नहीं आ सकी ।

धर्मसिंह—कौन मारना चाहता है ?

सुशीला—मेरा पिता। बूढ़ोंने यह सलाह दी है कि राजपूतों-की सेना निकट आ गयी है, तुम्हें मार डालना ही ठीक है। मुझे तो यह सुनकर रोना आता है।

धर्मसिंह—यदि तुम्हें दया आती है तो एक बांस ला दो।

सुशीला—यह नहीं हो सकता।

धर्मसिंह—सुशीला, दया कर, मैं हाथ जोड़कर कहता हूँ कि एक बांस ला दे।

सुशीला—बांस कैसे लाऊं, वह सब घरपर बैठे हैं, देख लेंगे। यह कहकर वह चली गयी।

सूर्य अस्त हो गया। तारे चमकने लगे। चाँद अभी नहीं निकला था, मंदिरका घण्टा बजा, बस फिर सन्नाटा हो गया।

धर्मसिंह इस विचारमें बैठा था कि सुशीला बाँस लावेगी अथवा नहीं।

अचानक ऊपरसे मिट्टी गिरने लगी। देखा तो सामनेकी दीवारमें बाँस लटक रहा है, धर्मसिंह बहुत प्रसन्न हुआ, उसने बाँसको नीचे खींच लिया।

बाहर आकाशमें तारे चमक रहे थे। गढ़ेके किनारेपर मुँह रखकर धीरेसे सुशीलाने कहा—धर्मसिंह सिवाय दोके और सब बाहर चले गये हैं।

धर्मसिंहने चरनसिंहसे कहा—भाई चरन, आओ एक बार फिर यत्न कर देखें, हिम्मत न हारो, चलो, मैं तुम्हारी सहायता करनेको तैयार हूं।

चरनसिंह—मुझमें तो करवट लेनेकी शक्ति नहीं, चलना तो एक ओर रहा। मैं नहीं भाग सकता।

धर्मसिंह-अच्छा राम राम, परन्तु मुझे निर्दयी मत समझना।

धर्मसिंह चरनसिंहसे गले मिला, बाँसका एक सिरा सुशीलाने पकड़ा, दूसरा सिरा धर्मसिंहने। इस भाँति वह बाहर निकल आया।

धर्मसिंह—सुशीला, तुम्हें भगवान कुशलसे रखें। मैं जन्म-भर तुम्हारा जस गाऊँगा। अच्छा, जीती रहो मुझे भूल मत जाना।

धर्मसिंहने थोड़ी दूर जाकर पत्थरोंसे बेड़ी तोड़नेका बहुत ही यत्न किया; पर वह न टूटी, वह उसे हाथमें उठाकर चलने

लगा, वह चाहता था कि चन्द्रमा उदय होनेसे पहले जंगलमें पहुँच जाय, परन्तु पहुँच न सका, चन्द्रमा निकल आया, चारों ओर उजाला हो गया, पर सौभाग्यसे जंगलमें पहुंचनेतक राहमें कोई नहीं मिला।

धर्मसिंह फिर बेड़ी तोड़ने लगा, पर सारा यत्न निष्फल हुआ वह थक गया, हाथ-पाँव घायल हो गये, विचारने लगा अब क्या करूँ, बस चले चलो, ठहरनेका काम नहीं, यदि एक बेर बैठ गया तो फिर उठना कठिन हो जायगा, माना कि मैं प्रातःकालसे पहले किलेमें नहीं पहुँच सकता, न सही, दिनभर जंगलमें काट दूँगा, रात आनेपर फिर चल दूँगा। सहसा पाससे दो मरहठे निकले, वह झट झाड़ीमें छिप गया।

चाँद फीका पड़ गया, सबेरा होने लगा, जंगल पीछे छूट गया, साफ मैदान आ गया, किला दिखाई देने लगा—बायीं ओर देखनेपर मालूम हुआ कि थोड़ी दूरपर कुछ राजपूत सिपाही खड़े हैं। धर्मसिंह मग्न हो गया और बोला-अब क्या है, परन्तु ऐसा न हो कि मरहठे पीछेसे आ पकड़ें, मैं सिपाहियोंतक न पहुँच सकूं, इस कारण जितना भागा जाय भागो।

इतनेमें बायीं ओर दो सौ कदमकी दूरीपर कुछ मरहठे दिखायी दिये। धर्म निराश हो गया, चिल्ला उठा—भाइयो, दौड़ो, दौड़ो, मुझे बचाओ, बचाओ!

राजपूत सिपाहियोंने धर्मसिंहको पुकार सुन ली। मरहठे समीप थे, सिपाही दूर थे, वह दौड़े, धर्मसिंह भी बेड़ी उठाकर

भाइयो, भाइयो कहता हुआ ऐसा भागा कि झट सिपाहियोंसे जा मिला, मरहठे डरकर भाग गये।

राजपूत पूछने लगे कि तुम कौन हो और कहाँसे आये हो, परन्तु धर्मसिंह घबड़ाया हुआ भाइयो, भाइयो पुकारता चला जाता था। निकट आनेपर सिपाहियोंने उसे पहचान लिया। धर्मसिंह सारा वृत्तान्त कहकर बोला—भाइयो, इस तरह मैं घर गया और विवाह किया, विधाताकी यही लीला थी।

एक महीना पीछे पांच हजार मुद्रा देकर चरनसिंह छूटकर किलेमें आया। वह उस समय अधमुएके समान हो रहा था।

३

ध्रुवनिवासी रीछका शिकार

हम एक दिन रीछके शिकारको निकले, मेरे साथीने एक रीछपर गोली चलाई, वह गहरी नहीं लगी, रीछ भाग गया, बर्फपर लोहूके चिह्न बाकी रह गये।

हम एकत्र होकर यह विचार करने लगे कि तुरन्त पीछा करना चाहिये या दो-तीन दिन ठहरकर उसके पीछे जाना चाहिये। किसानोंसे पूछनेपर एक बूढ़ा बोला—तुरन्त पीछा करना ठीक नहीं, रीछको टिक जाने दो, पांच दिन पीछे शायद वह मिल जाय, अभी पीछा करनेपर तो वह डर कर भाग जायगा।

इसपर एक दूसरा जवान बोला—नहीं नहीं, हम आज ही रीछको मार सकते हैं वह बहुत मोटा है, दूर नहीं जा सकता, सूर्य अस्त होनेसे पहले कहीं न कहीं टिक जायगा, नहीं तो मैं बर्फपर चलनेवाले जूते पहनकर उसे ढूंढ़ निकालूँगा।

मेरा साथी तुरन्त रीछका पीछा करना नहीं चाहता था पर मैंने कहा—झगड़ा करनेसे क्या मतलब, आप सब गांवको जाइये। मैं और दुर्गा (मेरे सेवकका नाम) रीछका पीछा करते हैं। मिल गया तो वाह वाह, दिन भर और करना ही क्या है।

और सब तो गांवको चले गये, मैं और दुर्गा जंगलमें रह गया। अब हम बन्दूकें सम्भाल कर कमर कस रीछके पीछे हो लिये

रीछका निशान दूरसे दिखाई तड़ता था। प्रतीत होता था कि भागते समय कभी तो वह पेटतक बर्फमें धंस गया है, कभी-बर्फ चीरकर निकला है। पहले पहल तो हम उसके खोजके पीछे बड़े बडे वृक्षोंके नीचे चलते रहे, परन्तु घना जंगल आ जानेपर दुर्गा बोला—अब यह राह छोड़ देनी चाहिये, वह यहीं कहीं बैठ गया है, धीरे-धीरे चलो, ऐसा न हो कि डरकर भाग जाय।

हम राह छोड़कर बायीं ओर लौट पड़े। पांच सौ कदम जानेपर सामने वही चिह्न फिर दिखायी दिये। उसके पीछे चलतेचलते एक सड़कपर जा निकले। चिह्नोंसे जान पड़ता था कि रीछ गांवकी ओर गया है।

दुर्गा—महाराज, सड़कपर खोज लगानेसे अब कोई लाभ

नहीं, वह गाँवकी ओर नहीं गया, आगे चलकर चिह्नोंसे पता लग जायगा कि वह किस ओर गया है।

एक मील आगे जानेपर चिह्नोंसे ऐसा प्रकट होता था कि रीछ सड़कसे जंगलकी ओर नहीं, जंगलसे सड़ककी ओर आया है। उसकी उंगलियाँ सड़ककी तरफ थीं। मैंने पूछा कि दुर्गा क्या यह कोई दूसरा रीछ है?

दुर्गा—नहीं, यह वही रीछ है, उसने धोखा दिया है। आगे चलकर दुर्गाका कहना सत्य निकला, क्योंकि रीछ दस कदम सड़ककी ओर आकर फिर जंगलकी ओर लौट गया था।

दुर्गा—अब हम उसे अवश्य मार लेंगे। आगे दलदल है, वह वहीं जाकर बैठ गया है, चलिये।

हम दोनों आगे बढ़े, कभी तो मैं किसी झाड़ीमें फँस जाता था, बर्फपर चलनेका अभ्यास न होनेके कारण कभी जूता पैरसे निकल जाता था, पसीनेसे भीगकर मैंने कोट कन्धेपर डाल लिया, लेकिन दुर्गा बड़ी फुर्तीसे चला जा रहा था। दो मील चलकर हम झीलके उस पार पहुँच गये।

दुर्गा—देखो, सुनसान झाड़ीपर चिड़ियाँ बोल रही हैं, रीछ वहीं है। चिड़ियाँ रीछकी महँक पा गई हैं।

हम वहाँसे हटकर आध मील चले होंगे कि फिर रीछका खुर दिखाई दिया। मुझे इतना पसीना आ गया कि मैंने साफा भी उतार दिया। दुर्गाको भी पसीना आ गया था।

दुर्गा—स्वामी, बहुत दौड़-धूप की, अब जरा विश्राम कर

लीजिये।

सन्ध्या हो चली थी, हम जूते उतारकर धरतीपर बैठ गये और भोजन करने लगे, भूखके मारे रोटी ऐसी अच्छी लगी कि मैं कुछ कह नहीं सकता, मैंने दुर्गासे पूछा कि गांव कितनी दूर है?

दुर्गा—कोई आठ मील होगा, हम आज ही वहां पहुंच जायँगे। आप कोट पहन लें, ऐसा न हो, सरदी लग जाय।

दुर्गाने बर्फ ठीक करके उसपर कुछ झाड़ियां बिछाकर मेरे वास्ते बिछौना तैयार कर दिया। मैं ऐसा बेसुध सोया कि इसका ध्यान ही न रहा कि कहां हूँ। जागकर देखता हूँ कि एक बड़ा भारी दीवानखाना बना हुआ है। उसमें बहुतसे उजले चमकते हुए खम्भे लगे हुए हैं, उसकी छत तवेकी तरह काली है, उसमें रंगदार अनन्त दीपक जगमगा रहे हैं। मैं चकित हो गया, परन्तु तुरन्त मुझे याद आई कि यह तो जंगल है, यहां दीवानखाना कहां। असलमें श्वेत खम्भे तो बर्फसे ढके हुए वृक्ष थे, रंगदार दीपक उनकी पत्तियोंमेंसे चमकते हुए तारे थे।

बर्फ गिर रही थी, जंगलमें सन्नाटा था। अचानक हमें किसी जानवरके दौड़नेकी आहट मिली। हम समझे कि रीछ है, परन्तु पास जानेपर मालूम हुआ कि जंगली खरहे हैं। हम गांवकी ओर चल दिये। बर्फने सारा जंगल श्वेत बना रखा था, वृक्षोंकी शाखाओंमेंसे तारे चमकते और हमारा पीछा करते ऐसे दिखाई देते थे कि मानों सारा आकाश चलायमान हो रहा है।

जब हम गांवमें पहुंचे तो मेरा साथी सो गया था। मैंने उसे

जगाकर सारा वृत्तान्त कह सुनाया और जमींदारसे अगले दिन के वास्ते शिकारी एकत्र करनेको कह, भोजन करके सो रहे। मैं इतना थक गया था कि यदि मेरा साथी मुझे न जगाता तो मैं दोपहरतक सोया पड़ा रहता। जागकर मैंने देखा कि साथी वस्त्र पहने तैयार है और अपनी बन्दूक ठीक कर रहा है।

मैं—दुर्गा कहाँ है?

साथी—उसे गये देर हुई, वह कलके निशानपर शिकारियों को इकट्ठा करने गया है।

हम गाँवके बाहर निकले, धुंधके मारे सूर्य दिखाई न पड़ता था। दो मील चलकर धुआँ दिखाई पड़ा। समीप जाकर देखा कि शिकारी आलू भून रहे हैं और आपसमें बातें करते जाते हैं। दुर्गा भी वहीं था। हमारे पहुँचनेपर वह सब उठ खड़े हुए। रीछको घेरनेके लिये दुर्गा उन सबको लेकर जंगलकी ओर चल दिया। हम भी उनके पीछे हो लिये, आध मील चलनेपर दुर्गाने कहा कि अब कहीं बैठ जाना उचित है—मेरे बायीं ओर ऊंचे-ऊंचे वृक्ष थे। सामने मनुष्यके बराबर ऊंची बर्फसे ढकी हुई घनी झाड़ियाँ थीं। इनके बीचसे होकर एक पगडंडी सीधी वहाँ पहुँचती थी जहाँ मैं खड़ा हुआ था। दायीं ओर साफ मैदान था, वहां मेरा साथी बैठ गया।

मैंने अपनी दोनों बन्दूकोंको भलीभाँति देखकर विचारा कि कहाँ खड़ा होना चाहिये, तीन कदम पीछे हटकर एक ऊंचा वृक्ष था। मैंने एक बन्दूक भरकर तो उसके सहारे खड़ी कर दी,

दूसरी घोड़ा चढ़ाकर हाथमें ले ली। म्यानसे तलवार निकाल कर देख ही रहा था कि अचानक जंगलमेंसे दुर्गाका शब्द सुनाई दिया "वह उठा, वह उठा—" इसपर सब शिकारी बोल उठे, सारा जंगल गूँज पड़ा। मैं घातमें था कि रीछ दिखाई पड़ा और मैंने तुरन्त गोली छोड़ी।

अकस्मात् बायीं ओर बर्फपर कोई काली चीज दिखाई दी; मैंने गोली छोड़ी, परन्तु खाली गई और रीछ भाग गया।

मुझे बड़ा शोक हुआ कि अब रीछ इधर नहीं आयेगा। शायद साथीके हाथ लग जाय। मैंने फिर बन्दूक भर ली, इतनेमें एक शिकारीने शोर मचाया कि "यह है, यह है, यहां आओ।"

मैंने देखा कि दुर्गा भागकर मेरे साथीके पास आया और रीछको उँगलीसे दिखाने लगा, साथीने निशाना लगाया। मैंने समझा उसने मारा, परन्तु वह गोली भी खाली गई, क्योंकि यदि रीछ गिर जाता तो साथी अवश्य उसके पीछे दौड़ता। वह दौड़ा नहीं, इससे मैंने जाना कि रीछ मरा नहीं।

हैं! यह क्या आपत्ति आई, देखता हूँ कि रीछ डरा हुआ अन्धाधुन्ध भागा मेरी ओर आ रहा है। मैंने गोली मारी, परन्तु खाली गई। दूसरी छोड़ी, वह लगी तो सही परन्तु रीछ गिरा नहीं, मैं दूसरी बन्दूक उठाना ही चाहता था कि उसने झपटकर मुझे दबा लिया और लगा मेरा मुंह नोचने। जो कष्ट मुझे उस समय हो रहा था मैं उसे वर्णन नहीं कर सकता। ऐसा प्रतीत होता था कि मानों कोई छुरियोंसे मेरा मुँह छील रहा है।

इतनेमें दुर्गा और साथी रीछको मेरे ऊपर बैठा देखकर मेरी सहायताको दौड़े। रीछ उन्हें देख डरकर भाग गया, सारांश यह कि मैं घायल हो गया पर रीछ हाथ न आया और हमें खाली हाथ गाँवको लौटना पड़ा।

एक मास पीछे हम फिर उस रीछको मारनेके लिये गये, मैं फिर भी उसे न मार सका। उसे दुर्गाने मारा, वह बड़ा भारी रीछ था, उसकी खाल अबतक मेरे कमरेमें बिछी हुई है।*

४

मनुष्यका जीवन-आधार क्या चीज है ?

१

माधो नामी एक चमार जिसके न घर था न धरती; अपनी स्त्री और बच्चों सहित एक झोंपड़ेमें रहकर मेहनत-मजूरी द्वारा पेट पालता था। मजूरी कम थी, अन्न महंगा था, जो कमाता था, खा जाता था। सारा घर एक ही कम्बल ओढ़कर जाड़ोंके दिन काटता था और वह कम्बल भी फटकर तार तार रह गया था। पूरे एक वर्षसे वह इस विचारमें लगा हुआ था कि दूसरा वस्त्र मोल ले। पेट मार मारकर उसने तीन रुपये जमा किये थे, और पांच रुपये पासके गांववालोंपर आते थे।

* इस मृगयाके पीछे महात्मा टाल्स्टायने दयाभावसे मांस खाना छोड़ दिया था

एक दिन उसने यह विचारा कि पांच रुपये गांववालोंसे उगाहकर वस्त्र ले आऊं। वह घरसे चला, गांवमें पहुंचकर वह पहले एक किसानके घर गया। किसान तो घरमें नहीं था, उसकी स्त्रीने कहा कि इस समय रुपया मौजूद नहीं, फिर दे दूंगी। फिर वह दूसरेके घर पहुंचा, वहाँसे भी रुपया न मिला। फिर वह बनियेकी दूकानपर जाकर वस्त्र उधार मांगने लगा। बनिया बोला—हम ऐसे कंगालोंको उधार नहीं देते, कौन पीछे-पीछे फिरे, जाओ अपनी राह लो।

वह निराश होकर घरको लौट पड़ा। राहमें सोचने लगा। कितने अचरजकी बात है कि मैं सारे दिन काम करता हूँ तिसपर भी पेट नहीं भरता, चलते समय स्त्रीने कहा था कि वस्त्र अवश्य लाना, अब क्या करूं, कोई उधार भी तो नहीं देता। किसानों-ने कह दिया अभी हाथ खाली है, फिर ले लेना। तुम्हारा तो हाथ खाली है, पर मेरा काम कैसे चले। तुम्हारे पास घर, पशु सब कुछ हैं, मेरे पास तो यह शरीर ही शरीर है। तुम्हारे पास अनाजके कोठे भरे पड़े हैं, मुझे एक-एक दाना मोल लेना पड़ता है। सात दिनमें तीन रुपये तो केवल रोटीमें खर्च हो जाते हैं, क्या करूं, कहां जाऊं। हे भगवान! सोचता हुआ मन्दिरके पास पहुंचकर देखता क्या है कि धरतीपर कोई श्वेत वस्तु पड़ी है। अन्धेरा हो गया था, साफ न दिखाई देता था। पहले तो उसने समझा कि बैल है, समीप जानेपर मालूम हुआ कि एक मनुष्य नंगा पड़ा है। माधोने समझा कि किसीने इसके

वस्त्र छीन लिये हैं, मुझसे क्या मतलब, ऐसा न हो इस झगड़ेमें पड़नेसे मुझपर कोई आपत्ति खड़ी हो जाय, चल दो।

थोड़ी दूर गया था कि उसके मनमें पछतावा हुआ। मैं कितना निर्दयी हूँ। कहीं यह बेचारा भूखों न मर रहा हो। कितने शर्मकी बात है कि मैं उसे इस दशामें छोड़ चला जाता हूँ। वह लौट पड़ा और उस आदमीके पास जाकर खड़ा हो गया।

२

पास पहुँचकर माधोने देखा कि वह मनुष्य भला चंगा जवान है। केवल शीतसे दुःखी हो रहा है। उस मनुष्यका माधो-को आँख भरकर देखना था कि माधोको उसपर दया आ गई। अपना कोट उतारकर बोला—यह समय बातें करनेका नहीं, यह कोट पहन लो और मेरे संग चलो।

मनुष्यका शरीर स्वच्छ, मुख दयालु, हाथ-पांव सुडौल थे, वह प्रसन्नबदन था। माधोने उसे कोट पहना दिया और बोला—मित्र अब चलो, बातें पीछे होती रहेंगी।

मनुष्यने प्रेम भावसे माधोको देखा और कुछ न बोला।

माधो—तुम बोलते क्यों नहीं, यहां ठंड है, घरको चलो, यदि तुम चल नहीं सकते तो यह लो लकड़ी, इसके सहारे चलो।

मनुष्य माधोके पीछे-पीछे हो लिया।

माधो—तुम कहाँ रहते हो ?

मनुष्य—मैं यहाँका रहनेवाला नहीं।

माधो—मैंने भी यही समझा था, क्योंकि यहाँ तो मैं सबको जानता हूं, तुम मन्दिरके पास कैसे आ गये ?

मनुष्य—यह मैं नहीं बतला सकता।

माधो—क्या तुमको किसीने दुःख दिया है ?

मनुष्य—मुझे किसीने दुःख नहीं दिया, अपने कर्मोंका भोग है, परमात्माने मुझे दण्ड दिया है।

माधो—निस्सन्देह परमेश्वर सबका स्वामी है, परन्तु खानेको अन्न और रहनेको घर तो चाहिये, तुम अब कहाँ जाना चाहते हो ?

मनुष्य—जहाँ ईश्वर ले जाय।

माधो चकित हो गया। मनुष्यकी बातचीत बड़ी प्रिय थी, वह ठग प्रतीत न होता था, पर अपना पता कुछ नहीं बताता था। माधोने सोचा अवश्य इसपर कोई बड़ी विपत्ति पड़ी है। बोला—भाई घर चलकर जरा आराम करो फिर देखा जायगा।

दोनों वहांसे चल दिये, राहमें माधो विचार करने लगा, मैं तो वस्त्र लेने आया था, वहाँ अपना भी दे बैठा, एक नंगा मनुष्य साथ है, क्या यह सब बातें देखकर मालती प्रसन्न होगी, कदापि नहीं, मगर चिन्ता ही क्या है दया करना मनुष्यका परम धर्म है।

३

उधर माधोकी स्त्री मालती उस दिन जल्दी-जल्दी लकड़ी काटकर पानी लाई, फिर भोजन बनाया बच्चोंको खिलाया, आप खाया, पतिके लिये भोजन अलग रखकर कुरतेमें टांका लगाती

हुई यह विचार करने लगी। ऐसा न हो बनिया मेरे पतिको ठग ले, वह बड़ा सीधा है, किसीसे छल नहीं करता, बालक भी उसे फंदेमें फँसा सकता है। आठ रुपये बहुत होते हैं, इतने रुपयेमें तो बड़े अच्छे वस्त्र मिल सकते हैं, पिछली सरदी किस कष्टसे कटी। जाते समय उसे देर हो गयी थी, परन्तु क्या हुआ, अबतक उसे आ जाना चाहिये था।

इतनेमें आहट हुई। मालती बाहर आयी, देखा कि माधो है। उसके साथ नंगे सिर एक और मनुष्य है। माधोका कोट उसके गलेमें पड़ा है। पतिके हाथोंमें कोई गठरी नहीं है, वह शर्मसे सिर झुकाये खड़ा है। यह देखकर मालतीका मन निराशासे व्याकुल हो गया। उसने समझा कोई ठग है, त्यौरी चढ़ाकर खड़ी हो देखने लगी कि वह क्या करता है।

माधो बोला—यदि भोजन तैयार हो तो ले आओ।

मालती जलकर राख हो गयी; कुछ न बोली, चुपचाप वहीं खड़ी रही; माधो ताड़ गया कि स्त्री क्रोधाग्निमें जल रही है।

माधो—क्या भोजन नहीं बनाया ?

मालती—(क्रोधसे:) हाँ, बनाया है, परन्तु तुम्हारे वास्ते नहीं, तुम तो वस्त्र मोल लेने गये थे, यह क्या किया, अपना कोट भी दूसरेको दे दिया ? इस ठगको कहाँसे लाये ? यहाँ कोई सदावरत थोड़े ही चलता है।

माधो—मालती, बस बस, बिना सोचे-समझे किसीको बुरा कहना उचित नहीं, पहले पूछ तो लो कि यह कैसा........

मालती— पहले यह बताओ कि रुपये कहाँ फेंके ?

माधो—यह लो अपने तीन रुपये, गाँववालोंने कुछ नहीं दिया।

मालती—(रुपये लेकर) मेरे पास संसार भरके नंगे-लुचों-के लिये भोजन नहीं है।

माधो - फिर वही बात, पहले इससे पूछ तो लो कि क्या कहता है।

मालती—बस बस पूछ चुकी, मैं तो तुमसे विवाह ही करना नहीं चाहती थी, तुम तो घरखोऊ हो।

माधोने बहुतेरा समझाया, वह एक न मानी, दस वर्षके पुराने झगड़े याद करके बकवाद करने लगी, यहाँतक कि क्रोधमें आकर माधोकी जाकट फाड़ डाली और घरसे बाहर जाने लगी। पर रास्तेमें रुक गयी और पतिसे बोली—अगर यह भलामानस होता तो नंगा न होता, भला तुम्हारी भेंट उससे कहाँ हुई ?

माधो--बस यही तो मैं तुमको बतलाना चाहता हूँ, यह गांव-के बाहर मन्दिरके पास नंगा बैठा था। भला विचार तो कर, यह ऋतु बाहर नंगा बैठने की है! दैवगतिसे मैं वहाँ जा पहुँचा, नहीं तो क्या जाने वह मरता या जीता। हम क्या जानते हैं कि उसपर क्या विपत्ति पड़ी है, मैं अपना कोट पहनाकर उसे यहाँ ले आया हूँ। देख, क्रोध मत कर; क्रोध पापका मूल है; एक दिन हम सबको यह संसार छोड़ना है।

मालती कुछ कहना चाहती थी पर मनुष्यको देखकर चुप रह गई। वह आँखें मूंदे, घुटनोंपर हाथ रखे, मौन धारण किये स्थिर बैठा था।

माधो—प्यारी! क्या तुममें ईश्वरका प्रेम नहीं।

यह वचन सुन, मनुष्यको देखकर मालतीका चित्त तुरन्त पिघल गया, झटसे उठी और भोजन लाकर उसके सामने रख दिया और बोली—खाइये!

मालतीकी यह दशा देखकर मनुष्यका मुखारविन्द खिल गया और वह हँसा। भोजन कर लेनेपर मालती बोली—तुम कहाँसे आये हो ?

मनुष्य—मैं यहांका रहनेवाला नहीं।

मालती—तुम मन्दिरके पास किस प्रकार पहुँचे ?

मनुष्य—मैं कुछ नहीं बता सकता।

मालती—क्या किसीने तुम्हारा माल चुरा लिया ?

मनुष्य—किसीने नहीं। परमेश्वरने यह दण्ड दिया है ?

मालती—क्या तुम वहाँ नंगे बैठे थे।

मनुष्य— हाँ, शीतके मारे ठिठुर रहा था, माधोने देखकर दया की; कोट पहनाकर मुझे यहाँ ले आया; तुमने तरस खाकर मुझे भोजन खिला दिया; भगवान तुम दोनोंका भला करे।

मालतीने एक कुरता और दे दिया। रातको जब वह अपने पतिके पास जाकर लेटी तो यह बातें करने लगी।

मालती—सुनते हो।

माधो—हाँ।

मालती—अन्न तो चुक गया, कल भोजन कहाँसे करेंगे, शायद पड़ोसिनसे माँगना पड़े।

माधो—जियेंगे तो अन्न भी कहींसे मिल ही जायेगा।

मालती—वह मनुष्य अच्छा आदमी मालूम होता है। अपना पता क्यों नहीं बतलाता ?

माधो—क्या जानूँ। कोई कारण होगा।

मालती—हम औरोंको देते हैं पर हमको कोई क्यों नहीं देता ?

माधोने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया, मुंह फेरकर सो गया।

४

प्रातःकाल हो गया। माधो जागा, बच्चे अभी सोये पड़े थे, मालती पड़ोसिनसे अन्न माँगने गयी हुई थी, अजनवी मनुष्य भूमिपर बैठा आकाशकी ओर देख रहा था, परन्तु उसका मुख अब प्रसन्न था।

माधो—मित्र, पेट रोटी मांगता है, शरीर वस्त्र, अतएव काम करना आवश्यक है, तुम कोई काम जानते हो।

मनुष्य—मैं कोई काम नहीं जानता।

माधो—अभ्यास बड़ी वस्तु है, मनुष्य यदि चाहे तो सब कुछ सीख सकता है।

मनुष्य—मैं सीखनेको तैयार हूँ, आप सिखा दीजिये।

माधो—तुम्हारा नाम क्या है ?

मनुष्य—मैकू।

माधो—भाई मैकू, यदि तुम अपना हाल सुनाना नहीं चाहते तो न सुनाओ; परन्तु कुछ काम अवश्य करो, जूते बनाना सीख लो और यहीं रहो।

मैकू—बहुत अच्छा।

अब माधोने मैकूको सूत बाँटना, उसपर मोम चढ़ाना, जूते सीना आदि काम सिखाना शुरू कर दिया। मैकू तीन दिनमें ही ऐसे जूते बनाने लगा मानों सदासे चमारका ही काम करता रहा हो। वह घरसे बाहर नहीं निकलता था, बोलता भी बहुत ही कम था। अबतक वह केवल एक बेर उस समय हँसा था जब मालतीने उसे भोजन खिलाया था फिर वह कभी नहीं हँसा।

५

धीरे-धीरे एक वर्ष बीत गया। चारों ओर धूम मच गयी कि माधोका नौकर मैकू जैसे पक्के मजबूत जूते बनाता है, दूसरा कोई नहीं बना सकता। माधोके पास बहुत काम आने लगा और उसकी आमदनी बहुत बढ़ गयी।

एक दिन माधो और मैकू बैठे काम कर रहे थे कि एक गाड़ी आयी, उसमेंसे एक धनी पुरुष उतरकर झोपड़ेके पास आया। मालतीने झटसे किवाड़ खोल दिये, वह भीतर आ गया।

माधोने उठकर प्रणाम किया, उसने ऐसा सुन्दर पुरुष

पहले कभी नहीं देखा था। वह स्वयं दुबला था, मैकू और भी दुबला और मालती तो हड्डियोंका पिंजरा थी, यह पुरुष तो किसी दूसरे ही लोकका बासी जान पड़ता था, लाल मुंह चौड़ी छाती, तनी हुई गर्दन। मानो सारा शरीर लोहेमें ढला हुआ है।

पुरुष—तुममें उस्ताद कौन है।

माधो—हुजूर, मैं।

पुरुष—(चमड़ा दिखाकर) तुम यह चमड़ा देखते हो।

माधो—हाँ हुजूर।

पुरुष—तुम जानते हो कि यह किस जातका चमड़ा है।

माधो—महाराज, यह चमड़ा बहुत अच्छा है।

पुरुष—अच्छा, मूर्ख कहींका, तुमने शायद ऐसा चमड़ा कभी नहीं देखा होगा। यह जर्मन देशका चमड़ा है, इसका मोल बीस रुपये हैं।

माधो—(भयसे) भला महाराज ऐसा चमड़ा मैं कहाँसे देख सकता था।

पुरुष—अच्छा, तुम इसका बूट बना सकते हो ?

माधो—हाँ हुजूर बना सकता हूँ।

पुरुष—हाँ, हुजूरकी बात नहीं, समझ लो कि चमड़ा कैसा है और बनवानेवाला कौन है, यदि सालभरके अन्दर कोई टाँका उखड़ गया अथवा जूतेका रूप बिगड़ गया तो तुझे बन्दीखाने जाना पड़ेगा, नहीं तो दस रुपये मजूरी मिलेगी।

माधोने मैकूकी ओर कनखियोंसे देखकर धीरेसे पूछा कि काम ले लूँ ? उसने कहा–हाँ ले लो। माधो नाप लेने लगा।

पुरुष—देखो नाप ठीक लेना, बूट छोटा न पड़ जाय, (मैकू की तरफ देखकर) यह कौन है ?

माधो—मेरा कारीगर।

पुरुष—(मैकूसे) हो हो, देखो बूट एक वर्ष चलना चाहिये। पूरा एक वर्ष, कम नहीं।

मैकूका उस पुरुषकी ओर ध्यान ही नहीं था। वह किसी और ही धुनमें मस्त बैठा हँस रहा था।

पुरुष—(क्रोधसे) मूर्ख बात सुनता है कि हँसता है, देखो, बूट बहुत जल्दी तैयार करना देर न होने पावे।

बाहर निकलते समय पुरुषका मस्तक द्वारसे टकरा गया। माधो बोला—सिर है कि लोहा, किवाड़ ही तोड़ डाला था।

मालती बोली—धनवान ही बलवान होते हैं, इस पुरुषको यमराज भी हाथ नहीं लगा सकता; औरकी तो बात ही क्या है।

उस आदमीके जाने बाद माधोने मैकूसे कहा—भाई काम तो ले लिया है, कोई झगड़ा न खड़ा हो जाय, चमड़ा बहुमूल्य है, और यह आदमी बड़ा क्रोधी है, भूल न होनी चाहिये, तुम्हारा हाथ साफ हो गया है, बूट काट तुम दो, सी मैं दूँगा।

मैकू बूट काटने लगा। मालती नित्य अपने पतिको बूट काटते देखा करती थी, मैकूकी काट देखकर चकरायी कि वह यह कर क्या रहा है, शायद बड़े आदमियोंके बूट इसी प्रकार

काटे जाते हों, यह विचारकर चुप रह गयी।

मैकूने चमड़ा काटकर दो पहरतक सिलीपर तैयार कर लिये। माधो जब भोजन करके उठा तो देखता क्या है कि बूटकी जगह सिलीपर बने रखे हैं। वह घबरा गया और मनमें कहने लगा—इस मैकूको मेरे साथ रहते एक वर्ष हो गया, ऐसी भूल तो उसने कभी नहीं की। आज इसे क्या हो गया। उस पुरुषने तो बूट बनानेको कहा था इसने तो सिलीपर बना डाले। अब उसे क्या उत्तर दूँगा, ऐसा चमड़ा और कहांसे मिल सकता है। (मैकूसे)—मित्र यह तुमने क्या किया? उसने तो बूट बनानेको न कहा था। अब मेरे सिरके बाल न बचेंगे।

यह बातें हो ही रही थीं कि द्वारपर एक आदमीने आकर पुकारा। मालतीने किवाड़ खोल दिये। यह उस धनी आदमीका वही नौकर था जो उसके साथ यहां आया था। उसने आते ही कहा—राम राम, तुमने बूट बना तो नहीं डाले?

माधो—हाँ, बना रहा हूँ।

नौकर—मेरे स्वामीका देहान्त हो गया, अब बूट बनाना व्यर्थ है।

माधो—अरे!

नौकर—वह तो घरतक भी पहुँचने नहीं पाये, गाड़ीमें ही प्राण त्याग दिये। स्वामिनीने कहा है कि उस चमड़ेके सिलीपर बना दो।

माधो—(प्रसन्न होकर) यह लो सिलीपर।

आदमी सिलीपर लेकर चलता बना।

६

मैकूको माधोके साथ रहते-रहते छः वर्ष बीत गये, अब तक वह केवल दो बेर हँसा था, नहीं तो चुपचाप बैठा अपना काम किये जाता था। माधो उसपर अति प्रसन्न था और डरता रहता था कि कहीं भाग न जाय। इस भयसे फिर माधोने उससे पता-वता कुछ नहीं पूछा।

एक दिन मालती चूल्हेमें आग जला रही थी, बालक आँगन में खेल रहे थे, माधो और मैकू बैठे जूते बना रहे थे कि एक बालकने आकर कहा—चाचा मैकू, देखो, वह स्त्री दो लड़कियां संग लिये आ रही है।

मैकूने देखा कि एक स्त्री चादर ओढ़े, छोटी-छोटी कन्याएं संग लिये चली आ रही है; कन्याओंका एक-सा रंग-रूप है, भेद केवल यह है कि उनमें एक लँगड़ी है। बुढ़िया भीतर आई तो माधोने पूछा —माई क्या काम है ?

उसने कहा—इन लड़कियोंके जूते बना दो।

माधो बोला—बहुत अच्छा।

वह नाप लेने लगा तो देखा कि मैकू इन लड़कियोंको इस प्रकार ताक रहा है मानों पहले कहीं देखा है।

बुढ़िया—इस लड़कीका एक पाँव लुंजा है, एक नाप इसका ले लो, बाकी तीन पैर एक जैसे हैं, यह लड़कियाँ जोड़ी हैं।

माधो—(नाप लेकर) यह लंगड़ी कैसे हो गयी, क्या जन्मसे ही ऐसी है ?

बुढ़िया—नहीं, इसकी माताने ही इसकी टांग कुचल दी थी।

मालती—तो क्या तुम इनकी माता नहीं हो ?

बुढ़िया—नहीं बहन, न इनकी माता हूँ न सम्बन्धी। यह मेरी कन्यायें नहीं। मैंने इन्हें पाला है।

मालती—तिसपर भी तुम इन्हें बड़ा प्यार करती हो।

बुढ़िया—प्यार क्योंकर न करूँ, मैंने अपना दूध पिला-पिलाकर इन्हें बड़ा किया है, मेरा अपना भी एक बालक था परन्तु उसे परमात्माने ले लिया। मुझे इनके साथ उससे भी अधिक प्रेम है।

मालती—तो यह किसकी कन्यायें हैं ?

बुढ़िया—छः वर्ष हुए कि एक सप्ताहके अन्दर इनके माता-पिताका देहान्त हो गया, पिताकी मङ्गलके दिन मृत्यु हुई, माताकी शुक्रवारको। पिताके मरनेके तीन दिन पीछे यह पैदा हुई। इनके मां-बाप मेरे पड़ोसी थे। इनका पिता लकड़हारा था, जङ्गलमें लकड़ियां काटते-काटते वृक्षके नीचे दबकर मर गया। उसी सप्ताहमें इनका जन्म हुआ। जन्म होते ही माता भी चल बसी। दूसरे दिन जब मैं उससे मिलने गयी तो देखा कि बिचारी मरी पड़ी है। मरते समय करवट लेते हुए इस कन्याकी टांग उसके नीचे दब गयी। गांववालोंने उसका दाह-कर्म किया। इनके माता-पिता रंक थे, कौड़ी पास न थी, सब लोग सोचने

लगे कि कन्याओंको कौन पाले। उस समय वहां मेरी ही गोदमें दो महीनेका एक बालक था; सबने यही कहा कि जबतक कोई प्रबन्ध न हो तुम्हीं इनको पालो। मैंने इन्हें सम्भाल लिया। पहले पहले मैं इस लंगड़ीको दूध नहीं पिलाया करती थी क्योंकि मैं समझती थी कि यह मर जायगी, पर फिर मुझे इसपर दया आ गयी और इसे भी दूध पिलाने लगी। उस समय परमात्मा-की कृपासे मेरी छातीमें इतना दूध था कि तीनों बालकोंको पिला-कर भी वह निकलता था। मेरा बालक मर गया; यह दोनों पल गयीं। हमारी दशा पहलेसे अब बहुत अच्छी है। मेरा पति एक बड़े कारखानेमें नौकर है। मैं इन्हें प्यार कैसे न करूँ ? यह तो मेरा जीवन-आधार है।

यह कहकर बुढ़ियाने दोनों लड़कियोंको छातीसे लगा लिया।

मालती—सत्य है, मनुष्य माता-पिताके बिना जी जा सकता है, परन्तु ईश्वरके बिना जीता नहीं रह सकता।

यह बातें हो रही थीं कि सारा झोंपड़ा प्रकाशित हो गया। सबने देखा कि मैकू कोनेमें बैठा हँस रहा है।

७

बुढ़िया लड़कियोंको लेकर बाहर चली गयी तो मैकूने उठ-कर माधो और मालतीको प्रणाम किया और बोला—स्वामी, अब मैं बिदा होता हूँ, परमात्माने मुझपर दया की, यदि कोई भूल-चूक हुई हो तो क्षमा करना।

माधो और मालतीने देखा कि मैकूका शरीर तेजोमय हो रहा है।

माधो दण्डवत् करके बोला—मैं जान गया था कि तुम साधारण मनुष्य नहीं, अब मैं तुम्हें नहीं रख सकता, न कुछ पूछ सकता हूँ, केवल यह बता दो कि जब मैं तुम्हें अपने घर लाया था तो तुम बहुत उदास थे, जब मेरी स्त्रीने तुम्हें भोजन दिया तो तुम हँसे, जब वह धनी आदमी बूट बनवाने आया था तब तुम हँसे, आज लड़कियोंके संग बुढ़िया आयी, तब तुम हँसे, यह क्या भेद है? तुम्हारे मुखपर इतना तेज क्यों है?

मैकू—तेजका कारण तो यह है कि परमात्माने मुझपर दया की, मैं अपने कर्मोंका फल भोग चुका। ईश्वरने तीन बातोंको समझनेके लिये मुझे इस मृतलोकमें भेजा था, तीनों बातें मैं समझ गया इसलिये मैं तीन बार हँसा। पहली बार जब तुम्हारी स्त्रीने मुझे भोजन दिया, दूसरी बार धनी पुरुषके आनेपर, तीसरी बार आज इस बुढ़ियाकी बात सुनकर।

माधो—परमेश्वरने यह दण्ड तुम्हें क्यों दिया था? वह तीन बातें कौनसी हैं, मुझे भी बतलाओ।

मैकू—मैंने भगवानकी आज्ञा न मानी थी इसीलिये यह दंड मिला था, मैं देवता हूँ, एक समय भगवानने मुझे एक स्त्रीकी जान लेनेके लिये मृतलोकमें भेजा, जाकर देखता हूँ कि स्त्री अति दुर्बल है और भूमिपर पड़ी है। पास तुरन्तकी जन्मी दो जुड़वाँ लड़कियाँ रो रही हैं। मुझे यमराजका दूत जानकर

वह बोली—मेरा पति वृक्षके नीचे दबकर मर गया है। मेरे न बहन है न माता, इन लड़कियोंका कौन पालन करेगा? मेरी जान न निकाल, मुझे इन्हें पाल लेने दे। बालक माता-पिता बिना पल नहीं सकता। मुझे उसकी बातोंपर दया आ गयी, यमराजके पास लौट आकर मैंने निवेदन किया कि महाराज, मुझे स्त्रीकी बातें सुनकर दया आ गयी, उसकी जुड़वाँ लड़कियोंको पालनेवाला कोई नहीं था, इसलिये मैंने उसकी जान नहीं निकाली, क्योंकि बालक माता-पिताके बिना पल नहीं सकता। यमराज बोले—जाओ अभी उसकी जान निकाल लो, और जबतक यह तीन बातें न जान लोगे कि (१) मनुष्यमें क्या रहता है, (२) मनुष्यको क्या नहीं मिलता, (३) मनुष्यका जीवन-आधार क्या है? तबतक तुम स्वर्गमें न आने पावोगे। मैंने मृतलोकमें आकर स्त्रीकी जान निकाल ली, मरती समय करवट लेते हुए उसने एक लड़कीकी टाँग कुचल दी, मैं स्वर्गको उड़ा, परन्तु आँधी आयी। मेरे पंख उखड़ गये और मैं मन्दिरके पास आ गिरा।

८

अब माधो और मालती समझ गये कि मैकू कौन है, दोनों बड़े प्रसन्न हुए कि अहोभाग्य हमने देवताके दर्शन किये।

मैकूने फिर कहा—जबतक मैंने मनुष्य-शरीर धारण नहीं किया था, मैं शीत-गरमी, भूख-प्यासका कष्ट न जानता था,

परन्तु मृतलोकमें आनेपर प्रकट हो गया कि दुःख क्या वस्तु है। मैं भूख और जाड़ेका मारा मन्दिरमें घुसना चाहता था, लेकिन मन्दिर बन्द था, मैं हवाकी आडमें सड़कपर बैठ गया। सन्ध्या-समय एक मनुष्य आता दिखायी दिया। मृतलोकमें जन्म लेनेपर यह पहला मनुष्य था जो मैंने देखा था। उसका मुख ऐसा भयंकर था कि मैंने नेत्र मूँद लिये। उसकी ओर देख न सका। वह मनुष्य यह कह रहा था कि स्त्री-पुत्रोंका पालन पोषण किस भाँति करें; वस्त्र कहांसे लायें, इत्यादि। मैंने विचारा, देखो मैं तो भूख और शीतसे मर रहा हूँ, यह अपना ही रोना रो रहा है, मेरी कुछ सहायता नहीं करता, वह पाससे निकल गया। मैं निराश हो गया। इतनेमें वह मेरे पास लौट आया, अब दयाके कारण उसका मुख सुन्दर दीखने लगा। माधो, वह मनुष्य तुम थे। जब तुम मुझे घर लाये मालतीका मुख तुमसे भी अधिक भयंकर था क्योंकि उसमें दयाका लेश-मात्र न था, परन्तु जब वह दयालु होकर भोजन लायी तो उसके मुखकी कठोरता जाती रही। तब मैंने समझा कि मनुष्यमें तत्व-वस्तु प्रेम है। इसीलिये पहली बार हँसा।

एक वर्ष पीछे वह धनी मनुष्य बूट बनवाने आया, उसे देख-कर मैं इस कारण हँसा कि बूट तो एक वर्षके लिये बनवाता है और यह जानता ही नहीं कि सन्ध्या होनेसे पहले मर जाऊँगा तब दूसरी बातका ज्ञान हुआ कि मनुष्य जो चाहता है सो उसे नहीं मिलता, इसलिये दूसरी बार हँसा।

छः वर्ष पीछे आज यह बुढ़िया आयी तो मुझे निश्चय हो गया कि सबका जीवन-आधार परमात्मा है दूसरा कोई नहीं, इसलिये तीसरी बार हँसा।

६

मैकू प्रकाशस्वरूप हो रहा था, उसपर आँख नहीं जमती थी। वह फिर कहने लगा—देखो प्राणिमात्र प्रेम द्वारा जीते हैं, केवल पोषणसे कोई नहीं जी सकता। वह स्त्री क्या जानती थी कि उसकी लड़कियोंको कौन पालेगा, वह धनी पुरुष क्या जानता था कि गाड़ीमें ही मर जाऊँगा, घर पहुँचना कहाँ। कौन जानता है कि कल क्या होगा, कपड़ेकी जरूरत होगी कि कफनकी।

मनुष्य-शरीरमें मैं केवल इस कारण जीता बचा कि तुमने और तुम्हारी स्त्रीने मुझसे प्रेम किया। वह अनाथ लड़कियाँ इस कारण पलीं कि एक बुढ़ियाने प्रेम-वश होकर उन्हें दूध पिलाया। मतलब यह कि प्राणी केवल अपने जतनसे नहीं जी सकते। प्रेम ही उन्हें जिलाता है। पहले मैं समझता था कि जीवोंका धर्म केवल जीना है, परन्तु अब निश्चय हुआ कि धर्म केवल जीना नहीं किन्तु प्रेम भावसे जीना है। इसी कारण परमात्मा किसीको यह नहीं बतलाता कि तुम्हें क्या चाहिये, बल्कि हरेकको यही बतलाता है कि सबके लिये क्या चाहिये। वह चाहता है कि प्राणिमात्र प्रेमसे मिले रहें। मुझे बिश्वास हो गया

कि प्राणोंका आधार प्रेम है, प्रेमी पुरुष परमात्मामें, और परमात्मा प्रेमी पुरुषमें सदैव निवास करता है, सारांश यह है कि प्रेम और परमेश्वरमें कोई भेद नहीं। यह कहकर देवता स्वर्ग-लोकको चला गया।

५

एक चिनगारी घरको जला देती है

एक समय एक गाँवमें रहीमखां नामका एक मालदार किसान रहता था। उसके तीन पुत्र थे, सब युवक और काम करनेमें चतुर थे। सबसे बड़ा ब्याहा हुआ था, मझला ब्याहनेको था, छोटा क्वारा था। रहीमकी स्त्री और बहू चतुर और सुशीला थीं। घरके सभी प्राणी अपना-अपना काम करते थे, केवल रहीमका बूढ़ा बाप दमेके रोगसे पीड़ित होनेके कारण कुछ काम-काज न करता था। सात बरसोंसे वह केवल खाटपर पड़ा रहता था। रहीमके पास तीन बैल, एक गाय, एक बछड़ा, पन्द्रह भेड़ें थीं। स्त्रियाँ खेतीके काममें सहायता करती थीं। अनाज मुस्का पैदा हो जाता था। रहीम और उसके बाल-बच्चे बड़े आरामसे रहते अगर पड़ोसी रहीमके लंगड़े पुत्र कादिरके साथ इसका एक ऐसा झगड़ा न छिड़ गया होता जिससे सुख चैन जाता रहा था।

जबतक बूढ़ा करीम जीता रहा और रहीमका पिता घरका प्रबन्ध करता रहा, कोई झगड़ा नहीं हुआ, वह बड़े प्रेमभावसे जैसा कि पड़ोसियोंमें होना चाहिये एक दूसरेकी सहायता करते रहे। लड़कोंका घरोंको संभालना था कि सब कुछ बदल गया।

अब सुनिये कि झगड़ा किस बातपर छिड़ा। रहीमकी बहूने कुछ मुर्गियां पाल रखी थीं। एक मुरगी नित्य पशुशालामें जाकर अंडे दिया करती थी। बहू शामको वहां जाती और अंडा उठा लाती। एक दिन दैवगतिसे वह मुरगी बालकोंसे डरकर पड़ोसीके आंगनमें चली गई और वहां अण्डा दे आई, शामको बहूने पशुशालामें जाकर देखा तो अण्डा वहां न था। साससे पूछा, उसे क्या मालूम था, देवर बोला कि मुरगी पड़ोसिनके आंगनमें कुड़कुड़ा रही थी, शायद वहां अण्डा दे आई हो।

बहू वहां पहुँचकर अण्डा खोजने लगी, भीतरसे कादिरकी माता निकलकर पूछने लगी—बहू क्या है?

बहू—मेरी मुरगी तुम्हारे आँगनमें अण्डा दे गई है, उसे खोजती हूँ, तुमने देखा हो तो बता दो।

कादिरकी माँने कहा—मैंने नहीं देखा, क्या हमारी मुरगियाँ अण्डे नहीं देतीं कि हम तुम्हारे अण्डे बटोरती फिरेंगी। दूसरोंके घर जाकर अण्डे खोजनेकी हमारी आदत नहीं।

यह सुनकर बहू आग हो गयी, लगी बकने। कादिरकी माँ कुछ कम न थी, एक-एक बातके सौ-सौ उत्तर दिये। रहीमकी स्त्री पानी लाने बाहर निकली थी, गाली-गलौजका शोर सुनकर

वह भी आ पहुँची, उधरसे कादिरकी स्त्री भी दौड़ पड़ी। अब सबकी सब इकट्ठी होकर लगीं गालियाँ बकने और लड़ने। कादिर खेतसे घरको आ रहा था, वह भी आकर मिल गया। इतनेमें रहीम भी आ पहुँचा। पूरा महाभारत हो गया। अब दोनों गुथ गये। रहीमने कादिरकी दाढ़ीके बाल उखाड़ डाले, गांववालोंने आकर बड़ो मुश्किलसे उन्हें छुड़ाया। पर कादिरने अपनी दाढ़ीके बाल उठा लिये और हाकिम परगनाके इजलास-में जाकर कहा—मैंने दाढ़ी इसलिये नहीं रखी थी जो यों उखाड़ी जाय। रहीमसे हरजाना लिया जाय। पर रहीमके बूढ़े पिताने उसे समझाया—बेटा, ऐसी तुच्छ बातपर लड़ाई करना मूर्खता नहीं तो क्या है। जरा विचार तो करो, सारा बखेड़ा सिर्फ एक अण्डेसे फैला है। कौन जाने शायद किसी बालकने उठा लिया हो, और फिर अण्डा था कितनेका? परमात्मा सबका पालन-पोषण करता है, पड़ोसी यदि गाली दे भी दे, तो क्या गालीके बदले गाली देकर अपनी आत्माको मलिन करना उचित है, कभी नहीं, खैर। अब तो जो होना था वह हो ही गया उसे मिटाना उचित है बढ़ाना ठीक नहीं। क्रोध पापका मूल है, याद रखो लड़ाई बढ़ानेसे तुम्हारी ही हानि होगी।

परन्तु बूढ़ेकी बातपर किसीने कान न धरा। रहीम कहने लगा कि कादिरको धनका घमण्ड है, मैं क्या किसीका दिया खाता हूँ। बड़ा घर न दिखा दिया तो कहना। उसने भी नालिश ठोंक दी।

यह मुकदमा चल ही रहा था कि कादिरकी गाड़ीकी एक कील खो गई, उसके परिवारवालोंने रहीमके बड़े लड़केपर चोरीकी नालिश कर दी।

अब कोई दिन ऐसा न जाता था कि लड़ाई न हो, बड़ोंको देखकर बालक भी आपसमें लड़ने लगे। जब कभी वस्त्र धोनेके लिये स्त्रियां नदीपर इकट्ठी होती थीं, तो सिवाय लड़ाईके कुछ काम न करती थीं।

पहले पहल तो गाली-गलौजपर ही बस हो जाती थी, पर अब वह एक दूसरेका माल चुराने लगे। जीना दुर्लभ हो गया। न्याय चुकाते-चुकाते वहांके कर्मचारी थक गये। कभी कादिर रहीमको कैद करा देता, कभी वह उसको बन्दीखाने भिजवा देता। कुत्तोंकी भाँति जितना ही लड़ते थे उतना ही क्रोध बढ़ता था। छः वर्षतक यही हाल रहा। बूढ़ेने बहुतेरा सिर पटका कि लड़को क्या करते हो, बदला लेना छोड़ दो, बैर भाव त्यागकर अपना काम करो, दूसरोंको कष्ट देनेसे तुम्हारी ही हानि होगी, परन्तु किसीके कानपर जूं तक न रेंगती थी।

सातवें वर्ष गांवमें किसीके घर विवाह था। स्त्री-पुरुष जमा थे, बातें करते-करते रहीमकी बहूने कादिरपर घोड़ा चुरानेका दोष लगाया। वह आग हो गया, उठकर बहूके ऐसा मुक्का मारा कि वह सात दिन चारपाईपर पड़ी रही। वह उस समय गर्भवती थी। रहीम बड़ा प्रसन्न हुआ कि अब काम बन गया, गर्भवती स्त्रीको मारनेके अपराधमें इसे बन्दीखाने न भिजवाया

तो मेरा नाम रहीम ही नहीं। झट जाकर नालिश कर दी, तहकीकात होनेपर मालूम हुआ कि बहूको कोई कड़ी चोट नहीं आयी, मुकद्दमा खारिज हो गया। रहीम कब चुप रहनेवाला था, ऊपरकी कचहरीमें गया और मुन्शीको घूस देकर कादिरको बीस कोड़े मारनेका हुक्म लिखवा दिया।

उस समय कादिर कचहरीसे बाहर खड़ा था, हुक्म सुनते ही बोला—कोड़ोंसे मेरी पीठ तो जलेगी ही, परन्तु रहीमको भी भस्म किये बिना न छोड़ूंगा।

रहीम तुरत अदालतमें गया और बोला—हुजूर, कादिर मेरा घर जलानेकी धमकी देता है। कई आदमी गवाह हैं।

हाकिमने कादिरको बुलाकर पूछा कि क्या बात है।

कादिर—सब झूठ, मैंने कोई धमकी नहीं दी। आप हाकिम हैं। जो चाहें सो करें, पर क्या न्याय इसीको कहते हैं कि सच्चा मारा जाय और झूठा चैन करे।

कादिरकी सूरत देखकर हाकिमको निश्चय हो गया कि वह अवश्य रहीमको कोई न कोई कष्ट देगा। उसने कादिरको समझाते हुए कहा—देखो भाई, बुद्धिसे काम लो, भला कादिर गर्भवती स्त्रीको मारना क्या ठीक था? यह तो ईश्वरकी बड़ी कृपा हुई कि चोट नहीं आयी, नहीं तो क्या जाने क्या हो जाता। तुम विनय करके रहीमसे अपना अपराध क्षमा करा लो, मैं यह हुक्म बदल डालूंगा!

मुंशी—दफा ११७ के अनुसार हुक्म नहीं बदला जा सकता।

हाकिम—चुप रहो। परमात्माको शांति प्रिय है, उसकी आज्ञा-पालन करना सबका मुख्य धर्म है।

कादिर बोला—हुजूर, मेरी अवस्था अब पचास वर्षकी है। मेरे एक ब्याहा हुआ पुत्र भी है, आजतक मैंने कभी कोड़े नहीं खाये। मैं और उससे क्षमा नहीं मांग सकता। वह भी मुझे याद करेगा।

यह कहकर कादिर बाहर चला गया।

कचहरी गांवसे सात मीलपर थी, रहीमको घर पहुँचते-पहुँचते अन्धेरा हो गया, उस समय घरमें कोई न था, सब बाहर गये हुये थे। रहीम भीतर जाकर बैठ गया और विचार करने लगा। कोड़े लगनेका हुक्म सुनकर कादिरका मुख कैसा उतर गया था। विचारा दीवारकी ओर मुँह करके रोने लगा था। हम और वह कितने दिनोंतक एक साथ खेले हैं, मुझे उसपर इतना क्रोध न करना चाहिये था। यदि मुझे कोड़े मारनेका हुक्म सुनाया जाता तो मेरी क्या दशा होती।

इसपर उसे कादिरपर दया आयी, इतनेमें बूढ़े पिताने आकर पूछा—कादिरको क्या दण्ड मिला?

रहीम— बीस कोड़े।

बूढ़ा—बुरा हुआ। बेटा, तुम अच्छा नहीं करते, इन बातोंमें कादिरकी उतनी हानि नहीं होगी जितनी तुम्हारी, भला मैं यह पूछता हूं कि कादिरपर कोड़े पड़नेसे तुम्हें क्या लाभ होगा।

रहीम—वह फिर ऐसा काम नहीं करेगा।

बूढ़ा - क्या नहीं करेगा, उसने तुमसे बढ़कर कौनसा बुरा काम किया है ?

रहीम—वाह वाह, आप विचार तो करें कि उसने मुझे कितना कष्ट दिया है। स्त्री मरनेसे बची, अब घर जलानेकी धमकी देता है, तो क्या मैं उसका जस गाऊं ?

बूढ़ा—(आह भरकर) बेटा मैं घरमें पड़ा रहता हूँ और तुम सर्वत्र घूमते हो, इसलिये तुम मुझे मूर्ख समझते हो। लेकिन द्रोहने तुम्हें अन्धा बना रखा है, दूसरोंके दोष तुम्हारे नेत्रोंके सामने हैं, अपने दोष पीठ पीछे हैं। भला मैं पूछता हूं कि कादिरने क्या किया। एकके करनेसे भी कभी लड़ाई हुआ करती है ? कभी नहीं, दो बिना लड़ाई नहीं हो सकती। यदि तुम शांत स्वभाव होते तो लड़ाई कैसे होती ? भला जवाब तो दो उसकी दाढ़ीके बाल किसने उखाड़े, उसका भूसा किसने चुराया, उसे अदालतमें किसने घसीटा ? तिसपर सारे दोष कादिरके माथे ही थोप रहे हो। तुम आप बुरे हो, बस यही सारे झगड़ेकी जड़ है। क्या मैंने तुम्हें यही शिक्षा दी है ? क्या तुम नहीं जानते कि मैं और कादिरका पिता किस प्रेमभावसे रहते थे। यदि किसीके घरमें अन्न चुक जाता था तो एक दूसरेसे उधार लेकर काम चलाता था, यदि कोई किसी और काममें लगा होता था तो दूसरा उसके पशु चरा लाता था। एकको किसी वस्तुकी जरूरत होती थी तो दूसरा तुरन्त दे देता था, कोई लड़ाई थी न झगड़ा; प्रेम-प्रीतिपूर्वक जीवन व्यतीत

करता था। अब; अब तो तुमने महाभारत बना रखा है, क्या इसीका नाम जीवन है? हाय! हाय!! यह तुम क्या पाप-कर्म कर रहे हो। तुम घरके स्वामी हो, यमराजके सामने तुम्हें ही उत्तर देना होगा—बालकों और स्त्रियोंको तुम क्या शिक्षा दे रहे हो, गाली बकना और ताने देना। कल तारावती पड़ोसिन धनदेवीको गालियां दे रही थी, उसकी माता पास बैठी सुन रही थी। क्या यही भलमनसी है? क्या गालीका बदला गाली होना चाहिये? नहीं बेटा नहीं, महापुरुषोंका वचन है कि कोई तुम्हें गाली दे तो सह लो, वह स्वयं पछतायेगा। यदि कोई तुम्हारे गालपर एक चपत मारे तो दूसरा गाल उसके सामने कर दो, वह लज्जित और नम्र होकर तुम्हारा भक्त हो जायगा। अभिमान ही सब दुःखका कारण है—तुम चुप क्यों हो गये क्या मैं झूठ कहता हूँ?

रहीम चुप रह गया, कुछ नहीं बोला।

बूढ़ा—महात्माओंका वाक्य क्या असत्य है, कभी नहीं। उनका एक-एक अक्षर पत्थरकी लकीर है। अच्छा, अब तुम अपने इस जीवनपर विचार करो, जबसे यह महाभारत आरम्भ हुआ है, तुम सुखी हो अथवा दुःखी, जरा हिसाब तो लगाओ कि इन मुकदमों, वकीलों और जाने-आनेमें कितना रुपया खर्च हो चुका है। देखो, तुम्हारे पुत्र कैसे सुन्दर और बलवान हैं, लेकिन तुम्हारी आमदनी घटती जाती है। क्यों? तुम्हारी मूर्खता है। तुम्हें चाहिये कि लड़कों सहित खेतीका काम करो। पर तुम-

पर तो लड़ाईका भूत सवार है, वह चैन लेने नहीं देता। पिछले साल जयी क्यों न उगी, इसलिये कि समयपर नहीं बोयी गयी, मुकदमे चलाओ कि जयो बोओ। बेटा, अपना काम करके, खेती-बारीको सम्भालो, यदि कोई कष्ट दे उसे क्षमा करो, परमात्मा इसीसे प्रसन्न होता है, ऐसा करनेपर तुम्हारा अन्तःकरण शुद्ध होकर तुम्हें आनन्द प्राप्त होगा।

रहीम कुछ नहीं बोला।

बूढ़ा—बेटा, अपने बूढ़े, मूर्ख पिताका कहना मानो, जाओ कचहरीमें जाकर आपसमें राजीनामा कर लो, कल शबेरात है। कादिरके घर जाकर नम्रतापूर्वक उसे नेवता दो और घर वालोंको भी यही शिक्षा दो कि वैर छोड़कर आपसमें प्रेम बढ़ायें।

पिताकी बातें सुनकर रहीमके मनमें विचार हुआ कि पिताजी सच कहते हैं। इस लड़ाई-झगड़ेसे हम मिट्टीमें मिले जाते हैं। लेकिन इस महाभारतको किस प्रकार समाप्त करूं? बूढ़ा उसके मनकी बात जानकर बोला। बेटा, मैं तुम्हारे मनकी बात जान गया। लज्जा त्याग, तुरन्त जाकर कादिरसे मित्रता कर लो, फैलनेसे पहले ही चिनगारीको बुझा देना उचित है, फैल जानेपर फिर कुछ नहीं बनता।

बूढ़ा कुछ और कहना चाहता था कि स्त्रियाँ कोलाहल करती हुई भीतर आ गयीं, उन्होंने कादिरके दण्डका हाल सुन

लिया था। हालमें पड़ोसिनसे लड़ाई करके आयी थीं, आकर कहने लगीं कि कादिर यह भय दिखाता है कि मैंने घूस देकर हाकिम को अपनी ओर फेर लिया है, रहीमका सारा हाल लिखकर महाराजकी सेवामें भेजनेके लिए विनय-पत्र तैयार किया है, देखो, क्या मजा चखाता हूँ आधी जायदाद न छीन ली तो बात ही क्या है। यह सुनना था कि रहीमके चित्तमें फिर आग दहक उठी।

आषाढ़ी बोनेकी ऋतु थी, करनेको काम बहुत था, रहीम भुसौलमें गया और पशुओंको भूसा डालकर कुछ और काम करने लगा। इस समय वह पिताकी बातें और कादिरके साथ लड़ाई सब कुछ भूला हुआ था। रातको घरमें आकर आराम करना ही चाहता था कि पाससे यह शब्द सुनायी दिया—वह दुष्ट बध करने ही योग्य है, जीकर क्या बनायेगा—इन शब्दोंने रहीमको पागल बना दिया। वह चुपचाप खड़ा कादिरको गालियां सुनाता रहा। जब वह चुप हो गया तो वह घरमें चला गया।

भीतर आकर देखा कि बहू बैठी ताक रही है, स्त्री भोजन बना रही है, बड़ा लड़का दूध गर्म कर रहा है, मंझला झाड़ू लगा रहा है, छोटा भैंस चराने बाहर जानेको तैयार है। सुखकी यह सब सामग्री सामने थी, परन्तु पड़ोसीके साथ लड़ाईका दुःख सहा न जाता था।

वह जला कुढ़ा भीतर आया। उसके कानमें पड़ोसीके शब्द

गूंज रहे थे, उसने सबसे लड़ना आरम्भ किया। इतनेमें छोटा लड़का भैंस चराने बाहर जाने लगा। रहीम भी उसके साथ बाहर चला आया, लड़का तो चल दिया, वह अकेला रह गया। रहीम मनमें सोचने लगा—कादिर बड़ा दुष्ट है, हवा चल रही है, ऐसा न हो पीछेसे आकर मकानमें आग लगाकर भाग जाय क्या अच्छा हो कि जब वह आग लगाने आये, तब उसे मैं पकड़ लूं। बस फिर कभी नहीं बच सकता, अवश्य उसे बन्दीखाने जाना पड़े।

यह विचार करके वह गली में पहुंच गया। सामने उसे कोई चीज हिलती दिखायी दी, पहले तो वह समझा कि कादिर है पर वहाँ कुछ न था—चारों ओर सन्नाटा था।

थोड़ी दूर आगे जाकर देखता क्या है कि पशुशालाके पास एक मनुष्य जलता हुआ फूलका पूला हाथमें लिये खड़ा है। ध्यानसे देखनेपर मालूम हुआ कि कादिर है। फिर क्या था, जोरसे दौड़ा कि उसे जाकर पकड़ लें।

रहीम अभी वहां पहुँचने न पाया था कि छप्परमें आग लगी, उंजाला होनेपर कादिर प्रत्यक्ष दिखायी देने लगा। रहीम बाजकी तरह झपटा, लेकिन कादिर उसकी आहट पाकर चम्पत हो गया।

रहीम उसके पीछे दौड़ा, उसके कुरतेका पल्ला हाथमें आया ही था कि वह छुड़ाकर फिर भागा। रहीम धड़ामसे पृथ्वीपर गिर पड़ा, उठकर फिर दौड़ा. इतनेमें कादिर अपने घर पहुँच गया। रहीम वहाँ जाकर उसे पकड़ना चाहता था कि उसने ऐसा

लट्ठ मारा कि रहीम चक्कर खाकर बेसुध हो धरतीपर गिर पड़ा। सुध आनेपर उसने देखा कि कादिर वहाँ नहीं है, फिरकर देखता है तो पशुशालाका छप्पर जल रहा है, ज्वाला प्रचण्ड हो रही है और लपटें निकल रही हैं।

रहीम सिर पीटकर पुकारने लगा—भाइयो यह क्या हुआ। हाय मेरा सत्यानास हो गया! चिल्लाते-चिल्लाते उसका कण्ठ बैठ गया। वह दौड़ना चाहता था परन्तु उसकी टाँगें लड़खड़ा गयीं। वह धमसे धरतीपर गिर पड़ा, फिर उठा, घरके पास पहुंचते-पहुंचते आग चारों ओर फैल गयी, अब क्या बन सकता था, भयसे पड़ोसी भी अपना असबाब बाहर फेंकने लगे, वायुके वेगसे कादिर के घरमें भी आग जा लगी, यहाँतक कि आधा गाँव जलकर राखका ढेर हो गया। रहीम और कादिर दोनोंका कुछ न बचा। मुरगियाँ,हल, गाड़ी, पशु, वस्त्र,अन्न, भूसा आदि सब कुछ स्वाहा हो गया। इतना अच्छा हुआ कि किसीकी जान नहीं गयी।

रहीम पागलकी भाँति मकानके पास खड़ा यही पुकारे जाता था—भाइयो, यदि मैं उस पूलेको बुझा देता इत्यादि—आग रातभर जलती रही। वह कुछ असबाब उठाने भीतर गया, परन्तु ज्वाला ऐसी प्रचण्ड थी कि जा न सका। उसके कपड़े और दाढ़ीके बाल झुलस गये।

प्रातःकाल गाँवके चौधरीका बेटा उसके पास आया और बोला—रहीम तुम्हारे पिताकी दशा अच्छी नहीं है। वह तुम्हें बुला रहे हैं। रहीम तो पागल हो रहा था, बोला—कौन पिता?

चौधरीका बेटा—तुम्हारे पिता। इसी आगने उनका काम तमाम कर दिया है। हम उन्हें यहाँसे उठाकर अपने घर ले गये थे, अब वह बच नहीं सकते, चलो, अन्तिम भेंट कर लो।

रहीम उसके पीछे हो लिया। वहाँ पहुँचनेपर चौधरीने बूढ़ेको खबर दी कि रहीम आ गया है।

बूढ़ेने रहीमको अपने निकट बुलाकर कहा—बेटा, मैं तुमसे क्या कहा करता था। गाँव किसने जलाया?

रहीम—कादिरने, मैंने आप उसे छप्परमें आग लगाते देखा था। यदि मैं उस समय उसे पकड़कर पूलेको पैरों-तले मल देता तो आग कभी न लगती।

बूढ़ा—रहीम, मेरा अन्त समय आ गया, तुमको भी एक दिन अवश्य मरना है, पर सच बतलाओ कि दोष किसका है।

रहीम चुप हो गया।

बूढ़ा—(फिर) बताओ, कुछ बोलो तो कि यह सब किस की करतूत है, किसका दोष है?

रहीम—(आँखोंमें आँसू भरकर) मेरा। पिताजी, क्षमा कीजिये, मैं खुदा और आप दोनोंका अपराधी हूँ।

बूढ़ा—रहीम!

रहीम—हाँ, पिताजी।

बूढ़ा—जानते हो कि अब क्या करना उचित है।

रहीम—मैं क्या जानूँ, मेरा तो अब गांवमें रहना कठिन है।

बूढ़ा—यदि तू परमेश्वरकी आज्ञा मानेगा तो तुझे कोई कष्ट

न होगा। देख, याद रख, अब किसीसे न कहना कि आग किसने लगायी थी, जो पुरुष किसीका एक दोष क्षमा करता है, परमात्मा उसके दो दोष क्षमा करता है।

यह कहकर खुदाको याद करते हुए बूढ़ेने प्राण त्याग किये।

रहीमका क्रोध शांत हो गया। उसने किसीको न बतलाया कि आग किसने लगायी थी। पहले पहल तो कादिर डरता रहा कि रहीमके चुप रह जानेमें भी कोई भेद है फिर कुछ दिनोंके पीछे उसे विश्वास हो गया कि रहीमके चित्तमें अब कोई बैर-भाव नहीं रहा।

बस फिर क्या था—प्रेमसे शत्रु भी मित्र हो जाते हैं। वह पास-पास घर बनाकर पड़ोसियोंकी भांति रहने लगे।

रहीमको अपने पिताका उपदेश कभी न भूलता था कि फैलने से पहले ही चिनगारीको बुझा देना उचित है? अब यदि कोई उसे कष्ट देता तो वह बदला लेनेकी इच्छा नहीं करता, यदि कोई उसे गाली देता है तो सहन करके एक दूसरेको यह उपदेश करता है कि कुवचन बोलना अच्छा नहीं। अपने घरके प्राणियोंको भी वह यही उपदेश किया करता है। पहलेकी अपेक्षा अब उसका जीवन बड़े आनन्दपूर्वक कटता है।

———

६

दो वृद्ध पुरुष

१

एक गांवमें अर्जुन और मोहन नामके दो किसान रहते थे। अर्जुन धनी था, मोहन साधारण पुरुष था; उन्होंने चिरकालसे बद्रीनारायणकी यात्राका इरादा कर रखा था।

अर्जुन बड़ा सुशील, साहसी और दृढ़ था, दो बेर गांवका चौधरी रहकर उसने बड़ा अच्छा काम किया था। उसके दो लड़के तथा एक पोता था, उसकी साठ वर्षकी अवस्था थी, परन्तु दाढ़ी अभीतक नहीं पकी थी।

मोहन प्रसन्नबदन, दयालु और मिलनसार था, उसके दो पुत्र थे, एक घरमें था, दूसरा बाहर नौकरी पर गया हुआ था, वह खुद घरमें बैठा-बैठा बढ़ईका काम करता था।

बद्रीनारायणकी यात्राका संकल्प किये उन्हें बहुत दिन हो चुके थे। अर्जुनको छुट्टी ही नहीं मिलती थी, एक काम समाप्त होता था कि दूसरा आकर घर लेता था। पहले पोतेका ब्याह करना था, फिर छोटे लड़केका गौना आ गया, इसके पीछे मकान बनना आरम्भ हो गया इत्यादि।

एक दिन बाहर लकड़ीपर बैठकर दोनों बूढ़ोंमें बातें होने लगीं।

मोहन—क्यों भाई, अब यात्रा करनेका विचार कब है ?

अर्जुन-जरा और ठहरो। अबकी वर्ष अच्छा नहीं लगा, मैंने यह समझा था कि सौ रुपयेमें मकान तैयार हो जायगा, तीन सौ रुपये लग चुके हैं और अभी दिल्ली दूर है अगले वर्ष अवश्य चलेंगे।

मोहन—शुभकार्यमें देरी करना अच्छा नहीं होता, मेरे विचारमें तो तुरत चल देना ही उचित है, दिन बहुत अच्छे हैं।

अर्जुन—दिन तो अच्छे हैं पर मकानको क्या करूं, इसे किसपर छोड़ूं ?

मोहन—क्या कोई सम्भालनेवाला ही नहीं, बड़े लड़केको सौंप दो।

अर्जुन—उसका क्या भरोसा है।

मोहन—वाह-वाह, भला बताओ तो कि मरनेपर कौन सम्भालेगा ? इससे तो यह अच्छा है कि जीतेजी सम्भाल लें और तुम सुखसे जीवन व्यतीत करो।

अर्जुन—यह सत्य है, पर किसी काममें हाथ लगाकर उसे पूरा करनेकी इच्छा सभीको होती है।

मोहन—तो काम कभी पूरा नहीं होता, कुछ न कुछ कसर रह ही जाती है। कल ही की बात है कि रामनौमीके लिये स्त्रियां कई दिनसे तैयारी कर रही थीं। कहीं लिपाई होती थी, कहीं आटा पीसा जाता था। इतनेमें रामनौमी आ पहुंची। बहू बोली, परमेश्वरकी बड़ी कृपा है कि त्यौहार बिना बुलाये ही आ जाते हैं, नहीं तो हम तैयारी ही करते रहें।

अर्जुन—एक बात और है, इस मकानपर मेरा बहुत रुपया खर्च हो गया है, इस समय रुपयेका भी तोड़ा है, कमसे कम सौ रुपये तो हों, नहीं तो यात्रा कैसे होगी।

मोहन—(हंसकर) अहा हा ! जो जितना धनवान होता है, वह उतना ही कङ्गाल होता है। तुम और रुपयेकी चिन्ता ! जाने भी दो। मैं सच कहता हूँ, कि इस समय मेरे पास एक सौ रुपया भी नहीं, परन्तु जब चलनेका निश्चय हो जायगा तो रुपया भी कहीं न कहींसे अवश्य आ ही जायगा। बस यह बतलाओ कि चलना कब है ?

अर्जुन—तुमने रुपये जोड़ रखे होंगे, नहीं तो कहांसे आ जायगा, बताओ तो सही।

मोहन—कुछ घरमेंसे, कुछ माल बेचकर। पड़ोसी कुछ चौखट आदि मोल लेना चाहता है, उसे सस्ती दे दूंगा।

अर्जुन—सस्ती बेचनेपर पछतावा होगा।

मोहन-मैं सिवाय पापके और किसी कामपर नहीं पछताता। आत्मासे कौन चीज प्यारी है।

अर्जुन—यह सब ठीक है, परन्तु घरके काम काजको बिसारना भी उचित नहीं।

मोहन—और आत्माको बिसारना तो और भी बुरा है। जब कोई बात मनमें ठान ली तो उसे बिना पूरा किये न छोड़ना चाहिये।

२

अन्तमें चलना निश्चय हो गया। चार दिन पीछे जब बिदा

होनेका समय आया तो अर्जुन बड़े लड़केको समझाने लगा कि मकानपर छत इस प्रकार डालना, भूसी बखारमें इस भाँति जमा कर देना, मंडीमें जाकर अनाज इस भावसे बेचना, रुपये सँभालकर रखना, ऐसा न हो खो जावें, घरका प्रबन्ध ऐसा रखना कि किसी प्रकारकी हानि न होने पावे। उसका समझाना समाप्त ही न होता था।

इसके प्रतिकूल मोहनने अपनी स्त्रीसे केवल इतना ही कहा कि तुम चतुर हो, सावधानीसे काम करती रहना।

मोहन तो घरसे प्रसन्नमुख बाहर निकला और गाँव छोड़ते ही घरके सारे बखेड़े भूल गया। साथीको प्रसन्न रखना, सुखपूर्वक यात्रा कर घर लौट आना उसका मन्तव्य था। राह चलता था तो ईश्वर-सम्बन्धी कोई भजन गाता था या किसी महापुरुषकी कथा कहता। सड़कपर अथवा सरायमें, जिस किसीसे भेंट हो जाती उससे बड़ी नम्रतासे बोलता।

अर्जुन भी चुपके-चुपके चल तो रहा था, परन्तु उसका चित्त व्याकुल था, सदैव घरकी चिन्ता लगी रहती थी। लड़का अनजान है, कौन जाने क्या कर बैठे। अमुक बात कहना भूल आया, ओ हो, देखूं मकानकी छत पड़ती है या नहीं। यही विचार उसे हरदम घेरे रहते थे, यहाँ तक कि कभी-कभी लौट जानेपर तैयार हो जाता था।

३

चलते-चलते एक महीना पीछे वह पहाड़पर पहुँच गये,

पहाड़ी बड़े अतिथि-सेवक होते हैं, अबतक यह मोलका अन्न खाते रहे थे। अब उनको बड़ी खातिरदारी होने लगी।

आगे चलकर वह ऐसे देशमें पहुँचे, जहाँ दुर्घट काल पड़ा हुआ था। खेतियाँ सब सूख गयी थीं; अनाजका एक दाना भी नहीं उगा था। धनवान कङ्गाल हो गये, धनहीन देश छोड़कर भीख मांगने बाहर भाग गये थे।

यहाँ उन्हें कुछ कष्ट हुआ, अन्न कम मिलता था और वह भी बड़ा मँहगा, रातको उन्होंने एक जगह विश्राम किया, अगले दिन चलते-चलते एक गाँव मिला, गाँवके बाहर एक झोपड़ा था मोहन थक गया था, बोला--मुझे प्यास लगी है, तुम चलो मैं इस झोपड़ेसे पानी पीकर अभी तुम्हें आ मिलता हूँ, अर्जुन बोला--अच्छा, पी आओ, मैं धीरे-धीरे चलता हूं।

झोपड़ेके पास जाकर मोहनने देखा कि उसके आगे धूपमें एक मनुष्य पड़ा है। मोहनने उससे पानी माँगा, उसने कोई उत्तर नहीं दिया, मोहनने समझा कि कोई रोगी है।

समीप जानेपर झोपड़ेके भीतरसे एक बालकके रोनेका शब्द सुनायी दिया, किवाड़ खुले हुए थे, वह भीतर चला गया।

४

देखा कि नंगे सिर केवल एक चादर ओढ़े एक बुढ़िया पृथ्वी पर बैठी है, पासमें भूखका मारा हुआ एक बालक बैठा "रोटी, रोटी" पुकार रहा है, चूल्हेके पास एक स्त्री पड़ी तड़प रही है, उसकी आँखें बन्द हैं, कण्ठ रुका हुआ है।

मोहनको देखकर बुढ़ियाने पूछा—तुम कौन हो, क्या मांगते हो, हमारे पास कुछ नहीं।

मोहन—मुझे प्यास लगी है, पानी माँगता हूँ।

बुढ़िया—यहाँ बर्तन है न कोई लानेवाला, यहाँ कुछ नहीं। जाओ अपनी राह लो।

मोहन—क्या तुममेंसे कोई उस स्त्रीकी सेवा नहीं कर सकता।

बुढ़िया—कोई नहीं। बाहर मेरा लड़का भूखसे मर रहा है, यहाँ हम भूखसे मर रहे हैं।

यह बातें हो ही रही थीं कि बाहरसे वह मनुष्य भी गिरता-पड़ता भीतर आया और बोला—

'काल और रोग दोनोंने हमें मार डाला, यह बालक कई दिनसे भूखा है क्या करूँ।' यह कहकर रोने लगा और उसकी हिचकी बँध गयी।

मोहनने तुरन्त अपने थैलेमेंसे रोटी निकाल कर उनके आगे रख दी।

बुढ़िया बोली—इनके कण्ठ सूख गये हैं, बाहरसे पानी ले आओ। मोहन बुढ़ियासे कुएँका पता पूछकर बाहर गया और पानी ले आया। सबने रोटी खाकर पानी पिया, परन्तु चूल्हेके पासवाली स्त्री पड़ी तड़पती रही। मोहन गाँवमें जाकर कुछ दाल, चावल मोल ले आया और खिचड़ी पकाकर सबको खिलायी।

५

तब बुढ़िया बोली—भाई क्या सुनाऊँ, निर्धन तो हम पहले ही थे। उसपर पड़ा अकाल, हमारी और भी दुर्गति हो गयी, पहले-पहल तो पड़ोसी अन्न उधार देते रहे, परन्तु वह क्या करते। वह आप भूखों मरने लगे, हमें कहाँसे देते।

मनुष्यने कहा—मैं मजूरी करने निकला, दो-तीन दिन तो कुछ मिला, फिर किसीने नौकर न रक्खा, बुढ़िया और लड़की भीख माँगने लगीं, अन्नका अकाल था, कोई भीख भी न देता था, बहुतेरे यत्न किये कुछ न बन सका, भूखके मारे घास खाने लगे, इसी कारण यह मेरी स्त्री चूल्हेके पास पड़ी तड़प रही है।

बुढ़िया—पहले कई दिनों तक तो मैं चल-फिरकर कुछ धंधा करती रही, परन्तु कहाँतक? भूख और रोगने जान ले ली। जो हाल है। तुम अपने नेत्रोंसे देख रहे हो।

उनकी बिथा सुनकर मोहनने विचारा कि आज रात यहीं रहना उचित है। साथीसे कल मिल लेंगे।

प्रातःकाल उठकर वह गाँवमें गया और खाने-पीनेकी जिन्स ले आया, घरमें कुछ न था; वह वहाँ ठहरकर इस तरह काम करने लगा कि मानो अपना ही घर है; दो-तीन दिन पीछे सब चलने-फिरने लगे और वह स्त्री भी उठ बैठी।

६

चौथे दिन एकादशी थी, मोहनने विचारा कि आज सन्ध्या-

को इन सबके साथ बैठकर फलाहार करके कल प्रातःकाल चल दूंगा।

वह गांवमें जाकर दूध, फल सब सामग्री लाकर बुढ़ियाको दे आप पूजा-पाठ करने मन्दिरमें चला गया। इन लोगोंने अपनी जमीन एक जमींदारके यहां गिरो रखकर अकालके समय अपना निर्वाह किया था। मोहन जब मन्दिर गया तब किसान युवक जमींदारके पास पहुंचा और विनय-पूर्वक बोला—

'चौधरीजी' इस समय रुपये देकर खेत छुड़ाना मेरे काबूके बाहर है, यदि आप इस चौमासेमें मुझे खेत बोनेकी आज्ञा दे दें तो मेहनत-मजदूरी करके आपका ऋण चुका दे सकता हूं। परंतु चौधरी कब मानता था। वह बोला-बिना रुपये दिये खेत नहीं बो सकते। जाओ अपना काम करो। वह निराश होकर घर लौट आया। इतनेमें मोहन भी पहुंच गया, जमींदारकी बात सुनकर वह मनमें विचार करने लगा कि जब यह जमींदार खेत नहीं बोने देता तो इन किसानोंकी प्राणरक्षा क्या करेगा। यदि मैं इन्हें इसी दशामें छोड़कर चल दिया तो यह सब कालके कौर बन जायेंगे, कल नहीं, परसों जाऊंगा।

मोहन अब बड़े दुबिधेमें पड़ा था। न रहते ही बनता था न जाते ही बनता था। रातको पड़ा-पड़ा सोचने लगा, यह तो अच्छा बखेड़ा फैला, पहले अन्न-पानी, अब खेत छुड़ाना, फिर गाय और बैलोंकी जोड़ी मोल लेना, मोहन तुम किस जंजालमें फँस गये?

जी चाहता था कि वह उन्हें ऐसे ही छोड़कर चल दे, परन्तु दया जाने न देती थी। सोचते-सोचते आंख लग गयी, स्वप्नमें देखता क्या है कि वह जाना चाहता है, किसीने उसे पकड़ लिया है। लौटकर देखा तो बालक रोटी मांग रहा है। वह तुरन्त उठ बैठा और मनमें कहने लगा—नहीं, अब मैं नहीं जाता, यह स्वप्न शिक्षा देता है कि मुझे इनका खेत छुड़ाना, गाय-बैल मोल लेना और सारा प्रबन्ध करके जाना उचित है।

वह प्रातःकाल उठकर जमींदारके पास गया और रुपये देकर उनका खेत छुड़ा दिया। तब एक किसानसे एक गाय और दो बैल मोल लेकर लौट रहा था कि राहमें स्त्रियोंको यों बातें करते सुना।

'बहन, पहले तो हम उसे साधारण मनुष्य जानते थे। वह केवल पानी पीने आया था, पर अब सुना है कि खेत छुड़ाने और गाय बैल मोल लेने गया है, ऐसे महात्माके दर्शन करने चाहिये। मोहन अपनी स्तुति सुनकर वहांसे टल गया। गाय बैल लेकर जब झोपड़ेपर पहुँचा तो किसानने पूछा—पिताजी यह कहांसे लाये।

मोहन—अमुक किसानसे यह बड़े सस्ते मिल गये हैं, जाओ पशुशालामें बांधकर इनके आगे कुछ भूसा डाल दो।

उसी रात जब सब सो गये, तो मोहनने चुपकेसे उठकर घरसे बाहर निकल बद्रीनारायणकी राह ली।

७

तीन मील चलकर मोहन एक वृक्षके नीचे बैठकर बटुआ निकाल रुपये गिनने लगा तो थोड़े ही रुपये बाकी थे। उसने सोचा—

इतने रुपयोंमें बद्रीनारायण पहुँचना असम्भव है, भीख मांगना पाप है, अर्जुन वहां अवश्य पहुंचेगा और आशा है कि मेरे नामपर कुछ चढ़ावा भी चढ़ा ही देगा, मैं तो अब इस जीवनमें यह यात्रा करनेका संकल्प पूरा नहीं कर सकता। अच्छा परमात्माकी इच्छा, वह बड़ा दयालु है। मुझ जैसे पापियोंको निस्सन्देह क्षमा कर देगा।

यह विचारकर गांवका चक्कर काटकर कि कोई देख न ले, वह घरकी ओर लौट पड़ा।

गांवमें पहुंच जानेपर घरवाले उसे देखकर अति प्रसन्न हुए और पूछने लगे, कि लौट क्यों आये? मोहनने यही उत्तर दिया कि अर्जुनसे साथ छूट गया और रुपये चोरी हो गये, इस कारण लौट आना पड़ा। घरमें कुशल क्षेम थी। कोई कष्ट न था।

मोहनका आना सुनकर अर्जुनके घरवाले उससे पूछने लगे कि अर्जुनको कहां छोड़ा। उनसे भी उसने वही कहा कि बद्रीनारायण पहुंचनेसे तीन दिन पहले मैं अर्जुनसे पिछड़ गया, रुपया किसीने चुरा लिया, बद्रीनारायण जाना असम्भव था, मुझे लौटना ही पड़ा।

सब लोग मोहनकी बुद्धिपर हँसने लगे कि बद्रीनारायण पहुंचा ही नहीं, रास्तेमें ही रुपये खो दिये। मोहन घरके धन्धेमें लग गया, बात बीत गयी।

८

अब उधरका हाल सुनिये—

मोहन जब पानी पीने चला गया तब थोड़ी दूर जाकर अर्जुन बैठ गया और साथीकी बाट देखने लगा, सन्ध्या हो गई पर मोहन न आया।

अर्जुन सोचने लगा, क्या हुआ साथी क्यों नहीं आया? मेरी आँखें लग गयी थीं, कहीं आगे न निकल गया हो, पर यहाँसे जाता तो क्या दिखायी नहीं देता? पीछे लौटकर देखूँ कहीं आगे न चला गया हो, फिर तो मिलना ही असम्भव है। आगे ही चलो, रातको चट्टीपर अवश्य भेंट हो जायगी।

रास्तेमें अर्जुनने कई मनुष्योंसे पूछा कि तुमने कोई नाटा, सांवलेरंगका आदमी देखा है? परन्तु कुछ पता न चला। रातको चट्टीपर भी मोहनसे भेंट न हुई। अगले दिन यह विचारकर कि वह देवप्रयागपर अवश्य मिल जायगा, वह आगे चल दिया।

रास्तेमें अर्जुनको एक साधु मिल गया। यह जगन्नाथकी यात्रा करके आया था, अब दूसरी बेर बद्रीनारायणके दर्शनको जा रहा था। रातको चट्टीमें वे दोनों इकट्ठे ही रहे और फिर एक साथ यात्रा करने लगे।

देवप्रयागमें पहुँचकर अर्जुनने मोहनके विषयमें पंडेसे बहुत कुछ पूछ-ताछ की, कुछ पता न चला। यहां सब यात्री एकत्र हो गये। देवप्रयागसे आगे चलकर सब लोग रातको एक चट्टीमें ठहरे। वहाँ मूसलाधार मेंह बरसने लगा, बिजलीकी कड़क, बादलकी गरजसे सब कांप गये, सारी रात जागते कटी. त्राहि-त्राहि करते दिन निकला।

अन्तको दोपहरके समय सब लोग बद्रीनारायण पहुँच गये। पण्डे देवप्रयागसे ही साथ हो लिये थे। बद्रीनारायणमें यह रीति है कि पहले दिन यात्रियोंको मन्दिरकी ओरसे भोजन कराया जाता है और उसी दिन यात्रियोंको अटका अथवा चढ़ावा बतला देना पड़ता है कि कौन कितना चढ़ायेगा, कम से कम १।) रुपया नियत है। उस समय तो सबने पण्डोंके घरोंमें जाकर विश्राम किया, दूसरे दिन प्रातःकाल उठकर दर्शन-परसनमें लग गये। अर्जुन और साधु एक ही स्थानमें टिके थे। सांझकी आरतीके दर्शन करके लौटकर जब घर आये तब साधु बोला कि मेरा तो किसीने रुपयेका बटुआ निकाल लिया।

९

अर्जुनके मनमें यह पाप उत्पन्न हुआ कि यह साधु झूठा है, किसीने इसका रुपया नहीं चुराया। इसके पास रुपया था ही नहीं।

लेकिन तुरन्त ही उसको पश्चात्ताप हुआ कि किसी पुरुषके

विषयमें ऐसी कल्पना करना महापाप है। उसने मनको बहुतेरा समझाया, परन्तु उसका ध्यान साधुमें ही लगा रहा। पवित्र स्थानमें रहनेपर भी चित्तकी मलिनता दूर नहीं हुई। इतनेमें शयनकी आरतीका घण्टा बजा, दोनों दर्शनार्थ मन्दिरमें चले गये। भीड़ बहुत थी, अर्जुन नेत्र मूंद कर भगवानकी स्तुति करने लगा, परन्तु हाथ बटुएपर था क्योंकि साधुके रुपये खोये जानेके संस्कार चित्तमें पड़े हुए थे, अन्तःकरणका शुद्ध हो जाना क्या कोई सहज बात है।

१०

स्तुति समाप्त करके नेत्र खोलकर अर्जुन जब भगवानके दर्शन करने लगा, तब देखता क्या है कि मूर्त्तिके अति समीप मोहन खड़ा है। ऐं मोहन! नहीं, नहीं, मोहन यहाँ कैसे पहुँच सकता है, सारे रास्ते तो ढूंढ़ता आया हूं।

मोहनको साष्टांग दण्डवत् करते देखकर अर्जुनको निश्चय हो गया कि मोहन ही है, स्यात् किसी दूसरी राहसे यहाँ आ पहुँचा है, चलो, अच्छा हुआ साथी तो मिल गया।

आरती समाप्त हो गयी, यात्री बाहर निकलने लगे। अर्जुन का हाथ बटुएपर था कि कोई रुपये न चुरा ले, वह मोहनको खोजने लगा, पर उसका कहीं पता नहीं चला।

दूसरे दिन प्रातःकाल मन्दिरमें जानेपर अर्जुनने फिर देखा कि मोहन हाथ जोड़े भगवानके सम्मुख खड़ा है। वह चाहता था

कि आगे बढ़कर मोहनको पकड़ लें, परन्तु ज्यों ही यह आगे बढ़ा मोहन लोप हो गया।

तीसरे दिन भी अर्जुनको वही दृश्य दिखाई दिया। उसने बिचारा कि चलकर द्वारपर खड़े हो जाओ, सब यात्री वहींसे निकलेंगे, वहीं मोहनको पकड़ लूंगा। अतएव उसने ऐसा ही किया लेकिन सब यात्री निकल गये मोहनका कहीं पता ही नहीं

एक सप्ताह बद्रीनारायण में निवास करके अर्जुन घरको लौट पड़ा।

११

राह चलते अर्जुनके चित्तमें वही पुराने घरके झमेले बार-बार आने लगे। सालभर बहुत होता है। इतने दिनोंमें घरकी दशा न जाने क्या हुई हो। 'कहावत है छाते लगे ६ मास और छिनमें होय उजाड़। कौन जाने लड़केने क्या कर छोड़ा हो? फसल कैसी हो? पशुओंका पालन-पोषण हुआ है कि नहीं? इत्यादि।

चलते-चलते अर्जुन जब उस झोपड़ेके पास पहुँचा जहाँ मोहन पानी पीने गया था तो भीतरसे एक लड़कीने आकर उसका कुरता पकड़ लिया और बोली—'बाबा' बाबा' भीतर चलो।'

अर्जुन कुरता छुड़ाकर जाना चाहता था कि भीतरसे एक स्त्री बोली—महाशय! भोजन करके रात्रिको यहीं विश्राम कीजिये कल चले जाना। वह अन्दर चला गया और सोचने लगा कि

मोहन यहीं पानी पीने आया था, स्यात् इन लोगोंसे उसका कुछ पता चल जाय।

स्त्रीने अर्जुनके हाथ-पैर धुलाकर भोजन परस दिया। अर्जुन उसको आशीष देने लगा।

स्त्री बोली—दादा, हम अतिथि सेवा करना क्या जानें, यह सब कुछ हमें एक यात्रीने सिखाया है, हम परमात्माको भूल गये थे। हमारी यह दशा हो गयी थी कि यदि वह बूढ़ा यात्री न आता तो हम सबके सब मर जाते, वह यहाँ पानी पीने आया था, हमारी दुर्दशा देखकर यहीं ठहर गया, हमारा खेत रेहन पड़ा था, वह छुड़ा दिया, गाय-बैल मोल ले दिये और सब सामग्री जुटाकर एक दिन न जाने कहाँ चला गया।

इतनेमें एक बुढ़िया आ गयी और यह बातें सुनकर बोल उठी—वह मनुष्य नहीं था साक्षात् देवता था। उसने हमारे ऊपर दया की, हमारा उद्धार कर दिया नहीं तो हम मर गये होते। वह पानी मांगने आया, मैंने कहा जाओ यहां पानी नहीं जब मैं वह बात स्मरण करती हूँ तो मेरा शरीर कांप उठता है।

छोटी लड़की बोल उठी—उसने अपनी कांवर खोली और उसमेंसे लोटा निकाला, कुएंकी ओर चला।

इस तरह सबके सब मोहनकी चर्चा करने लगे। रातको किसान भी आ पहुँचा और वही चर्चा करने लगा। निस्सन्देह उस यात्रीने हमें जीवन दान दिया। हम जान गये कि परमेश्वर क्या है और परोपकार क्या। वह हमें पशुओंसे मनुष्य बना गया।

अर्जुनने अब समझा कि बद्रीनारायणके मन्दिरमें मोहनके दिखायी देनेका कारण क्या था। उसे निश्चय हो गया कि मोहनकी यात्रा सफल हुई।

दूसरे दिन वह वहाँसे चल दिया।

कुछ दिनों पीछे अर्जुन घर पहुँच गया, लड़का शराब पीकर मस्त पड़ा था। घरका हाल सब गड़बड़ था। अर्जुन लड़केको डाँटने लगा। लड़केने कहा—तो यात्रापर जानेको किसने कहा था? न जाते। इसपर अर्जुनने उसके मुँहपर तमाचा मारा।

दूसरे दिन अर्जुन जब चौधरीसे मिलने जा रहा था तो राहमें मोहनकी स्त्री मिल गई।

स्त्री—भाईजी कुशलसे तो हो? बद्रीनारायण हो आये?

अर्जुन—हाँ, हो आया। मोहन मुझसे रास्तेमें बिछुड़ गये थे, कहो वह कुशलसे घर तो पहुँच गये।

स्त्री—उन्हें आये तो कई महीने हो गये। उनके बिना हम सब उदास रहा करते थे, लड़केको तो घर काटे खाता था। स्वामी बिना घर सूना होता है।

अर्जुन—घरमें हैं कि कहीं बाहर गये हैं?

स्त्री—नहीं, घरमें हैं।

अर्जुन भीतर चला गया और मोहनसे बोला—राम राम भैया मोहन, राम राम।

मोहन—राम राम। आओ भाई कहो, कहो दर्शन कर आये?

अर्जुन—हाँ, कर तो आया, पर मैं यह नहीं कह सकता कि यात्रा सफल हुई अथवा नहीं। लौटते समय मैं उस झोपड़ेमें ठहरा था जहाँ तुम पानी पीने गये थे।

मोहनने बात टाल दी और अर्जुन भी चुप हो गया, परन्तु उसे दृढ़ विश्वास हो गया कि उत्तम तीर्थयात्रा यही है कि पुरुष जीवनपर्यन्त प्राणीके साथ प्रेमभाव रखकर सदैव उपकारमें तत्पर रहे।

७

प्रेममें परमेश्वर

किसी गाँवमें मूरत नामका एक बनिया रहता था। सड़क पर उसकी छोटी-सी दूकान थी, वहाँ रहते उसे बहुत काल हो चुका था, इसलिये वहांके सब निवासियोंको भलीभाँति जानता था। वह बड़ा सदाचारी, सत्यवक्ता, व्यावहारिक और सुशील था। जो बात कहता उसे जरूर पूरा करता। कभी धेले भर भी कम न तौलता और न घीमें तेल मिलाकर बेचता। चीज अच्छी न होती तो ग्राहकसे साफ-साफ कह देता, धोखा न देता था।

चौथेपनमें वह भगवत-भजनका प्रेमी हो गया था। उसके और बालक तो पहले ही मर चुके थे, अन्तमें तीन सालका

बालक छोड़कर उसकी स्त्री भी जाती रही। पहले तो मूरतने सोचा, इसे ननिहाल भेज दूं। पर फिर उसे बालकसे प्रेम हो गया। वह स्वयं उसका पालन करने लगा। उसके जीवनका आधार अब यही बालक था। इसीके लिये वह रात-दिन काम किया करता था। लेकिन शायद सन्तानका सुख उसके भागमें लिखा ही न था।

पलपलाकर बीस वर्षकी अवस्थामें यह बालक भी यम-लोकको सिधार गया। अब मूरतके शोककी कोई सीमा न थी। उसका विश्वास हिल गया। सदैव परमात्माकी निन्दा कर यह कहा करता था कि परमेश्वर बड़ा निर्दयी और अन्यायी है, मारना मुझ बूढ़ेको चाहिये था, मार डाला युवकको। यहांतक कि उसने ठाकुरके मन्दिरमें जाना भी छोड़ दिया।

एक दिन उसका एक पुराना मित्र,जो आठ वर्षसे तीर्थयात्रा-को गया हुआ था, उससे मिलने आया। मूरत बोला—मित्र देखो, सर्वनाश हो गया। अब मेरा जीना अकारथ है, मैं नित्य परमात्मासे यही विनती करता हूँ कि वह मुझे जल्दी इस मृत-लोकसे उठा ले, मैं अब किस आशापर जीऊं।

मित्र-मूरत, ऐसा मत कहो, परमेश्वरकी इच्छाको हम नहीं जान सकते, वह जो करता है, ठीक करता है, पुत्रका मर जाना और तुम्हारा जीते रहना विधाताके वश है और कोई इसमें क्या कर सकता है। तुम्हारे शोकका मूल कारण यह है कि तुम अपने सुखमें सुख मानते हो। पराये सुखसे सुखी नहीं होते।

मूरत—तो मैं क्या करूँ।

मित्र—परमात्माकी निष्काम भक्ति करनेसे अन्तःकरण शुद्ध होता है। जब सब काम परमेश्वरको अर्पण करके जीवन व्यतीत करोगे तो तुम्हें परमानन्द प्राप्त होगा।

मूरत—चित्त स्थिर करनेका कोई उपाय तो बतलाइये।

मित्र—गीता, भक्तमालादि ग्रन्थोंका श्रवण, पठन, मनन किया करो। ये ग्रन्थ धर्म्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों फलोंके देनेवाले हैं, इनका पढ़ना आरम्भ कर दो, चित्तको बड़ी शान्ति प्राप्त होगी।

मूरतने इन ग्रन्थोंको पढ़ना आरम्भ किया। थोड़े ही दिनोंमें इन पुस्तकोंसे उसे इतना प्रेम हो गया कि रातको बारह-बारह बजेतक गीता आदि पढ़ता और उसके उपदेशोंपर विचार करता रहता था। पहले तो वह सोते समय छोटे पुत्रको स्मरण करके रोया करता था। अब सब भूल गया। सदा परमात्मामें लवलीन रहकर आनन्द पूर्वक अपना जीवन बिताने लगा। पहले इधर-उधर बैठकर हंसी ठट्ठा भी कर लिया करता था, पर अब वह समय व्यर्थ न खोता था या तो दूकानका काम करता था या रामायण पढ़ता था। तात्पर्य्य यह कि उसका जीवन सुधर गया।

एक रात रामायण पढ़ते-पढ़ते उसे ये चौपाइयां मिलीं—

एक पिताके विपुल कुमारा। होइ पृथक गुण शील अचारा॥
कोइ पण्डित कोइ तापस ज्ञाता। कोइ धनवन्त शूर कोइ दाता॥

कोइ सर्वज्ञ धर्मरत कोई। सबपर पितहि प्रीति सम होई॥
अखिल विश्व यह मम उपजाया। सबपर मोहि बराबर दाया॥

मूरत पुस्तक रखकर मनमें विचारने लगा कि जब ईश्वर सब प्राणियोंपर दया करते हैं तो क्या मुझे भी सभीपर दया न करनी चाहिये? तत्पश्चात् सुदामा और शबरीकी कथा पढ़कर उसके मनमें यह भाव उत्पन्न हुआ कि क्या मुझे भी भगवान्‌के दर्शन हो सकते हैं!

यह विचारते-विचारते उसकी आँख लग गयी। बाहरसे किसीने पुकारा --मूरत!

वह चौंककर उठ बैठा। देखा तो वहां कोई नहीं। इतनेमें फिर बाहर कोई बोला—मूरत! देख याद रख मैं कल तुझे दर्शन दूँगा।

यह सुनकर वह दूकानसे बाहर निकल आया। वह कौन था? वह चकित होकर कहने लगा, यह स्वप्न है, अथवा जागृति। कुछ पता न चला। वह दूकानके भीतर जाकर सो गया।

दूसरे दिन प्रातःकाल उठ, पूजा-पाठकर दूकानमें आ, भोजन बना, मूरत अपने काम-धन्धेमें लग गया, परन्तु उसे रातवाली बात नहीं भूलती थी।

रात्रिको पाला पड़नेके कारण सड़कपर बर्फके ढेर लग गये थे। मूरत अपनी धुनमें बैठा था, इतनेमें बर्फ हटानेको कोई कुली आया। मूरतने समझा कृष्णचन्द्र आते हैं, आँखें खोलकर देखा कि बूढ़ा लालू बर्फ हटाने आया है। हँसकर कहने लगा—

आवे बूढ़ा लालू और मैं समझूं कृष्ण भगवान, वाह री बुद्धि !

लालू बर्फ हटाने लगा, बूढ़ा आदमी था, शीतके कारण बर्फ न हटा सका, थककर बैठ गया और शीतके मारे कांपने लगा, मूरतने सोचा कि लालूको ठण्ड लग रही है, इसे आग तपा दूँ।

मूरत—लालू भैया, यहां आओ तुम्हें ठंड सता रही है। हाथ सेंक लो।

लालू दूकानपर आकर धन्यवाद करके हाथ सेंकने लगा।

मूरत—भाई, कोई चिन्ता न करो, बर्फ मैं हटा देता हूँ, तुम बूढ़े हो, ऐसा न हो कि ठण्ड खा जाओ।

लालू—तुम क्या किसीकी बाट देख रहे थे ?

मूरत—क्या कहूँ, कहते हुए लज्जा आती है, रात मैंने एक ऐसा स्वप्न देखा है कि उसे भूल नहीं सकता। भक्तमाल पढ़ते पढ़ते मेरी आँख लग गयी। बाहरसे किसीने पुकारा—'मूरत !' मैं उठकर बैठ गया, फिर शब्द हुआ 'मूरत ! मैं तुम्हें दर्शन दूँगा।' बाहर जाकर देखता हूँ तो वहां कोई नहीं। मैं भक्तमाल-मे सुदामा और शबरीके चरित्र पढ़कर यह जान चुका हूँ कि भगवान्ने प्रेमवश होकर किस प्रकार साधारण जीवोंको दर्शन दिये हैं, वही अभ्यास बना हुआ है, बैठा कृष्णचन्द्रकी राह देख रहा था कि तुम आ गये।

लालू—जब तुम्हें भगवान्से प्रेम है तो अवश्य दर्शन होंगे। तुमने आग न दी होती तो मैं मर ही गया था।

मूरत-वाह भाई लालू, यह बात ही क्या है, इस दूकानको अपना घर समझो, मैं सदैव तुम्हारी सेवा करनेको तैयार हूँ।

लालू धन्यवाद करके चल दिया, उसके पीछे दो सिपाही आये। उसके पीछे एक किसान आया, फिर एक रोटीवाला आया। सब अपनी राह चले गये। फिर एक स्त्री आई, वह फटे पुराने वस्त्र पहने हुई थी। उसकी गोदमें एक बालक था। दोनों शीतके मारे कांप रहे थे।

मूरत--माई, बाहर ठंडमें क्यों खड़ी हो, बालकको जाड़ा लग रहा है, भीतर आकर कपड़ा ओढ़ लो।

स्त्री भीतर आ गई, मूरतने उसे चूल्हेके पास बिठाया और बालकको मिठाई दी।

मूरत--माई तुम कौन हो?

स्त्री-मैं एक सिपाहीकी स्त्री हूँ, आठ महीनेसे न जाने कर्मचारियोंने मेरे पतिको कहाँ भेज दिया है, कुछ पता नहीं लगता, गर्भवती होनेपर मैं एक जगह रसोईका काम करनेपर नौकर थी, ज्योंही यह बालक उत्पन्न हुआ, उन्होंने इस भयसे कि दो जीवोंको अन्न देना पड़ेगा, मुझे निकाल दिया। तीन महीनेसे मारी-मारी फिरती हूं, कोई टहलनी नहीं रखता जो कुछ पास था, सब बेचकर खा गयी, इधर एक साहूकारिनके पास जाती हूँ स्यात् नौकर रख ले।

मूरत—तुम्हारे पास कोई ऊनी वस्त्र नहीं है?

स्त्री—वस्त्र कहांसे हो, छदाम भी तो पास नहीं।

मूरत—यह लो लोई, इसे ओढ़ लो।

स्त्री—भगवान तुम्हारा भला करे, तुमने बड़ी दया की, बालक शीतके मारे मरा जाता था।

मूरत—मैंने दया कुछ नहीं की, श्रीकृष्णचन्द्रकी इच्छा ही ऐसी है।

फिर मूरतने स्त्रीको रातवाला स्वप्न सुनाया।

स्त्री—क्या अचरज है, दर्शन होने कोई असम्भव तो नहीं।

स्त्रीके चले जानेपर एक सेव बेचनेवाली आयी, उसके सिरपर सेवोंकी टोकरी थी, और पीठपर अनाजकी गठरी। टोकरी धरतीपर रखकर खम्भेका सहारा ले वह विश्राम करने लगी कि एक बालक टोकरीमेंसे सेव उठाकर भागा, सेववालीने दौड़कर उसे पकड़ लिया और सिरके बाल खींचकर मारने लगी, बालक बोला—'मैंने सेव नहीं उठाया।' मूरतने उठकर बालकको छुड़ा दिया।

मूरत—माई, क्षमा कर, बालक है।

सेववाली—यह बालक बड़ा उत्पाती है, मैं इसे दण्ड दिये बिना कभी न छोड़ूँगी।

मूरत—माई, जाने दे, दया कर, मैं इसे समझा दूँगा, वह ऐसा काम फिर कभी नहीं करेगा।

बुढ़ियाने बालकको छोड़ दिया। वह भागना चाहता था कि मूरतने उसे रोका और कहा—बुढ़ियासे अपना अपराध क्षमा कराओ और प्रतिज्ञा करो कि फिर चोरी

नहीं करोगे, मैंने आप तुम्हें सेव उठाते देखा है, तुमने यह झूठ क्यों कहा।'

बालकने रोकर बुढ़ियासे अपना अपराध क्षमा कराया और प्रतिज्ञा की कि फिर झूठ नहीं बोलूँगा। इसपर मूरतने उसे एक सेब मोल ले दिया।

बुढ़िया-वाह वाह, क्या कहना है, इस प्रकार तो तुम गांव के समस्त बालकोंका सत्यानास कर डालोगे। यह अच्छी शिक्षा है! इस तरह तो सब लड़के शेर हो जायेंगे।

मूरत—माई, यह क्या कहती हो, बदला और दण्ड देना तो मनुष्योंका स्वभाव है, परमात्माका नहीं, वह दयालु है। यदि इस बालकको एक सेब चुरानेका कठिन दण्ड मिलना उचित है, तो हमको हमारे अनन्त पापोंका क्या दण्ड मिलना चाहिये, माई, सुनो, मै तुम्हें एक कहानी सुनाता हूं। एक कर्मचारीपर राजाके दस हजार रुपये आते थे। उसके बहुत विनय करनेपर राजाने उसे ऋण छोड़ दिया, उस कर्मचारीको भी अपने सेवकों-से सौ-सौ रुपये पावने थे, वह उन्हें बड़ा कष्ट देने लगा। उन्होंने बहुतेरा कहा कि हमारे पास पैसा नहीं, ऋण कहाँसे चुकावें, कर्मचारीने एक न सुनी। वह सब राजाके पास जाकर फरि-यादी हुए, राजाने उसी दम कर्मचारीको कठिन दण्ड दिया। तात्पर्य यह कि यदि हम जीवोंपर दया नहीं करेंगे तो परमात्मा भी हमपर दया नहीं करेगा।

बुढ़िया-यह सत्य है, परन्तु ऐसे बर्तावसे बालक बिगड़ जाते हैं।

मूरत—कदापि नहीं, बिगड़ते नहीं, वरंच सुधरते हैं।

बुढ़िया टोकरा उठाकर चलने लगी कि उसी बालकने आकर विनय की कि माई, यह टोकरा तुम्हारे घरतक मैं पहुंचा आता हूं।

रात्रि होनेपर मूरत भोजन करनेके बाद गीता पाठ कर रहा था कि उसकी आंख झपकी और उसने यह दृश्य देखा—

'मूरत ! मूरत !!'

मूरत—कौन हो।

'मैं—लालू।' इतना कहकर लालू हँसता हुआ चला गया।

फिर आवाज आयी—'मैं हूँ।' मूरत देखता है कि दिनवाली स्त्री लोई ओढ़े, बालकको गोदमें लिये सम्मुख आकर खड़ी हुई, हंसी और लोप हो गई, फिर शब्द सुनायी दिया—'मैं हूं।' देखा कि सेब बेचनेवाली और बालक हँसते-हँसते सामने आये और अन्तर्ध्यान हो गये।

मूरत उठकर बैठ गया, उसे विश्वास हो गया कि कृष्णचन्द्र के दर्शन हो गये, क्योंकि प्राणिमात्रपर दया करनी ही परमात्मा का दर्शन करना है।

———

८

मूर्ख सुमन्त

१

एक समय एक गाँवमें एक धनी किसान रहता था। उसके तीन पुत्र थे, विजय सिपाही, तारा वणिक, सुमन्त मूर्ख। गूँगी बहरी मनोरमा नामकी एक कुँवारी कन्या भी थी। विजय तो जाकर किसी राजाकी सेनामें भर्ती हो गया, ताराने किसी प्रसिद्ध नगरमें सौदागरीकी कोठी खोल ली। मूर्ख सुमन्त और मनोरमा माता-पिताके पास रहकर खेतीका काम करने लगे।

विजयने सेनामें ऊंची पदवी प्राप्त करके एक इलाका मोल ले लिया और एक मालेवर पुरुषकी कन्यासे विवाह कर लिया, उसकी आमदनीका कुछ ठिकाना न था, परन्तु फिर भी कुछ न बचता था।

विजय एक समय इलाकेपर पहुँचकर किसानोंसे बटाई माँगने लगा। किसान बोले कि महाराज, हमारे पास बैल हैं न हल न बीज। बटाई कहाँसे दें, पहले यह सामग्री जमा कर दो, फिर आपको इलाकेसे बहुत अच्छी आमदनी होने लगेगी। यह सुनकर विजय अपने पिताके पास पहुँचा और बोला—पिताजी इतना धनी होनेपर भी आपने मेरी कुछ सहायता नहीं की, मैंने

सेनामें काम किया और राजाको प्रसन्नकर एक इलाका मोल लिया है। उसके प्रबन्धके लिये धनकी जरूरत है, मैं तीसरे भागका हिस्सेदार हूँ, इसलिये मेरा भाग मुझे दे दीजिये कि अपना इलाका ठीक करूँ।

पिता—भला मैं पूछता हूँ कि तुमने नौकरीपर रहते हुए कभी कुछ घर भी भेजा? सब काम सुमन्त करता है, मेरी समझमें तुम्हें तीसरा भाग देना सुमन्त और मनोरमाके साथ अन्याय करना है।

विजय—सुमन्त तो मूर्ख है, मनोरमा गूंगी और बहरी है, उन्हें धनका क्या काम है, वह धनसे क्या लाभ उठा सकते हैं।

पिता—अच्छा, सुमन्तसे पूछ लूं।

पिताके पूछनेपर सुमन्तने प्रसन्नतापूर्वक यही कहा कि विजयको उसका तीसरा भाग दे देना चाहिये।

विजय तीसरा भाग लेकर राजाके पास चला गया।

ताराने भी व्यापारमें बहुत धन संचय करके एक धनी पुरुषकी पुत्रीसे विवाह किया। परन्तु धनकी लालसा फिर भी बनी रही। वह भी पिताके पास आकर तीसरा भाग माँगने लगा।

पिता—मैं तुम्हें एक कौड़ी भी देना नहीं चाहता। विचारो तो तुमने सौदागरीकी कोठी खोलकर इतना धन इकट्ठा किया, कभी पिताको भी पूछा? यहाँ जो कुछ है सब सुमन्तकी कमाईका फल है। उसका पेट काटकर तुम्हें दे देना अनुचित है।

तारा—मूर्ख सुमन्तको धन लेकर करना ही क्या है; क्या ? आपके विचारमें सुमन्त जैसे मूर्खसे कोई पुरुष भी अपनी कन्या विवाह देगा ? कदापि नहीं। रही मनोरमा, वह गूंगी और बहरी है। मैं सुमन्तसे पूछ लेता हूँ कि वह क्या कहता है।

ताराके पूछनेपर सुमन्तने तीसरा भाग देना तुरन्त स्वीकार कर लिया और तारा भी अपना भाग लेकर चम्पत हुआ। सुमन्तके पास जो कुछ सामान बच रहा उसीसे खेतीका काम करके माता-पिताकी सेवा करने लगा।

२

यह कौतुक देखकर अधर्म्म बड़ा दुःखी हुआ कि भाइयोंने प्रीतिसहित धन बांट लिया। जूती, पैजार कुछ भी न हुई। तीन भूतोंको बुलाकर कहने लगा—देखो, विजय, तारा, सुमन्त तीन भाई हैं। धन बांटते समय उन्हें आपसमें झगड़ा करना उचित था, परन्तु मूर्ख सुमन्तने सब काम बिगाड़ डाला। उसीकी मूढ़तासे तीनों भाई आनन्दसे जीवन व्यतीत कर रहे हैं, तुम जाओ और एक-एकके पीछे पड़कर ऐसा उत्पात मचाओ कि सबके सब आपसमें लड़ मरें। देखना बड़ी चतुराईसे काम करना।

तीनों भूत—धर्मावतार ! जो तीनोंको आपसमें लड़ा लड़ाकर मार न डाला तो हमारा नाम अधर्म्मराजके भूत ही नहीं।

अधर्म—वाह वाह, शाबास। जाओ, मगर जो बिना काम पूरा किये लौटे तो खाल खींच लूंगा। इतना समझ लो।

तीनों भूत चलकर एक झीलके किनारे बैठ गये और यह निश्चय किया कि कौन-कौन किस-किस भाईके पीछे लगे और साथ ही यह नियम बांध दिया कि जिस भूतका कार्य्य पहले समाप्त हो जाय वह तुरन्त दूसरे भूतोंको सहायता करे।

कुछ दिन पीछे वह तीनों फिर उसी झीलपर जमा हुए और अपनी अपनी कथा कहने लगे।

पहला—भाई साहब, मेरा काम तो बन गया, विजय भाग कर पिताकी शरण लेनेके सिवाय अब और कुछ नहीं कर सकता।

दूसरा—बतओो तो उसे कैसे फांसा ?

पहला—मैंने विजयको इतना घमंडो बना दिया कि वह एक दिन राजासे कहने लगा कि महाराज यदि आप मुझे सेनापति-की पदवीपर नियत कर दें तो मैं आपको सारे जगत्का चक्रवर्ती राजा बना दूं। राजाने उसे तुरन्त सेनापति बनाकर आज्ञा दी कि लंकाके राजाको पराजय कर दो। बस फिर क्या था, लगी युद्धकी तैयारियां होने। लड़ाई छिड़नेसे एक रात पहले मैंने विजयका सारा बारूद गीला कर दिया। उधर लंकाके राजाके लिये घासके अन-गिनत सिपाही बना दिये। दोनों सेनाओंके सम्मुख होनेपर विजय-के सिपाहियोंने घासके बने हुए अनन्त योद्धाओंको देखा तो उनके छक्के छूट गये। विजयने गोले फेंकनेका हुकम दिया। बारूद गीली हो ही चुकी थी, तोपें आग कहांसे देतीं। फल यह हुआ कि विजयकी सेनाको भागना ही पड़ा। राजाने क्रोध करके उसका बड़ा अपमान किया। उसका इलाका छिन गया, इस समय

वह बन्दीखानेमें कैद है। बस, केवल यह काम शेष रह गया है कि उसे बन्दीखानेसे निकालकर उसके पिताके घर पहुंचा दूं फिर छुट्टी है। जो चाहे उसकी सहायताके लिये तैयार हूँ।'

दूसरा—मेरा कार्य्य भी सिद्ध हो गया है। तुम्हारी सहायता-की कोई आवश्यकता नहीं। ताराको पहले तो मोटा करके आलसी बनाया। फिर इतना लोभी बना दिया कि वह संसार-भरका माल ले लेकर कोठी भरने लगा। उसकी खरीद अभीतक जारी है। उसका सब धन खर्च हो गया और अब उधार रुपया लेकर माल ले रहा है। एक सप्ताहमें मैं उसका सब माल सत्या-नास कर दूंगा और तब उसे सिवाय पिताकी शरण जानेके और कोई उपाय न रहेगा।

तीसरा—भाई, हमारा हाल तो बड़ा पतला है। पहले मैंने सुमन्तके पीनेके पानीमें पेटमें दर्द उत्पन्न करनेवाली बूटी मिलाई, फिर खेतमें जाकर धरतीको ऐसा कड़ा कर दिया कि उसपर हल न चल सके। मैं समझता था कि पीड़ाके कारण वह खेत बाहने न आयगा, परन्तु वह तो बड़ा ही मूढ़ है, आया और हल चलाने लगा। हाय हाय करता जाता था, परन्तु हल हाथसे न छोड़ता था। मैंने हल तोड़ दिया, वह घर जाकर दूसरा ले आया। मैंने धरतीमें घुसकर हलकी अनी पकड़ ली, उसने ऐसा धक्का मारा कि मेरे हाथ कटते-कटते बचे। उसने केवल एक टुकड़ेके सिवाय बाकी सारा खेत बाह लिया है। यदि तुम मेरी सहायता न करोगे तो सारा खेल बिगड़ जायगा, क्योंकि यदि वह इस

प्रकार खेतोंको बाहता और बोता रहा तो उसके भाई भूखे नहीं मर सकते, फिर बैर-भाव किस भांति उत्पन्न हो सकता है। वह सुखपूर्वक उनका पालन-पोषण करता रहेगा।

पहला—क्या हुआ, कुछ चिंता नहीं, देखा जायगा, घबराओ नहीं, मैं कल अवश्य तुम्हारे पास आऊंगा।

३

सुमन्त हल चला रहा था, अचानक उसका पैर एक झाड़ीमें फँस गया, उसे अचम्भा हुआ कि खेतमें तो कोई झाड़ी न थी, यह कहांसे आयी। बात यह थी कि भूतने झाड़ी बनकर सुमन्तकी टांग पकड़ ली थी।

सुमन्तने हाथ डालकर झाड़ीको जड़से उखाड़ डाला, देखा तो उसमें काले रंगका एक भूत बैठा हुआ है।

सुमन्त—(गला दबाकर) बोलो, दबाऊं गला।

भूत—मुझे छोड़ दो, मुझसे जो कहोगे वही करूंगा।

सुमन्त—तुम क्या कर सकते हो?

भूत—सब कुछ।

सुमन्त—मेरे पेटमें दर्द हो रहा है उसे अच्छा कर दो।

भूत—बहुत अच्छा।

भूतने धरतीमेंसे तीन बूटियां लाकर एक बूटी सुमन्तको खिला दी, दर्द बन्द हो गया और दूसरी दो बूटियां सुमन्तको देकर बोला—जिसको एक बूटी खिला दोगे उसके सब रोग

तत्काल दूर हो जायेंगे। अब मुझे जानेकी आज्ञा दो। मैं फिर कभी न आऊँगा।

सुमन्त—हाँ जाओ, परमात्मा तुम्हारा भला करे।

परमात्माका नाम सुनते ही भूत रसातल चला गया। केवल वहाँ एक छेद रह गया।

सुमन्तने दूसरी दो बूटियाँ पगड़ीमें बांध लीं और घर चला आया, देखा कि भाई विजय और उसकी स्त्री आयी हुई है। वह बड़ा प्रसन्न हुआ।

विजय बोला—भाई सुमन्त, जबतक मुझे कोई नौकरी न मिले, तुम हम दोनोंको यहाँ रख सकते हो?

सुमन्त—क्यों नहीं, आपका घर है। आप आनन्दसे रहिये।

भोजन करते समय विजयकी सभ्य स्त्री पतिसे बोली कि सुमन्तके शरीरसे मुझे दुर्गन्ध आती है, इसे बाहर भेज दो।

विजय—सुमन्त, मेरी स्त्री कहती है कि तुम्हारे शरीरसे दुर्गन्ध आती है। पास बैठा नहीं जाता, तुम बाहर जाकर भोजन कर लो।

सुमन्त—बहुत अच्छा, तुम्हें कष्ट न हो।

४

दूसरे दिन विजयवाला भूत खेतमें आकर सुमन्तवाले भूतको खोजने लगा। कहीं पता नहीं मिला, खेतके एक कोनेपर उसे एक छेद दिखाई दिया।

भूत जान गया कि साथी काम आया और खेत जुत चुका। क्या हुआ; चरावरमें चलकर इस मूर्खको देखता हूँ। सुमन्तके चरावरमें पहुँचकर उसने इतना पानी छोड़ा कि सारी घास उसमें डूब गयी।

इतनेमें सुमन्त वहाँ आकर हँसुवेसे घास काटने लगा। हँसुवेका मुँह मुड़ गया, घास किसी तरह न कटती थी। सुमन्तने सोचा कि यहाँ वृथा समय गँवानेसे क्या लाभ होगा, पहले हँसुआ तेज करनी चाहिये। रहा काम, यह तो मेरा धर्म है। एक सप्ताह क्यों न लग जाय, मैं घास काटे बिना यहाँसे चला जाऊँ तो मेरा नाम सुमन्त नहीं।

सुमन्त घर जाकर हँसुवा ठीक कर लाया। भूतने हँसुवेको पकड़नेका साहस किया, परन्तु पकड़ न सका, क्योंकि सुमन्त लगातार घास काटे जाता था। जब केवल घासका एक छोटा-सा टुकड़ा शेष रह गया तो भूत भागकर उसमें जा छिपा।

सुमन्त कब रुकनेवाला था, वह वहाँ पहुँचकर घास काटने लगा, भूत वहाँसे भागा, भागते समय उसकी पूंछ कट गयी।

भूतने विचारा कि चलो जयीके खेतोंमें चलें, देखें, जयी कैसे काटता है, वहाँ जाकर देखा तो जयी कटी पड़ी है।

भूतने विचार किया कि यह मूर्ख बड़ा ही चांडाल है, दिन निकलने नहीं दिया। रात-रातमें सारी जयी काट डाली, यह दुष्ट तो रातको भी काममें लगा रहता है, अच्छा, अच्छा, खलिहानमें चलकर इसका भूसा सड़ाता हूँ।

भूत भागकर चरीमें छिप गया। सुमन्त गाड़ी लेकर चरी लादनेके लिये खलिहानमें पहुँचा। एक एक पूली उठाकर गाड़ीमें रखने लगा कि एक पूलीमेंसे भूत निकल पड़ा।

सुमन्त—अरे दुष्ट, तू फिर आ गया।

भूत—मैं दूसरा हूँ, पहला मेरा भाई था।

सुमन्त—कोई हो, अब जाने न पाओगे।

भूत—कृपा करके मुझे छोड़ दीजिये, जो आप आज्ञा दें वही करनेको तैयार हूँ।

सुमन्त—तुम क्या-क्या कर सकते हो?

भूत—मैं भूसेके सिपाही बना सकता हूँ।

सुमन्त—सिपाही क्या काम देते हैं?

भूत—तुम उनसे जो चाहो सो काम करा सकते हो।

सुमन्त—वह गाना गा सकते हैं?

भूत—क्यों नहीं।

सुमन्त—अच्छा, बनाओ।

भूत—तुम चरीके पूले लेकर यह मन्त्र पढ़ो—हे पूले, मेरी आज्ञासे सिपाही बन जा और फिर पूलेको धरतीपर मारो सिपाही बन जायगा।

सुमन्तने वैसा ही किया, पूले सिपाही बनने लगे। यहाँतक कि पूरी पलटन बन गयी और मारू बाजा बजने लगा।

सुमन्त—(हँसकर) वाह भाई, वाह, यह तो खूब तमाशा है, इसे देखकर बालक बहुत प्रसन्न होंगे।

भूत—आज्ञा है, अब जाऊं ?

सुमन्त—नहीं, अभी नहीं, मुझे फिर पूले बना देनेका मन्त्र भी सिखा दो, नहीं तो हमारा यह सारा अनाज ही चट-कर जायेंगे।

भूत—बस, यह मन्त्र पढ़ो—'हे सिपाही, मेरे सेवक, मेरी आज्ञासे फिर पूले बन जाओ, तब यह सब फिर पूले बन जायेंगे।

सुमन्तने मन्त्र पढ़ा, सबके सब पूले बन गये।

भूत—अब जाऊँ ? आज्ञा है ?

सुमन्त—हाँ जाओ, भगवान् तुमपर दया करे।

भगवान्का नाम सुनते ही भूत धरतीमें समा गया, पहलेकी भांति एक छेद शेष रह गया।

सुमन्त जब घर लौटा तो देखा कि स्त्री सहित मंझला भाई तारा आया हुआ है। वह सुमन्तसे बोला—भाई सुमन्त, लेहने-दारोंके डरसे भागकर तुम्हारे पास आये हैं। जबतक कोई रोजगार न करें, यहाँ ठहर सकते हैं कि नहीं ?

सुमन्त—क्यों नहीं, घर किसका और मैं किसका ? आप बड़े आनन्दसे रहिये।

भोजन परसे जानेपर ताराकी स्त्रीने तारासे कहा कि मैं गँवारके पास बैठकर भोजन नहीं कर सकती।

तारा—भाई सुमन्त, मेरी स्त्री तुमसे घिन करती है। बाहर जाकर भोजन कर लो।

सुमन्त—अच्छी बात है। आपका चित्त प्रसन्न चाहिये।

५

दूसरे दिन तारावाला भूत सुमन्तको दुःख देनेके वास्ते खेतमें पहुंचकर साथियोंको ढूढ़ने लगा। पर किसीका पता न चला, खोजते-खोजते एक छेद तो खेतके कोनेमें मिला, दूसरा खलिहानमें। उसे मालूम हो गया कि दोनोंके दोनों यमलोकको जा पहुँचे। अब मुझीसे इस मूर्खकी बनेगी, देखूँ कहाँ बचकर जाता है।

अतएव वह सुमन्तकी खोज लगाने लगा। सुमन्त उस समय मकान बनानेके वास्ते जंगलमें वृक्ष काट रहा था। दोनों भाइयोंके आ जानेसे घरमें आदमियोंके लिये जगह न थी। भाई यह चाहते थे कि अलग-अलग मकानमें रहें, इसलिए मकान बनाना आवश्यक हो गया था।

भूत वृक्षपर चढ़कर शाखाओंमें बैठ सुमन्तके काममें विघ्न डालने लगा। सुमन्त कब टलनेवाला था, सन्ध्या होते-होते उसने कई वृक्ष काट डाले, अन्तमें उसने उस वृक्षको भी काट दिया जिसपर भूत चढ़ा बैठा था। टहनियाँ कटते समय भूत उसके हाथमें आ गया।

सुमन्त—हैं! तुम फिर आ गए।

भूत—नहीं नहीं, मैं तीसरा हूँ। पहले दोनों मेरे भाई थे।

सुमन्त—कुछ भी हो अब मैं नहीं छोड़नेका।

भूत—तुम जो कुछ कहोगे वही करूंगा। कृपा करके मुझे जानसे न मारिये।

सुमन्त—तुम क्या कर सकते हो ?

भूत—मैं वृक्षके पत्तोंसे सोना बना सकता हूँ।

सुमन्त—अच्छा, बनाओ।

भूतने वृक्षके सूखे पत्ते लेकर हाथसे मले और मन्त्र पढ़कर सोना बना दिया। सुमन्तने मन्त्र सीख लिया और सोना देखकर प्रसन्न हुआ।

सुमन्त—भाई भूत, इसका रंग तो बड़ा सुन्दर है, बालकोंके खिलौने इसके अच्छे बन सकते हैं।

भूत—अब आज्ञा है जाऊँ ?

सुमन्त—जाओ, परमेश्वर तुमपर अनुग्रह करे।

परमेश्वरका नाम सुनते ही यह भूत भी भूमिमें समा गया, केवल छेद ही छेद बाकी रह गया।

६

घर बनाकर तीनों भाई सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने लगे। जन्माष्टमीके त्यौहारपर सुमन्तने भाइयोंको भोजन करनेको नेवता भेजा। उन्होंने उत्तर दिया कि हम गँवारोंके साथ प्रीति-भोजन नहीं कर सकते।

सुमन्तने इसपर कुछ बुरा नहीं माना, गांवके स्त्री-पुरुष, बालक और बालिकाओंको एकत्र करके भोजन करने लगा।

भोजन करनेके उपरान्त सुमन्त बोला—क्यों भाई मित्रो, एक तमाशा दिखलाऊँ ?

सब—हाँ, दिखलाइये।

सुमन्तने सूखे पत्ते लेकर सोनेका एक टोकरा भर दिया और लोगोंकी ओर फेंकने लगा। किसान लोग सोनेके टुकड़े लूटने लगे। आपसमें इतना धक्कमधक्का हुआ कि एक बेचारी बुढ़िया कुचल गयी।

सुमन्तने सबको धिक्कारकर कहा तुम लोगोंने बूढ़ी माताको क्यों कुचल दिया। शान्त हो जाओ तो और सोना दूं। यह कहकर टोकरीका सब सोना लुटा दिया। फिर सुमन्तने स्त्रियोंसे कहा कि कुछ गाओ, स्त्रियाँ गाने लगीं।

सुमन्त—हूँ, तुम्हें गाना नहीं आता।

स्त्रियाँ—हमें तो ऐसा ही आता है, और अच्छा सुनना हो तो किसी औरको बुला लो।

सुमन्तने तुरन्त ही भूसेके सिपाही बनाकर पलटन खड़ी कर दी, और बैंड बजने लगा, गँवार लोगोंको बड़ा ही अचम्भा हुआ। सिपाही बड़ी देरतक गाते रहे; तब सुमन्तने उनको फिर भूसा बना दिया और सब लोग अपने-अपने घर चले गये।

७

प्रातःकाल विजयने यह चर्चा सुनी तो हाँफता-हाँफता सुमन्तके पास आया और बोला—भाई सुमन्त, यह सिपाही तुमने किस रीतिसे बनाये थे?

सुमन्त—क्यों आपको क्या काम है?

विजय—कामकी एक ही कहो। सिपाहियोंकी सहायतासे तो हम राज्य जीत सकते हैं।

सुमन्त—यह बात है! तुमने पहले क्यों नहीं कहा? खलिहानमें चलिये, वहाँ चलकर जितने कहो उतने सिपाही बना देता हूँ, परन्तु शर्त यह है कि उन्हें तुरन्त ही यहाँसे बाहर ले जाना, नहीं तो वह गाँवका गाँव चट कर जायँगे।

अतएव खलिहानमें जाकर उसने कई पलटनें बना दीं और पूछा—बस कि और?

विजय—(प्रसन्न होकर) बस, बहुत है, तुमने बड़ा एहसान किया।

सुमन्त—एहसानकी कौनसी बात है, अबके वर्ष भूसा बहुत हुआ है, यदि कभी टोटा पड़ जाय तो फिर आ जाना, फिर सिपाही बना दूंगा।

अब विजय धरतीपर पाँव नहीं रखता था, सेना लेकर उसने तुरन्त युद्ध करनेके वास्ते प्रस्थान कर दिया।

विजयके जाते ही तारा भी आ पहुंचा और सुमंतसे बोला—भाई साहब, मैंने सुना है कि तुम सोना बना लेते हो, हाय हाय! यदि थोड़ा सा सोना मुझे मिल जाय तो मैं सारे संसारका धन खींच लूं।

सुमन्त—अच्छा, सोनेमें यह गुण है! तुमने पहले क्यों नहीं कहा। बतलाओ कितना सोना बना दूं?

तारा—तीन टोकरे बना दो।

सुमन्तने तीन टोकरे सोना बना दिया।

तारा आपने बड़ी दया की।

सुमन्त—दयाकी कौन बात है, जंगलमें पत्ते बहुत हैं। यदि कमी हो जाय तो फिर आ जाना, जितना सोना मांगोगे उतना ही बना दूँगा।

सोना लेकर तारा व्यापार करने चल दिया।

विजयने सेनाकी सहायतासे एक बड़ा भारी राज्य विजय कर लिया। उधर ताराके धनका भी वारापार न रहा। एक दिन दोनोंमें मुलाकात हुई। बातें होने लगीं।

विजय—भाई तारा, मैंने तो अपना राज्य अलग बना लिया और अब चैन करता हूँ, परन्तु इन सिपाहियोंका पेट कहाँसे भरूं, रुपयेकी त्रुटि है, सदैव यही चिन्ता बनी रहती है।

तारा—तो क्या आप समझते हैं कि मुझे चिन्ता नहीं है? मेरे धनकी गिनती नहीं, पर उसकी रखवाली करनेको सिपाही नहीं मिलते। बड़ी विपत्तिमें पड़ा हूँ।

विजय—चलिये, सुमन्त मूर्खके पास चलें। मैं तुम्हारे वास्ते थोड़े-से सिपाही बनवा दूँ और तुम मेरे लिये थोड़-सा सोना बनवा दो।

तारा—हाँ ठीक है, चलिये।

दोनों भाई सुमन्तके पास पहुँचे।

विजय—भाई सुमन्त, मेरी सेनामें कुछ कमी है, कुछ सिपाही और बना दो।

सुमन्त—नहीं, अब मैं और सिपाही नहीं बनाता।

विजय—पर तुमने वचन जो दिया था, नहीं तो मैं आता ही क्यों? कारण क्या है? क्यों नहीं बनाते?

सुमन्त—कारण यह कि तुम्हारे सिपाहियोंने एक मनुष्यको मार डाला। कल जब मैं अपना खेत जोत रहा था, तो पाससे एक अरथी देखी। मैंने पूछा, कौन मर गया। एक स्त्रीने कहा कि विजयके सिपाहियोंने युद्धमें मेरे पतिको मार डाला। मैं तो आजतक केवल यह समझता था कि सिपाही बैंड बजाया करते हैं, परन्तु वह तो मनुष्योंकी जान मारने लगे। ऐसे सिपाही बनानेसे तो संसारका नाश हो जायगा।

तारा—अच्छा, यदि सिपाही नहीं बनाते, तो मेरे लिये सोना तो थोड़ा-सा और बना दो। तुमने वचन दिया था कि कमी हो जानेपर फिर बना दूँगा।

सुमन्त—हाँ, वचन तो दिया था, पर अब मैं सोना भी न बनाऊँगा।

तारा—यह क्यों?

सुमन्त—इसलिये कि तुम्हारे सोनेने बसन्तकी लड़कीसे उसकी गाय छीन ली।

तारा—यह कैसे?

सुमन्त—बसन्तकी पुत्रीके पास एक गाय थी। बालक उसका दूध पीते थे। कल वह बालक मेरे पास दूध माँगने आये। मैंने पूछा कि तुम्हारी गाय कहाँ गयी तो कहने लगे कि ताराका

एक सेवक आकर तीन टुकड़े सोनेके देकर हमारी गाय ले गया। मैं तो यह जानता था कि सोना बनवा-बनवाकर तुम बालकोंको बहलाया करोगे, परन्तु तुमने तो उनकी गाय ही छीन ली, बस सोना अब नहीं बन सकता।

दोनों भाई निराश होकर लौट पड़े। राहमें यह समझौता हुआ कि विजय ताराको कुछ सिपाही दे दे और तारा विजयको कुछ सोना। कुछ दिन बाद धनके बलसे ताराने भी एक राज्य मोल ले लिया और दोनों भाई राजा बनकर आनन्द करने लगे।

८

सुमन्त गूँगी बहनके सहित खेतीका काम करते हुए अपने माता-पिताकी सेवा करने लगा। एक दिन उसकी कुतिया बीमार हो गयी, उसने तत्काल पहले भूतकी दी हुई बूटी उसे खिला दी, वह निरोग होकर खेलने-कूदने लगी। यह हाल देखकर माता-पिताने इसका व्यौरा पूछा। सुमन्तने कहा कि मुझे एक भूतने दो बूटियाँ दी थीं। वह सब प्रकारके रोगोंको दूर कर सकती हैं। उनमेंसे एक बूटी मैंने इस कुतियाको खिला दी।

उसी समय दैवगतिसे वहाँके राजाकी कन्या बीमार हो गयी राजाने यह डौंडी पिटवायी थी कि जो कोई पुरुष मेरी कन्याको अच्छा कर देगा, उसके साथ उसका विवाह कर दिया जायगा। माता-पिताने सुमन्तसे कहा कि यह तो बड़ा अच्छा अवसर है। तुम्हारे पास एक बूटी बची है। जाकर राजाकी कन्याको अच्छा कर दो और उम्रभर चैन करो।

सुमन्त जानेपर राजी हो गया। बाहर आनेपर देखा कि द्वारपर एक कंगाल बुढ़िया खड़ी है।

बुढ़िया—सुमन्त, मैंने सुना है कि तुम रोगियोंका रोग दूर कर सकते हो। मैं रोगके हाथों बहुत दिनोंसे कष्ट भोग रही हूँ, पेटकी रोटियां मिलती ही नहीं, दवा कहांसे करूं। तुम मुझे कोई दवा दे दो तो बड़ा यश हो।

सुमन्त तो दयाका भाण्डार था, बूटी निकालकर तुरन्त बुढ़ियाको खिला दी। वह चंगी होकर उसे आशीष देती हुई घरको चली गई।

माता-पिता यह हाल सुनकर बड़े दुःखी हुए और कहने लगे कि सुमन्त तुम बड़े मूर्ख हो। कहां राज्य-कन्या और कहां यह कंगाल बुढ़िया, भला इस बुढ़ियाको चंगा करनेसे तुम्हें क्या मिला।

सुमन्त—मुझे राज-कन्याके रोग दूर करनेकी भी चिंता है वहां भी जाता हूँ।

माता—बूटी तो है ही नहीं, जाकर क्या करोगे।

सुमन्त - कुछ चिंता नहीं, देखो तो सही क्या होता है।

समदर्शी पुरुष देवरूप होता है। सुमन्तके राजमहलपर पहुँचते ही राज-कन्या निरोग हो गयी। राजाने अति प्रसन्न होकर उसका, विवाह सुमन्तके साथ कर दिया।

इसके कुछ काल पीछे राजाका देहान्त हो गया। पुत्र न होनेके कारण वहांका राज्य सुमन्तको मिल गया।

अब तीनों भाई राज-पदवीपर पहुंच गये।

६

विजयका प्रभाव सूर्य्यकी भांति चमकने लगा। उसने भूसेके सिपाहियोंसे सचमुचके सिपाही बना दिये। राज्य भरमें यह हुक्म जारी कर दिया कि दस घर पीछे एक मनुष्य सेनामें भरती किया जाय औ कवायद परेट कराकर सेनाको अस्त्र-शस्त्र विद्यामें ऐसा चतुर कर दिया कि जब कोई शत्रु सामना करता तो वह तुरन्त उसका विध्वंस कर देता। सारे राजा उसके भयसे कांपने लगे, वह अखण्ड राज करने लगा।

तारा बड़ा बुद्धिमान था। उसने धनसंचय करनेके निमित्त मनुष्यों, घोड़ों, गाड़ियों, जूतों, जुराबों, वस्त्रों, तात्पर्य यह कि, जहां तक हो सका सब व्यावहारिक वस्तुओंपर कर बैठा दिया। धन रखनेको लोहेकी सलाखोंवाले पक्के खज़ाने बना दिये और चोरी-चमारी, लूट-मार, धनसम्बन्धी झगड़े बन्द करनेके निमित्त अनगिनत कानून जारी कर दिये। संसारमें रुपया ही सब कुछ है, रुपयेकी भूखसे सब लोग आकर उसकी सेवा करने लगे।

अब सुमन्त मूर्खकी करतून सुनिये, ससुरका क्रिया-कर्म्म करके उसने राजसी रत्नजटित वस्त्र तो उतारकर, सन्दूकोंमें बन्द कर अलग धर दिये। मोटे-झोटे कपड़े पहन लिये और किसानोंकी भांति खेतीका काम करनेका विचार किया। बैठे-बैठे उसका जी ऊबता था।

भोजन न पचता, बदनमें चरबी बढ़ने लगी, नींद और भूख

दोनों जाती रही, उसने अपने गूँगी बहन और माता-पिता को अपने पास बुला लिया और ठीक पहलेकी भांति खेतीका काम करना आरम्भ कर दिया।

मन्त्री—आप तो राजा हैं, आप यह क्या काम करते हैं।

सुमन्त—तो क्या मैं भूखा मर जाऊँ? मुझे तो काम किये बिना भूख ही नहीं लगती, करूँ तो क्या करूँ।

दूसरा मन्त्री—(सामने आकर) महाराज, राज्यका प्रबन्ध किस प्रकार किया जाय, नौकरोंको तलब कहाँसे दें? रुपया तो एक नहीं।

सुमन्त—यदि रुपया नहीं तो तलब मत दो।

मन्त्री—तलब लिये बिना काम कौन करेगा?

सुमन्त—काम कैसा, न करने दो। करनेको खेतोंमें क्या काम थोड़ा है, खाद सम्भालना, समयपर खेती करना, यह सब काम ही हैं कि और कुछ।

इतनेमें एक मुकदमेवाले सामने आये।

किसान—महाराज, उसने मेरे रुपये चुरा लिये।

सुमन्त—कोई बात नहीं, उसको रुपयेकी जरूरत होगी।

सब लोग जान गये कि सुमन्त महामूर्ख है। एक दिन रानी बोली—

'प्राणनाथ सब लोग यही कहते हैं कि आप मूर्ख हैं।'

सुमन्त—तो इसमें हानि ही क्या है?

रानीने विचारा कि धर्मशास्त्रकी यही आज्ञा है कि स्त्रीका

परमेश्वर पति है। जिसमें वह प्रसन्न रहे वही काम करना धर्म है। अतएव वह भी राजा सुमन्तके साथ खेतीका काम करने लगी।

यह दशा देखकर बुद्धिमान पुरुष सबके सब अन्य देशोंमें चले गये। केवल मूर्ख ही मूर्ख वहाँ रह गये। इस राज्यमें रुपया प्रचलित न था, राजासे लेकर रंकतक खेतीका काम करते, आप खाते और दूसरोंको खिलाकर प्रसन्न होते थे।

१०

इधर अधर्म्मराज बैठे बाट देख रहे हैं कि तीनों भाइयोंका सर्वनाश करके भूत अब आते हैं, अब आते हैं, परन्तु वहां आता कौन? अधर्म्मको बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह क्या बात है। अन्तमें सोच विचारकर स्वयं खोज लगानेके लिये चला।

सुमन्तके पुराने गांवमें जानेपर ढूंढ़नेसे तीन छेद मिले। अधर्मको मालूम हो गया कि तीनों भूत मारे गये। वह भाइयों-की खोजमें चला। जाकर देखा तो तीनों भाई राजा बने बैठे हैं। फिर क्या था, जल भुनकर राख ही तो हो गया। दाँत पीसकर बोला—देखूं, यह सब मेरे हाथसे बचकर कहां जाते हैं। वह एक सेनापतिका भेष बदलकर पहले विजयके पास पहुंचा और हाथ जोड़कर विनय किया—महाराज मैंने सुना है कि आप महा शूरवीर हैं, मैं अस्त्र-शस्त्र-विद्यामें अति निपुण हूँ। इच्छा है कि आपकी सेवा करके अपना गुण प्रकट करूं।

विजय उसकी चितवनोंसे ताड़ गया कि आदमी चतुर और बुद्धिमान है, उसे झट सेनापतिकी पदवीपर नियत कर दिया।

नवीन सेनापति सेनाको बढ़ानेका प्रबन्ध करने लगा। विजयसे बोला—महाराज, मेरे ध्यानमें, राज्यमें बहुत लोग ऐसे हैं जो कुछ काम नहीं करते। राज्यकी स्थिरता सेनामे ही होती है। इसलिये एक तो सब युवक पुरुषोंको रंगरूट भरती करके सेना पहलेसे पांचगुनी कर देनी चाहिये, दूसरे नये नमूनेकी बन्दूकें और तोपें बनानेके वास्ते राजधानीमें कारखाने खोलने चाहिये। मैं एक फायरमें सौ गोली चलानेवाली बन्दूक और घोड़े, मकान, पुल इत्यादि नष्ट कर देनेवाली तोपें बना सकता हूँ।

विजयने प्रसन्नतापूर्वक झट सारी राजधानीमें एक आज्ञा-पत्र जारी कर दिया कि सब लोग रंगरूट भरती किये जायं। नये नमूनेकी तोपें और बन्दूकें बनानेके वास्ते जगह-जगह कार-खाने खोल दिये। युद्धकी समस्त सामग्री जमा होनेपर पहले उसने पड़ोसी राजाको जीता, फिर मैसूरके राजापर चढ़ाईका डंका बजा दिया।

पर सौभाग्यसे मैसूरके राजाने विजयका सारा वृत्तान्त सुन रखा था। विजयने तो पुरुषोंको ही भरती किया था, उसने स्त्रियोंको भी सेनामें भरती कर लिया। नयेसे नये नमूनेकी बन्दूकें और तोपें बना डालीं, सेना विजयसे चौगुनी कर दी, और एक नवीन कल्पना यह की कि बम्बके ऐसे गोले बनाये जावें

जो आकाशसे छोड़े जायें और धरतीपर फटकर शत्रुकी सेनाका नाश कर दें।

विजयने समझा था कि पड़ोसी राजाकी भाँति छिनमें भारतके राजाको जीतकर उसका राज्य छीन लूँगा, परन्तु यहाँ रंगतही कुछ और हुई। सेना अभी गोलीकी मारमें भी नहीं पहुँची थी कि शत्रुकी सेनाकी स्त्रियोंने आकाशसे बम्बके गोले बरसाने आरम्भ कर दिये। विजयकी सारी सेना काईकी भाँति फट गयी। आधी वहीं काम आयी, आधी भयभीत होकर भाग गयी। विजय अकेला क्या कर सकता था। भागते ही बनी, मैसूरके राजाने उसके राज्यपर अपना अधिकार कर लिया।

विजयका सर्वनाश करके अधर्म ताराके राज्यमें पहुँचा और सौदागरका भेष धारण करके वहाँ एक कोठी खोल दी। जो पुरुष कोई माल बेचने आता, उसे चौगुने पचगुने दामपर ले लेता। शीघ्र ही वहाँकी प्रजा मालदार हो गयी। तारा यह हाल देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ और कहने लगा कि व्यापार बड़ी वस्तु है। इस सौदागरके आनेसे मेरा कोष धनसे भर गया। किसी बातकी कमी नहीं रही।

अब ताराने एक महल बनाना शुरू किया। उसे विश्वास था कि रुपयेके लालचसे राज, मजदूर, मसाला सब कुछ सामग्री शीघ्र ही मिल जायगी, कोई कठिनाई न होगी। परन्तु राजाका महल बनानेके वास्ते कोई न आया। अधर्म्म सौदागरके पास

रुपयेकी गिनती न थी। उसकी अपेक्षा राजा उससे अधिक मजूरी और दाम नहीं दे सकता था। उसका महल न बन सका। ताराको साधारण मकानमें ही रहना पड़ा।

इसके पीछे उसने एक बाग लगाना आरम्भ किया। उस सौदागरने तालाब खुदवाना शुरू कर दिया। सब लोग रुपया अधिक होनेके कारण सौदागरके बसमें थे। राजाका काम कोई न करता था। बाग भी बीचमें ही रह गया। शीतकाल आनेपर ताराने ऊनी वस्त्र आदि खरीदनेका विचार किया। सारा संसार छान डाला, जहाँ पूछा, यही उत्तर मिला कि सौदागरने कोई वस्त्र नहीं छोड़ा, सारेके सारे खरीद कर ले गया।

यहाँ तक कि रुपयेके प्रभावसे अधर्म्मने राजाके सब नौकर अपने पास खींच लिये। राजा भूखों मरने लगा, क्रुद्ध होकर उसने सौदागरको अपनी राजधानीसे निकाल दिया। अधर्म्मने सीमापर जाकर डेरा जमाया। ताराको कुछ करते धरते नहीं बनती थी। उसे उपवास किये तीन दिन बीत चुके थे कि विजय आकर सम्मुख खड़ा हो गया।

विजय—भाई तारा, मैं तो मर चुका। मेरी सेना, राज्य-पाट सब नष्ट हो गया। मैसूरके राजाने मेरी राजधानीपर अपना अधिकार कर लिया, भागकर तुम्हारे पास आया हूँ, मेरी कुछ सहायता कीजिये।

तारा—सहायताकी एक ही कही। यहाँ आप अपनी जान-पर आ बनी है, उपवास किये तीन दिन हो चुके हैं, खानेको

अन्नतक तो मिलता ही नहीं, तुम्हारी सहायता किस प्रकार करूँ।

११

विजय और ताराकी यह दशा करके अधर्म्म फिर करनलका भेष बदलकर सुमन्तके पास पहुँचा और निवेदन किया—

'महाराज सेनाके बिना राजाकी शोभा नहीं होती, न राज्यकी रक्षा होती है। यदि आज्ञा हो तो चतुरङ्गिनी सेना तैयार कर दूं।'

सुमन्त—बहुत अच्छा, सेना तैयार करो और उसे गाना बजाना सिखाओ। मुझे गाना बहुत पसन्द है। मारू बाजा मुझे बड़ा प्रिय लगता है। सेना तैयार करके उन्हें केवल बाजा बजाना सिखलाना और कुछ नहीं।

अधर्म्म लोगोंके पास जाकर समझाने लगा कि तुम लोग सिपाही बन जाओ, तुम्हें वस्त्र और अन्न दिया जायगा।

लोग—हमारे पास अन्न बहुत है, स्त्रियाँ कपड़े सी लेती हैं हमें कुछ नहीं चाहिये, जाओ अपना काम करो, हम सिपाही नहीं बनते।

अधर्म्मने सुमन्तके पास आकर कहा—महाराज, आपकी प्रजा बड़ी ही मूर्ख है, मुझे निश्चय हो गया कि वे बिना सरकारी हुक्मके सिपाही न बनेंगे। यह हुक्म जारी कर दिया जाय कि जो कोई सिपाही न बनेगा उसे फाँसी दे दी जायगी।

सुमन्तने अधर्म्मका कहना मानकर वैसा ही हुक्म जारी कर दिया। लोग अधर्म्मके पास आकर बोले—

'तुम कहते हो कि यदि हम फौजमें भरती नहीं होंगे तो जानसे मार दिये जायेंगे। हम पूछते हैं कि भरती होकर हमारा क्या बनेगा। हमने सुना है कि युद्धमें सिपाहियोंको मार डाला जाता है।'

अधर्म्म—हाँ, कभी-कभी ऐसा हो जाता है।

लोग—जब मरना ही ठहरा तो घरमें रहकर ही क्यों न मरें? युद्धमें प्राण देनेसे क्या लाभ है? हम सिपाही नहीं बनते।

अधर्म्म—तुम महामूर्ख हो। युद्धमें जाकर तुम मारे ही जावोगे यह बात नहीं है; बच भी सकते हो, परन्तु सिपाही न बननेसे तुम्हारी फाँसी जरूर ही हो जायगी।

लोग डरकर सुमन्तके पास पहुँचे और बोले—महाराज, एक सेनापति हमें अचरजकी बात सुनाता है। उसका कथन है कि यदि हम सिपाही न बनेंगे तो महाराज हमको अवश्य फाँसी दे देंगे। क्या यह बात सत्य है?

सुमन्त—(हंसकर) भला सोचो तो मैं अकेला तुम सबको कैसे फांसी दे सकता हूँ।

लोग—तो हम सिपाही क्यों बनें?

सुमन्त—मत बनो।

लोग अपने-अपने घरोंको चले गये। अधर्म्म बहुत निराश हुआ कि मन्त्र तो न चला, अच्छा पड़ोसी राजाके पास जाकर उसे यह उपदेश करता हूँ कि ऐसे मूर्ख राजाका देश छीन ले।

अतएव एक दूसरे राजाके दरबारमें जाकर उसने विनयकी—

महाराज, सुमन्तके राजमें अन्न और पशु बहुत हैं, रुपया न हुआ तो क्या है, बस चढ़ाई करके उसका राज्य छीन लीजिये।

राजाने अधर्म्मका कहना मानकर युद्धकी तैयारी कर दी।

उधर सुमन्तकी प्रजा खबर पाकर सुमन्तके पास पहुँची कि महाराज, उत्तर देशका राजा युद्ध करनेके वास्ते आता है।

सुमन्तने कहा—आने दो हमारी कुछ हानि नहीं।

उत्तर देशाधिपतिने सुमन्तकी सेनाका भेद लेनेके लिये कुछ सिपाही भेजे। वहाँ सेना कहाँ थी, भेद किसका ले, वह लौट गये। तब उस राजाने सेनाको यह आज्ञा दी कि जाकर देश लूट ले। सिपाही गांवमें पहुँच कर अन्न, वस्त्र पशु इत्यादि लूटने लगे। सुमन्तकी प्रजाने किसीका सामना नहीं किया, कुछ न बोले, वरञ्च सिपाहियोंकी सेवा करने लगे और कहने लगे—भाइयो, यदि अपने देशमें रहनेसे तुम्हें कोई कष्ट होता है तो यहाँ आकर हमारे पास रहो।

अब सिपाही सोचने लगे कि युद्ध करें तो किससे करें, यहां तो यह सब लोग आपसे आप सब कुछ देनेपर तैयार हैं। अपने राजाके पास जाकर बोले कि महाराज, सुमन्तकी प्रजा तो स्वयं सब कुछ देनेपर तैयार है, लड़ाइ किसके साथ की जावे। राजाने कहा—कुछ चिन्ता नहीं, जाओ गाँव जला दो, पशु सब मार डालो; हम लड़ाई अवश्य करेंगे! यदि मेरा कहा नहीं मानोगे तो तुम्हें तोपके मुँह उड़ा दूँगा।

सिपाही भयभीत होकर फिर लौटे और फिर गांव आदि

जलाने लगे। सुमन्तकी प्रजाने उनसे प्रेमपूर्वक कहा—ऐसी अच्छी चीजोंको भस्म करनेसे आपलोगोंको क्या फल मिलेगा, यदि इच्छा है तो यह सब पदार्थ अपने देशको ले जाओ, हमें कोई शोक नहीं होगा, परन्तु इस प्रकार पशुओंका बध करनेसे हमें क्लेश होता है।

अन्तमें सेनाको प्रजापर दया आ गई। वह राजाकी नौकरी छोड़कर अपने-अपने घर चले गये। सुमन्त आनन्दसे राज्य करता रहा।

१२

अधर्म्म सोचने लगा कि अब क्या करें, इस मूर्खने तो बड़ा कष्ट दिया। सच है बुद्धिमानोंको वश कर लेना सहज है, मूर्ख-को समझाना अति कठिन है। अच्छा, एक भद्र पुरुषका भेष बनाकर सुमन्तके पास चलते हैं, स्यात् कहना मान जाय।

वह तुरन्त भेष बदलकर सुमन्त मूर्खकी सेवामें आया और बोला—महाराज, मेरी इच्छा है आपकी राजधानीमें व्यापार फैलाऊँ, व्यापार करनेसे पुरुष बुद्धिमान और चतुर हो जाता है।

सुमन्त—बहुत अच्छा, आइये व्यापार फैलाइये।

दूसरे दिन अधर्म्म स्वर्णमुद्राकी थैली लेकर चौराहेपर पहुँचा और मोहरें दिखलाकर लोगोंसे कहने लगा कि जो कोई मेरा काम करेगा उसे यह मोहरें दी जायेंगी। वहांकी मूर्ख प्रजा मोहरों का नामतक नहीं जानती थी, सोनेके सुन्दर-सुन्दर टुकड़े देख-कर वह लोग प्रसन्न हो गये और अधर्म्मका काम करने लगे।

अधर्म्म समझा कि तारावाला मन्त्र चल गया।

थोड़े दिन लोग अधर्म्मका काम करते रहे, उसे अन्न-वस्त्र भी देते रहे। जब उनके पास मोहरें बहुत हो गयीं और उन्होंने अपनी स्त्रियों और बालकोंको गहने बनवा दिये, तब उन्होंने अधर्म्मका काम करना छोड़ दिया, यहांतक कि उसके हाथ आटा दाल बेचना भी बन्द कर दिया।

अधर्म्मकी विचित्र गति बनी। एक दिन एक किसानके घर जाकर वह कहने लगा—भाई, इस मोहरके बदले आध सेर आटा तो दे दो। किसान बोला—मोहर लेकर क्या करूंगा, मोहर तो पहलेकी ही बहुत पड़ी हैं, आटा नहीं बेचता, हाँ परमेश्वरके नामपर माँगो तो देनेको तैयार हूँ। भगवानका नाम सुनकर अधर्म्म कांप उठा और भागकर दूसरे किसानके घर पहुंचा। वहां भी यही हाल हुआ। अन्तमें रातको वह भूखा ही सोया।

प्रजाके लोग सुमन्तके पास आकर कहने लगे—महाराज, एक धनी आदमी आया है, कोट पतलून डाटे रहता है, खाता-पीता खूब है, काम कुछ नहीं करता। मोहरें लिये फिरता है, यदि हम परमेश्वरके नामपर उसे अन्न देना चाहते हैं तो नहीं लेता, मोहरें दिखाता है, अन्न बेचनेकी हमें आवश्यकता नहीं, उसे भूखा रखना भी उचित नहीं, क्या उपाय करें? इस तरह तो वह भूखों मर जायगा।

सुमन्त—उसे भोजन तो देना ही पड़ेगा। घर पीछे एक दिन बांध दो।

अब अधर्म्म महाराज घर-घर जाकर रोटी मांगकर खाने लगे। होते होते एक दिन राजा सुमन्तके घरकी बारी आ गयी। वहां जाकर देखता क्या है कि सुमन्तकी गूंगी बहन रोटी पका रही है।

बहुधा ऐसा हो चुका था कि निकम्मे पुरुष यहां रसोईमें आकर भोजन पा जाया करते थे। इस कारण मनोरमाने यह नियम बांध दिया था कि जिनके हाथ काम करनेके कारण कठोर हो गये हों वही लोग रसोईमें बैठकर भोजन पाया करें, दूसरा कोई नहीं।

अधर्म्मको यह बात मालुम न थी, वह झटसे रसोईमें जाकर बैठ गया। गूंगी मनोरमाने उसे वहांसे उठा दिया। रानी बोली—महाशय, बुरा न मानिये, यहांकी यह रीति है कि कोमल हाथोंवालेको बचा-खुचा भोजन दिया जाता है, आप बाहर ठहरें। जो कुछ अन्न बचेगा आपको मिल जावेगा।

यह बातें हो ही रही थीं कि सुमन्त भी वहां आ गया।

अधर्म्म—(सुमन्तसे) आपके राज्यमें यह अनोखा नियम है कि प्रत्येक प्राणीको हाथोंसे काम करना चाहिये। काम क्या केवल हाथोंसे ही किया जाता है? आपको स्यात् मालूम नहीं कि चतुर पुरुष कैसे काम करते हैं?

सुमन्त—भला हम मूर्ख क्या जानें, हम तो प्रायः हाथोंसे ही काम करते हैं।

अधर्म्म—इसी कारण आपलोग मूर्ख हैं। अब मैं आपको मस्तक द्वारा काम करना बतलाऊंगा, तब आपको विदित हो

जायगा कि मस्तक द्वारा काम करना, हाथों द्वारा काम करनेसे कहीं अधिक फलदायक है।

सुमन्त—ओहो, तो हमलोग निस्सन्देह मूर्ख हैं।

अधर्म्म—मस्तक द्वारा काम करना सहज नहीं। मुझे आप रसोईमें बिठाकर इस कारण भोजन नहीं कराते कि मेरे हाथ कोमल हैं और मैं हाथोंसे काम नहीं करता, परन्तु मैं आपसे सत्य कहता हूँ कि मस्तक द्वारा काम करना अति कठिन है, यहाँतक कि कभी-कभी मस्तक फटने लग जाता है।

सुमन्त—तो मित्र ऐसा कष्ट क्यों उठाते हो। मस्तक फटना क्या अच्छा मालूम होता है? हाथोंसे सहजमें काम क्यों नहीं कर लेते?

अधर्म्म—मुझे आप लोगोंकी यह गति देखकर दया आती है, इस कारण चाहता हूं कि आप लोगोंको भी यह काम सिखा दूं।

सुमन्त—बहुत अच्छा, सिखा दीजिये। काम करते-करते जब हमारे हाथ थक जाया करेंगे। तो हम मस्तकसे काम लिया करेंगे।

दूसरे दिन सुमन्तने अपनी समस्त राजधानीमें यह ढिंढोरा पिटवा दिया कि एक महात्मा मस्तक द्वारा काम करना बतलायेंगे क्योंकि इस प्रकार काम करना अति लाभदायक है। सब लोग आकर उनका उपदेश सुनें।

लोगोंके दलके दल आने लगे! सुमन्तने चतुर पुरुषको एक

बड़े ऊँचे बुर्जपर चढ़ा दिया कि लोग उसे भली प्रकार देख सकें। उस बुर्जपर एक लालटेन गड़ी हुई थी।

अधर्म्म चोटीपर पहुँचकर व्याख्यान देने लगा। लोग समझे थे कि वह मस्तक द्वारा काम करना बतलायगा, परन्तु वह खाली गपोड़े हाँकने लगा कि हाथोंसे काम किये बिना मनुष्य बहुत चैनसे रह सकता है। यह जरूरी नहीं कि सभी लोग हाथोंसे काम करें। लोग एक अक्षर न समझे और निराश होकर अपने घरोंको लौट गये।

अधर्म्म कई दिन बुर्जपर बैठा बकवाद करता रहा। उसे भूख सताने लगी। लोग समझते थे कि जब मस्तकद्वारा काम करना, हाथोंसे काम करनेसे उत्तम है तो उसे भोजनकी क्या कमी हो सकती है। इस कारण उन्होंने भोजन नहीं पहुँचाया।

सुमन्तने प्रजासे पूछा कि क्या महात्माने मस्तक द्वारा काम करना प्रारम्भ कर दिया? सबने यही उत्तर दिया कि महाराज हमारी तो कुछ समझमें नहीं आता। वह तो कोरा गाल बजाये चला जाता है, दिखाता-बिखाता कुछ नहीं।

तीसरे दिन अधर्म्म भूख और प्यासके मारे व्याकुल होकर गिर पड़ा और चोटी परसे लुढ़कता-लुढ़कता धरतीपर आ गिरा और उसका मस्तक फट गया।

लोगोंने दौड़कर रानीसे ये बातें कहीं। रानी दौड़ी हुई खेतमें गयी, मूर्ख सुमन्त उस समय खेतमें हल चला रहा था।

रानी—महाराज ! शीघ्र चलिये, वह महात्मा मस्तक द्वारा काम करने लगा है।

राजा—अच्छा तो चलो।

सुमन्तने आकर देखा कि महाशयजी धरतीपर पड़े हैं और उनका मस्तक फट गया है।

सुमन्त—भाइयो, महात्मा सत्य कहता था कि काम करते करते मस्तक फट जाया करता है। देखो, अन्तमें बेचारेका मस्तक फट ही गया।

सुमन्त चाहता था कि पास जाकर देखें कि उसने कितना काम किया है, परन्तु अधर्म्म अपनी मूर्खताके प्रभावसे धरतीमें समा गया, केवल एक छेद बाकी रह गया।

सुमन्त—ओहो, यह तो भूत था, मालूम होता है यह उन तीनोंका पिता था।

सुमन्त अभी जीता है। राजधानीकी बस्ती नित्य बढ़ती जाती है। विजय और तारा भी उसके पास आकर रहने लगे हैं। अतिथि-सेवा करना सुमन्तने परमधर्म्म मान रखा है।

इस राजधानीमें यही एक विलक्षण रीति है कि लोगोंके साथ रसोईमें बैठकर केवल वही पुरुष भोजन कर सकता है जिसके हाथ कठोर हों, दूसरोंको बचा-खुचा भोजन दिया जाता है।

————

९

दयालु स्वामी

एक समय किसी नगरमें एक सदाचारी, दयालु और धनी पुरुष रहता था। उसके बहुतसे सेवक थे। एक दिन सब सेवक आपसमें बातें करने लगे कि हमारे स्वामीसे बढ़कर दूसरा सज्जन आज पृथ्वीपर कोई नहीं, और धनी लोग अपनेको देवता मानते हैं, सेवकोंको पशु समझते हैं और उन्हें अति कष्ट देते हैं। हमारा स्वामी कभी खोटा वचन मुखसे नहीं निकालता, तिसपर पिता समान हमारा पालन-पोषण करता है। हमारे साथ उसका प्रेम अथाह है, ऐसे स्वामीके घरमें रहकर हम बहुत सुखी हैं।

अधर्म्मको स्वामी और सेवकोंमें इस तरह प्रीति देखकर यह दुःख हुआ कि संसारमें यदि इसी प्रकार स्वामिभक्ति फैल गयी तो हमारा तो जगत्‌मेंसे राज्य ही उठ जायगा, कोई उपद्रव खड़ा करना चाहिये। उसने गोपाल नामके एक सेवकको अपने वशमें कर लिया।

कई दिन पीछे जब सब सेवक एकत्र होकर फिर स्वामीकी बड़ाई करने लगे तो गोपाल बोला—स्वामीकी इतनी बड़ाई करना तुम्हारी मूर्खता है। जितना काम हम उसका करते हैं, यदि किसी राक्षसका भी करते तो

वह भी प्रसन्न हो जाता। हम उसके इशारोंपर काम करते हैं, उसके हुक्मकी राह नहीं देखते। हम उसकी कोई आज्ञा न मानें तब तो वह अप्रसन्न हो? हां, कोई काम बिगाड़कर देखो कि कैसा दण्ड देता है। एक क्षणमें निकाल देगा।

काम बिगाड़नेकी किसी नौकरने हामी नहीं भरी। गोपालने कहा कि देखो कल क्या तमाशा दिखाता हूँ।

गोपाल स्वामीकी गाय, भेड़ चराया करता था। स्वामी गायोंका बड़ा प्रेमी था। प्रातःकाल स्वामी अपने मित्रोंको जब गायें दिखलाने लाया, तो गोपालने नौकरोंको आंख मारी कि देखते रहना क्या होता है। अधर्म्म भी वृक्षपर बैठा यह तमाशा देख रहा था।

स्वामी अपने मित्रोंको गायें दिखाता फिरता था कि गोपाल-ने रेवड़को डरा दिया। वह इधर-उधर भागने लगीं। रेवड़में कजरी आंखोंवाला एक बछड़ा बड़ा सुन्दर था और स्वामी उसे बहुत चाहता था।

स्वामी बोला—गोपाल, जरा वह बछड़ा तो पकड़ लो, मेरे मित्र उसे देखना चाहते हैं।

गोपालने झपटकर बछड़ेको इस भांति पकड़ा कि उसकी एक टांग टूट गयी। अधर्म्म बड़ा प्रसन्न हुआ कि अब लड़ाई होगी। सेवक भी खड़े देखते थे कि क्या होता है। स्वामीने बछड़ेकी यह दशा देखी तो उसकी आंखोंसे ज्वाला निकलने लगी। कटु शब्द जिह्वापर आये। सारे शरीरमें रोमांच हो गया।

पर एक क्षणमें उसने अंगड़ाई ली और लम्बी सांस खींचकर बोला—गोपाल, तुम्हारे स्वामीने तुम्हें यह आज्ञा दी थी कि मुझे क्रोधित करो, परन्तु मेरा स्वामी तुम्हारे स्वामीसे कहीं अधिक बलवान है। मैं तुमपर क्रोध नहीं करता, वरंच तुम्हारे स्वामीको अप्रसन्न करता हूँ। तुम्हें दण्डका भय है, तुम मेरी नौकरी छोड़ना चाहते हो, मैं तुम्हें नहीं रोकता, जहाँ चाहो जाओ, यह लो वस्त्र।

यह कहकर दयालु स्वामी मित्रसहित अपने घर लौट गया और अधर्म्म निराश होकर वहाँसे लोप हो गया।

१०

बाललीला

होलीके दिन थे। रातको वर्षा हो जानेके कारण गांवकी गलियोंमें पानी बह रहा था। एक गाँवमें दो छोटी-छोटी लड़कियाँ नवीन वस्त्र पहने गलीमें आकर खेलने लगीं। मायाने धरतीपर ऐसा पैर मारा कि देवकीकी आँखोंमें छींटे पड़ गये और उसका कुरता खराब हो गया। माया डरकर भागना चाहती थी कि देवकीकी माँ आ गयी। उसने देवकीको रोते देख मायाके मुंहपर थप्पड़ मारा।

माया जोरसे रोने लगी। उसकी माँ उसके रोनेका शब्द

सुनकर बाहर आ गयी और बोली—क्यों क्या हुआ? मेरी लड़कीको क्यों मार रही हो?

मायाने रोकर कहा—हूँ, हूँ, देवकीकी माँने मारा। बस फिर क्या था, वह लगी देवकीकी माँको कोसने।

शनैः शनैः दोनों घरके और लोग आ गये और लगे आपसमें लड़ने। एक बुढ़िया बोली कि क्या करते हो? होलीका दिन है, यह लड़ाई कैसी? जाने दो; चुप करो। परन्तु कौन सुनता था अन्तमें माया और देवकीने ही लड़ाई बन्द की और वह इस प्रकार की—इधर तो स्त्री-पुरुष लड़ाई कर रहे थे। उधर देवकी मायाको मनाकर फिर वहीं जाकर खेलने लगी। उन दोनोंने गढ़ेमेंसे एक नाली बनाकर उसमें घासके तिनके तैराने शुरू किये। एक तिनका बह निकला। वह दोनों उसके पीछे दौड़ती-दौड़ती वहाँ पहुँच गयीं, जहाँ यह महाभारत छिड़ा हुआ था।

बुढ़िया लड़कियोंको आते देखकर बोली—तुम्हें लज्जा नहीं आती; इन्हीं लड़कियोंके कारण लड़ाई हो रही है कि और भी कुछ? यह बेचारी तो प्रेमभावसे सब कुछ भूलकर अपने खेलमें लगी हुई हैं, तुमने युद्धयज्ञ रच रक्खा है। तुमसे तो अधिक बुद्धि इन लड़कियोंमें है।

सबके सब चुप हो गये और महात्माओंका यह वचन स्मरण करने लगे कि बालकोंकी भाँति जबतक पुरुष अपना अन्तःकरण शुद्ध नहीं करता, परमात्मामें नहीं मिल सकता।

———

११

सुख त्यागमें है

अवध राज्यमें चतरसिंह नामका एक किसान रहता था। विवाह होनेके एक वर्ष पीछे उसके पिताका देहान्त हो गया। उस समय उसके पास धन-दौलत न थी, दो गाय, दो बैल, एक घोड़ी और दस भेड़ें थी, लेकिन पशुपालनमें कुशल होनेके कारण पैंतीस वर्षके लगातार परिश्रमसे अब उसके पास २०० गाय, १५० बैल, १२०० भेड़ें हो गयी थीं। वह बड़े प्रतिष्ठित पुरुषोंमें गिना जाने लगा। जैसा कि संसारकी रीति है, बहुत लोग उससे डाह करते और कहते थे—चतरसिंह बड़ा भाग्यवान है। धन-दौलत सब कुछ उसके पास है, संसार अब उसे सुखरूप हो रहा है। चतरसिंहको अतिथि सेवाका प्रेम था। उसके दो पुत्र और एक कन्या थी। वह सब व्याहे हुए थे। गरीबीकी दशामें तो सब मिलकर काम किया करते थे, धनवान हो जानेपर दशा बिगड़ गयी। बड़ा लड़का तो मद्यका सेवन करते-करते एक दिन किसी लड़ाईमें काम आया, छोटा लड़का एक कलहारी स्त्रीसे विवाह करके पितासे अलग रहने लगा। विपत्तिके दिन फिर आये। पशुओंमें मरी पड़ी; सब पशु मर गये, एक न बचा। धन कुछ चोरोंने हर लिया, कुछ योंही निबट गया। यहाँ तक कि

चतरसिंहके पास कौड़ी न बची ? पड़ोसी आनन्दसिंहने तरस खाकर उसे और उसकी स्त्रीको अपने घरमें नौकर रख लिया।

आनन्दसिंहको इनके नौकर रख लेनेसे बड़ा लाभ हुआ ; क्योंकि पुरुष-स्त्री दोनों बड़े सदाचारी और स्वामिभक्त थे।

एक दिन आनन्दसिंहके घरमें उसके कुछ सम्बन्धी आये। भोजन करते समय आनन्दसिंहने अपने सम्बन्धीसे कहा कि तुमने उस बूढ़ेको देखा—

सम्बन्धी—क्यों, उस बूढ़ेमें क्या बात है ?

आनन्दसिंह—वह इस प्रान्तमें कभी सबसे अधिक मालदार था, उसका नाम चतरसिंह है।

सम्बन्धी—हैं, चतरसिंह ! मैंने उसका नाम तो सुन रक्खा था। देखा उसे आज ही है।

आनन्दसिंह—अब वह इतना कंगाल हो गया है कि उसे मेरी नौकरी करनी पड़ी।

सम्बन्धी—भावी बड़ी प्रबल है, लक्ष्मी कभी स्थिर नहीं रहती। मेरे विचारमें चतरसिंह पिछली बात याद करके बहुत दुःखी रहता होगा।

आनन्दसिंह—मुझे कुछ मालूम नहीं, मेरे सामने कभी कुछ नहीं बोलता, चुपके-चुपके काम किये जाता है।

सम्बन्धी—भला पूछूँ तो कि क्या हाल है।

आनन्दसिंह—हाँ, पूछ देखो।

सम्बन्धी—(चतरसिंहसे) बाबा, तुम हमें इस भाँति आनन्द से गद्दे-तकियोंपर लेटते, नाना प्रकारके व्यञ्जन खाते देखकर अवश्य दुःखी होगे, क्योंकि एक समय था कि तुम भी धनी थे।

चतरसिंह—(हंसकर) अपने सुख-दुःखका व्यौरा यदि मैं तुम्हें सुनाऊँगा, तो तुम्हें विश्वास नहीं होगा। हाँ, मेरी स्त्रीसे पूछ देखो कि वह क्या कहती है। क्योंकि स्त्रियोंको अपनी बहन लक्ष्मीसे बड़ा प्यार होता है।

स्त्री पिछली ओर किवाड़ोंकी ओटमें बैठी थी, सम्बन्धीने उससे पूछा—माई, सत्य कहो कि पहले सुख था कि अब है?

स्त्री—सुनिये, मैं और मेरा पति दोनों पचास वर्षतक यथार्थ सुखको खोजते रहे, वह नहीं मिला। जबसे इस घरमें नौकर हुए हैं तबसे कुछ सुख प्राप्त हुआ है। अब हमें किसी बातकी अभिलाषा नहीं।

सिवाय चतरसिंहके सब उपहास करने लगे।

स्त्री—मैं सत्य कहती हूं, हंसी नहीं करती; धनवान होनेपर जरा भी सुख न था, सुख अब है।

सम्बन्धी—क्यों?

स्त्री—धन होनेपर हम सदैव ऐसे चिन्ताग्रस्त रहते थे कि परमात्माको कभी स्मरण भी नहीं करते थे, आज कोई बड़ा आदमी आ गया, उसकी सेवामें कोई त्रुटि न रह जाय, नहीं तो अपमान होगा। नौकर काम नहीं करते, क्या करें, गायें बहुत हैं,

रातको कहीं कोई बाघ न उठा ले जाय। सदा चोरोंका भय रहता था, सारी रात जागते कटती थी। फिर कभी मेरी और मेरे पतिकी किसी न किसी बातपर लड़ाई भी चल जाती थी। तात्पर्य्य यह कि कोई क्षण ऐसा न था कि चैनसे बैठे हों।

सम्बन्धी—भला, अब ?

स्त्री—अब लड़ाई है न चिन्ता, जब काँटा ही न रहा तो पीड़ा क्यों हो। स्वामीका काम किया और छुट्टी हुई। ऊधोका लेन न माधोका देन। दुःखका अब लेश नहीं।

वह सब हँसने लगे।

चतरसिंह—यह बात हँसनेकी नहीं, मनुष्य-जीवनमें सत्य वचन है तो यही है। धन नष्ट हो जानेपर पहले हम विलाप किया करते थे। जबसे ज्ञानचक्षु खुल गये हैं, तबसे हम मोहके बंधनसे छूट गये। संसारी विषयमें लिप्त होनेसे सुख प्राप्त नहीं हो सकता।

वहीं एक पण्डित भी बैठा हुआ था, वह बोला—बहुत सत्य है, निस्सन्देह सुख त्यागमें ही है, रागमें नहीं।

१२

भूत और रोटी

एक दिन प्रातःकाल एक गरीब किसान घरसे दो रोटी पल्ले बाँधकर हल जोतने चला। खेतमें पहुँचकर रोटी तो उसने एक झाड़ी तले रख दी और आप हल चलाने लगा।

दुपहरी होनेपर उसने बैलोंको चरने छोड़ दिया और आकर जब रोटी उठाने लगा तो रोटी वहाँ नदारद !

इधर देखा उधर देखा, कुछ पता नहीं, कोई जाता भी दिखायी नहीं दिया। फिर रोटी किसने उठा ली !

वास्तवमें रोटी एक भूतने उठा ली थी; वह झाड़ीके पीछे छिपा बैठा था।

किसान बोला—क्या हुआ, एक दिन रोटी न खायी तो मर नहीं जाऊंगा। किसी भूखेने ही उठायी है, भगवान उसका भला करे।

यह कहकर कुएंपर पानी पी, उसने फिर खेत जोतना आरम्भ कर दिया। भूत उदास होकर अधर्म्मके पास पहुँचा और उसे सारा वृत्तान्त कह सुनाया।

अधर्म्म—(क्रोधसे) तुम मूर्ख हो, काम करना क्या जानो, यदि संसारी लोग इस प्रकार सन्तोष करके जीवन व्यतीत करने लगेंगे तो हमारा तो बेड़ा ही डूब जायगा। जाओ, तुरन्त जाकर कोई ऐसा उपाय करो कि मनुष्योंमें सन्तोष और दया-भावका लोप हो जाय, नहीं, तो तुम्हें फाँसीपर लटका दिया जावेगा।

भूत लौटकर विचार करने लगा कि क्या यत्न किया जाय। सोचते-सोचते उसे उपाय सूझ ही गया।

उसने एक किसानका रूप धर लिया और उसी किसानके पास जाकर नौकर हो गया। पहले वर्ष तो उसने किसानको

यह सलाह दी कि दलदलमें खेती बोओ। दैवगतिसे उस साल चौमासा न लगा, सब लोगोंकी खेतियाँ जल गयीं। इस किसानको बड़ा लाभ हुआ। खाल धरती होनेके कारण मुक्ता अनाज उगा।

दूसरे वर्ष उसने किसानसे कहकर एक ऊँचे टीलेपर खेती बुवायी। कालवश अतिवृष्टि होनेके कारण सब खेतियाँ पानीमें डूबकर सड़ गयीं। इस किसानको कोई हानि नहीं पहुँची।

अब किसानके पास इतने जौ पैदा हुए कि कोठे भर गये। करे तो क्या करे, भूतने उसे जौसे मद्य बनाना सिखला दिया। बस फिर क्या था, किसान मद्य बना-बनाकर मित्रों-सहित उसका सेवन करने लगा।

भूतने अधर्म्मराजके पास पहुँचकर विनय की कि महाराज, अब चलकर देखिये कि मैंने कैसा मन्त्र चलाया है, अब किसान कदापि नहीं बच सकता। अतएव वह दोनों किसानके घर आ पहुँचे।

देखा कि वहां आस-पासके किसान एकत्र हैं, किसानकी स्त्री उन सबको मद्य पिला रही है। इतनेमें उसने ठोकर खायी और मद्यका प्याला उसके हाथसे छूट गया।

किसान—(क्रोधातुर) फूहड़ कहीं की! क्या तू इसे डाबका पानी समझती है।

भूतने अधर्म्मसे कहा—यह वही किसान है जो रंक

होनेपर भी रोटी खाये जानेकी कुछ भी चिन्ता नहीं किया करता था।

किसान स्त्रीको झिड़ककर आप मद्य पिलाने लगा। उसी समय वहाँ कोई साधु भोजन माँगने आ गया। किसान उसे धतकारकर बोला—जाओ यहाँसे क्यों भीतर घुसे आते हो? यहाँ भोजन-वोजन कुछ नहीं।

अधर्म्म बड़ा प्रसन्न हुआ। भूत बोला—अभी क्या है, देखते जाइये क्या-क्या होता है।

सब किसान पहला प्याला पीकर मस्त हो गये और आपस में चिकनी-चुपड़ी बातें करने लगे।

अधर्म्म—वाह भाई भूत, क्या कहना है, यदि यह लोग मद्यके भक्त बनकर एक दूसरेसे लोमड़ियोंकी तरह कपटकी बात करने लगेंगे तो हमारा राज्य अचल हो जायगा।

भूत—महाराज अभी तो पहला ही प्याला है, दूसरा प्याला पीने दीजिये, फिर इनको आप बाघके रूपमें देखेंगे।

दूसरा प्याला पीनेकी देर थी कि वह लोग लगे आपसमें कोलाहल और हाथापाई करने। किसीने किसीकी नाक काट ली, किसीने किसीका कान। स्वयं घरके मालिकपर बेभाव की पड़ी।

अधर्म्म—(अति प्रसन्नतासे) वाह वाह, क्या खूब!

भूत—बस, तीसरा प्याला पेटमें गया कि सबके सब सूअर बने।

किसानोंने तीसरा प्याला पी लिया। दृश्य ही और हो गया। वह पशु समान नंगे होकर नाचने लगे। कोई इधर भागा, कोई उधर, कोई कहीं गिर पड़ा है, कोई कहीं। किसान दौड़कर मोरीमें गिर पड़ा और सूअरकी भांति वहीं पड़ा हल्ला मचाता रहा।

अधर्म्म—भाई भूत, तुमने तो बड़ा काम किया, यह मंत्र तो एक ही है। मेरी समझमें तुमने मद्य बनाते समय उसमें लोमड़ी, बाघ और सूअरका रुधिर अवश्य मिला दिया है, जिससे यह बारी-बारी लोमड़ी, बाघ और सूअर बन गये।

भूत—महाराज, यह बात नहीं, यह नियम है कि मनुष्यको नित्य केवल क्षुधानिवारण करनेको अन्न मिलता रहता है। तो यह कोई उपद्रव नहीं करता। ज्योंही उसे अधिक मिला कि उसने धूम मचायी। बस, यही मंत्र मैंने इस किसानपर चलाया है। जबतक वह निर्धन था, सन्तोषसे जीवन व्यतीत करता था। मैंने उसे इतना अन्न दिया कि उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गयी। मद्य बनाना सीखकर उसने परमेश्वरके दिये हुए गुणकारक पदार्थोंको विषयभोगके निमित्त मादक बना डाला। लोमड़ी, बाघ और सूअरका अंश उसमें पहलेसे उपस्थित था। अवसर पाते ही सब कुछ प्रकट हो गया। अब वह मद्यभक्त होकर सदैव पशु बना रहेगा।

अधर्म्मने अति प्रसन्न होकर भूतको प्रधानकी पदवी दे दी।

———

१३

एक आदमीको कितनी भूमि चाहिये

१

एक दिन उर्मिला अपनी छोटी बहन निर्मलासे गांवमें मिलने आयी। उर्मिला एक धनी सौदागरको व्याही हुई थी और निर्मला गांवमें एक गरीब किसानके साथ। भोजन करते समय उनमें यों बातचीत होने लगी।

उर्मिला—निर्मला, मुझे तो गांवमें रहना पड़े तो जरा भी जी न लगे। देखो हम नगरमें रहकर कैसे सुन्दर वस्त्र पहनती हैं, नाना प्रकारके व्यञ्जन खाती हैं, नाटक तमाशे देखती हैं, बाग बगीचोंमें सैर करती हैं और सदैव रगरलियां मनाती हैं।

निर्मला—(अभिमानसे) मुझसे कहती हो? मैं तो कभी भी तुम्हारे साथ अदला-बदली न करूं। माना कि हम मोटा-झोटा खाते हैं, लेकिन हमें रात-दिन चिन्ता तो नहीं घेरे रहती। तुम्हें तो सदैव चिन्ता लगी रहती है। हानि-लाभ दो जोड़े भाई हैं। जो आज राजा है वही कल कंगाल है। यहां तो सदैव एक रस रहते हैं। किसान धनवान नहीं बन सकते, लेकिन अन्न-वस्त्रकी तो उनको कमी हो ही नहीं सकती।

उर्मिला—अन्नकी एक ही कहो, तुम तो पशु हो, रीति-नीति आचार व्यवहार क्या जानो। कितना ही मरो-खपो, तुम और

तुम्हारी सन्तान एक दिन इसी खादके ढेरपर प्राण त्याग कर देगी और बस।

निर्मला--इससे क्या, मरना तो एक दिन सभीको है। खेतीका काम कठिन है, पर हमें किसीका भय नहीं, न किसीको मस्तक झुकाना पड़ता है, नगरमें रहते हुए मनुष्यका चित्त चंचल रहता है। क्या जाने कल तुम्हारा पति मद्यसेवी बनकर जुआरी और वेश्यागामी हो जाय। ऐसी बातें आये दिन सुननेमें आया करती हैं।

मथुरा चारपाईपर पड़ा हुआ यह बातें सुन रहा था। मनमें सोचने लगा--मेरी स्त्री कहती तो सच है, हम बालपनसे ही खेतोंके काममें लगे रहते हैं कि हमें कुकर्म्म करनेका ध्यान-तक नहीं आता, पर दुःख यही है कि हमारे पास कुछ नहीं। हमारे पास खेत नहीं है। यदि मेरे पास धरती मुक्ता हो जाय तो फिर चाँदी है।

संयोगसे अधर्म्म भी वहां बैठे यह बातें सुन रहे थे, मथुरामें धरतीकी लालसा उत्पन्न होते देखकर प्रसन्न हो कहने लगे कि इसी तृष्णाके वश एक दिन इसका सर्वनाश करूँगा।

२

इस गांवके समीप एक जमींदारिन रहती थी, जिसके पास ३०० बीघे भूमि थी। उसने एक बूढ़ा सिपाही कारिंदा रख छोड़ा था। वह कारिंदा असामियोंको बड़ा दुःख देता था। कभी-कभी

मथुरा अपने पशुओंको सम्भाल-सम्भालकर रखता था पर वे उसके खेत-खलिहानमें चले ही जाते थे। कई बेर उसकी और कारिंदेकी लड़ाई हुई, मथुरा अत्यन्त दुःखी हो गया था।

कुछ दिन उपरान्त यह चर्चा फैली कि बुढ़िया अपनी रियासत बेचती है और गाँवका बनिया उसे मोल लेनेपर तैयार है। गाँववाले डरे कि यदि बनिया मालिक बन गया तो उसके सिपाही कारिन्देसे भी अधिक दुःख देंगे। उचित यह है कि सब मिलकर रियासत खरीद लें, परन्तु अधर्म्मने उनमें ऐसी फूट डाली कि वे लोग कोई निश्चय न कर सके। तब उन्होंने फैसला किया कि लोग अपने-अपने नामसे भूमि खरीदें। बुढ़िया इस पर भी राजी हो गयी। एक किसानने पचास बीघा धरती बुढ़ियासे इस शर्तपर मोल ली कि आधा दाम तुरन्त दूँगा और आधा एक वर्ष पीछे।

यह सुनकर मथुराके मनमें भी ईर्षा उत्पन्न हुई। उसने विचारा कि कुछ भी हो चालीस बीघा धरती अवश्य मोल लेनी चाहिये। सौ रुपये घरमें जमा थे, बाकी कुछ अनाज और एक बैल बेचकर चालीस बीघा धरती खरीद ही ली। आधा दाम पहले दे दिया, आधा दो वर्ष पीछे चुका देनेका वचन दिया।

मथुरा बड़ा पुरुषार्थी था, खूब मेहनतसे खेत जोते बोये। फसल अच्छी लगी। दो वर्षके भीतर-भीतरही ऋण चुक गया। अब मथुरा अपने खेतों, पशुओं, भूसे, खलियान, चरांदको देखकर फूला न समाता। यह खेत वहाँ पहले भी थे और मथुरा उन्हें नित्य

देखा भी करता था, परन्तु ममत्व हो जानेके कारण उनको देखनेमें अब कुछ और ही आनन्द मिलता था।

३

अब मथुराके पास अपनी जमीन थी और उसके दिन सुखसे कट सकते थे परन्तु पड़ोसी बड़ा दुःख देने लगे। कभी कोई खेतमें बैल छोड़ देता, कभी गांवके बालक चरांदमें डंगर चराने लगते। पहले-पहले तो वह सब सहन करता रहा, पर कहांतक, उसने विचारा कि यदि इस प्रकार चुप लगाये रहूँगा तो यह लोग चैन न लेने देंगे। आखिर उसने नालिश करके कई मनुष्योंपर दण्ड लगवा दिया। लोग इससे जलकर उसे और भी दुःख देने लगे।

एक रात दयारामने मथुराकी धरतीमेंसे सारे वृक्ष काट डाले। उसने प्रातःकाल जाकर देखा कि सारे वृक्ष कटे पड़े हैं। आग हो गया, सोचने लगा, यह किसकी शरारत है? कोई एक आध वृक्ष काट लेता तो खैर कुछ बात न थी, पर इस चांडालने तो एक भी वृक्ष न छोड़ा, हो न हो यह उपद्रव तो दयारामने किया है।

बस, क्रोधसे भरा हुआ वह दयारामके घर पहुंचा और बोला—तुमने वृक्ष क्यों काटे? दयाराम लड़ने-मरनेपर तैयार हो गया। कैसे वृक्ष? किसने काटे? जाओ नहीं तो अभी सिर फोड़ देता हूँ। मथुरा भला यह बातें कब सह सकता था, तुरन्त

कचहरीमें पहुंचा और नालिश ठोंक दी। फैसला होनेपर दयाराम कोरा बच गया। वृक्ष काटनेका कोई साक्षी न था। मथुरा जल-भुनकर हाकिमोंको गालियाँ देने लगा कि तुम चोरोंको छोड़ देते हो, तुम स्वयं चोर हो। इत्यादि।

तात्पर्य यह कि अब कोई दिन ऐसा न था कि पड़ोसियोंसे उसकी लड़ाई-झगड़ा न हो। पहले जब घरकी एक बिस्वा धरती पास न थी तो वह बड़ा सुखी था। अब नित्य क्लेश रहता था। कुछ समझमें न आता था कि क्या करूं।

इन्हीं दिनों गाँवमें यह चर्चा हुई कि लोग घर-बार छोड़कर किसी नये देशमें जानेका विचार कर रहे हैं; मथुरा बड़ा प्रसन्न हुआ कि उजाड़ हो जानेपर बहुतसी धरती मिल जायगी, आनन्द-पूर्वक दिन काटूंगा।

एक दिन मथुराके घरमें एक अतिथि आया। मथुराने उसका बड़ा आदर सत्कार किया। रात्रिको भोजन करते समय अतिथि बोला कि सरकारने पंजाबमें एक नयी बस्ती बसायी है। मनुष्य पीछे २५ बीघा जमीन मिलती है। जमीन बड़ी सुन्दर है, अभी एक मनुष्य खाली हाथ वहां आया था। दो वर्षके अन्दर ही अन्दर मालामाल हो गया।

यह सुनकर मथुराको तृष्णाने घेरा। कहने लगा—मैं इस अन्धकूपमें क्यों सड़ूं? घरबार बेंचकर उस नई बस्तीमें ही क्यों न चला जाऊं? यहां तो पड़ोसियोंने विपत्तिमें जान डाल रखी है। परन्तु पहले जाकर देख आऊँ।

उन दिनों रेल न थी। तीन सौ मील पैदल चलनेका कष्ट उठाकर वहाँ पहुंचा। देखा कि अतिथि सच कहता था। मनुष्य पीछे २५ बीघा जमीन मिली हुई है। यदि कोई चाहे तो एक रुपया बीघापर अधिक धरती भी मोल ले सकता है।

बस फिर क्या था, देख-भाल करके तुरन्त घरको लौट आया और धरती, मकान, पशु आदि सब बेच बाचकर नवीन बस्तीको चल दिया। हाय तृष्णा!

४

मथुरा कुटुम्ब सहित नई बस्तीमें पहुँचा और चौधरियोंसे मित्रता करके १२५ बीघा धरती ले ली और मकान बनाकर वहां निवास करने लगा।

इस बस्तीमें यह रीति थी कि एक ही खेतको लगातार दो वर्ष बाहने बोनेके पीछे परती छोड़ना पड़ता था कि धरती निकम्मी न होने पावे। लोभ पापका मूल है। पहले पहल तो मथुरा आनन्द सहित अपना काम करता रहा परन्तु अब उसके ध्यानमें १२५ बीघा धरती भी थोड़ी थी। उसकी लालसा तो यह थी कि सारी धरतीमें गेहूं बोयें। धरती परती छोड़े तो कहाँसे छोड़े! फिर उसने देखा कि बहुत लोग पंचायतसे अलग जमीन लेकर खेती करके धन संचय करने लगे हैं। अतएव वह सदा चिन्ताग्रस्त रहने लगा।

फल यह हुआ कि वह दूसरोंसे खेत लेकर बटाईपर खेती

करने लगा। यद्यपि बहुत सा धन एकत्र कर चुका था, तिसपर भी तृष्णा बढ़ती ही जाती थी। तीसरे वर्ष ठीक फसलके समय जब बटाईवाली धरतीमें गेहूँ पके खड़े थे तो मालिकने अपनी धरती छुड़ा ली। फिर तो मथुराके क्लेशकी कोई सीमा न रही। कहने लगा कि यदि आज यह धरती मेरी अपनी होती तो क्या ऐसा हो सकता था।

दूसरे दिन मालूम हुआ कि पड़ोसी अपनी १३०० बीघा धरती १५००) रुपयेमें बेचता है। सौदा पक्का हो रहा था कि अकस्मात् एक अतिथि आ पहुँचा।

अतिथि—(मथुरासे) तुम बड़े ही मूर्ख हो कि १५००) रुपयेमें १३०० बीघा धरती मोल लेते हो। गुजरात देशमें क्यों नहीं चले जाते? वहाँ धरती बड़ी सस्ती है। मैंने वहाँ १०००) रुपयेमें १३००० बीघे धरती मोल ली है, वहाँका राजा बड़ा सीधा-सादा है। बस, वहाँ जाकर उसे प्रसन्न कर लो, जितनी धरती चाहोगे मिल जायगी।

मथुराने उसका कहना मान लिया और इस बस्तीमें धरती लेनेका विचार छोड़ दिया।

५

दूसरे दिन मथुरा कुटुम्बको बस्तीमें छोड़कर एक नौकर साथ ले, १०००) रुपये पल्ले बांध, गुजरातको चल दिया। पांच सौ मील चलनेपर वहां पहुंचकर उसने देखा कि सब लोग डेरों-

में रहते हैं, न कोई धरती बोता है न अन्न खाता है। गाय, भैंस, घोडे इत्यादि तराईमें चरते फिरते हैं, स्त्रियाँ दूध दुहकर मक्खन आदि बना लेती हैं। यही उनकी जीविका है। सब लोग हँसते-खेलते, गाते-बजाते, आनन्द सहित काल व्यतीत कर रहे हैं। कोई झगड़ा है न लड़ाई। सबके सब अनपढ़ और मूर्ख हैं परन्तु कपटका नाम नहीं।

मथुराको देखकर वह लोग बड़े आनन्दित हुए और बड़ी आव भगतसे उसे एक डेरेमें ले गये। मथुराने उन्हें कुछ पदार्थ भेंट किये।

लोग—(भेंट लेकर) महाशय, यहाँकी यह रीति है कि जो कोई हमें कुछ भेंट देता है, उसके बदले हम उसे कुछ अवश्य देते हैं, इस कारण आप बतलाइये कि आप क्या चाहते हैं।

मथुरा—मुझे केवल धरतीकी अभिलाषा है, हमारे देशमें बस्ती बढ़ जानेके कारण धरतीमाताने फल देना छोड़ दिया है। तुम्हारी धरती अच्छी मालूम होती है।

लोग—(हँसकर) हा हा ; यह तो कोई बात नहीं, धरती जितनी चाहो ले लो, परन्तु हम अपने राजासे पूछ लें।

६

इतनेमें राजा भी वहाँ आ गया। यह बातें सुनकर वह मथुरासे कहने लगा—हाँ, जितनी भूमि चाहो ले लो।

मथुरा—मैं आपको धन्यवाद देता हूँ, मुझे बहुत नहीं

चाहिये। हाँ, इतनी बात है कि धरती नापकर पट्टा लिख दीजिये। मरना जीना बना हुआ है, लिखा-पढ़ी बिना सौदा ठीक नहीं होता। आज आप दे दें, कल स्यात् आपकी सन्तान मुझसे धरती छीन ले तो क्या बना लूँगा?

राजा—बहुत ठीक, धरती नापकर पट्टा लिख देंगे।

मथुरा—दाम क्या होंगे?

राजा—हम एक बात जानते हैं, दूसरी नहीं। बस एक दिन के एक सहस्र मुद्रा।

मथुरा—दिनका क्या हिसाब है; मैंने नहीं समझा।

राजा—भाई साहब, बीघा सीघा हम कुछ नहीं जानते, हम तो एक दिनके एक सहस्र मुद्रा लेते हैं, सूर्योदयसे सूर्यास्त-तक जितना चक्कर कोई मनुष्य काट ले, उतनी ही धरती उसकी हो जाती है।

मथुरा—क्या कहा, एक दिनमें तो मनुष्य बड़ा भारी चक्कर काट सकता है।

राजा—हाँ, तो क्या हुआ, परन्तु एक बात यह है कि जहाँसे चलोगे सूर्यास्तसे पहले पहले तुम्हें वहाँ ही आना पड़ेगा।

मथुरा—भला चक्करका चिह्न कौन लगायेगा?

राजा—तुम एक कुदाल ले जाना और गढ़े देते जाना, परन्तु यह याद रहे कि जहाँसे चलो सूर्यास्तसे पहले वहीं आ जाओ।

मथुरा—बहुत अच्छा।

यह बातें सुनकर मथुरा अत्यन्त प्रसन्न हुआ।

७

निद्रा कहां, मथुरा रातभर इसी सोच विचारमें रहा कि मैं ३५ मीलका चक्कर सहजमें काट सकता हूँ। ओ हो, ३५ मील! फिर तो मैं बड़ा इलाकेदार बन जाऊंगा। सौभाग्यसे दिन भी बड़े हैं! ३५ मील धरती बहुत होती है! घटिया धरती तो बेच डालूंगा, अच्छे-अच्छे खेत आप रख लूंगा।

दिन निकलनेके पहले मथुराकी एक क्षणके लिये आंखें झपक गयीं। क्या स्वप्न देखता है, कि गुजरात देशका राजा सम्मुख खड़ा हँस रहा है। पास जाकर हँसनेका कारण पूछा तो जान पड़ा कि राजा नहीं वह तो गुजरात देशकी सूचना देनेवाला अतिथि है। तुम कहाँ! पर मालूम हुआ वह तो नवीन बस्तीकी बात बतलानेवाला बटुक है। समीप जाकर देखने लगा तो बटुक कहाँ! वहाँ तो साक्षात अधर्मराज मुंह बाये खड़े हैं और उनके पैरोंके नीचे धोती कुरता पहने एक पुरुष चित्त मरा पड़ा है। झुककर देखा तो मथुरा! मथुरा भयभीत होकर उठ बैठा। ओ हो! स्वप्नमें भी क्या-क्या भयंकर दृश्य दिखायी पड़ते हैं।

सूर्य्य उगते ही वह राजासहित जङ्गलको चल दिया।

८

जंगलमें पहुंचकर राजाने कहा कि जहाँतक दृष्टि जाती है, हमारा ही देश है, कहींसे चक्कर काटना आरम्भ कर दो। देखो, मैं यह छड़ी रख देता हूं। बस सूर्यास्तसे पहले पहले यहाँही आजाना।

मथुरा छड़ीपर एक हजार रुपये रखकर रोटी पल्ले बांध, छड़ी हाथमें ले, चक्कर काटने लगा। तीन मील चलनेपर एक पहर दिन चढ़ आया, उसे गरमी सताने लगी।

मथुराने मनमें कहा दिनके चार पहर होते हैं, अभी तो तीन पहर शेष हैं। अभी लौटना उचित नहीं, जूते उतार डालूं, नंगे पैर चलनेमें सुभीता होगा, तीन मील और जाकर बाईं ओर फिर जाऊंगा। अहा हा! यह टुकड़ा तो बहुत ही अच्छा है, भला यह कहीं छोड़ने योग्य है। यहाँ तो ज्यों-ज्यों आगे बढ़ता हूँ अच्छी ही अच्छी धरती आती जाती है। (फिरकर) ओ हो। राजा आदि तो कोई दिखाई नहीं पड़ता, शायद दूर निकल आया। अब लौटना चाहिये। गरमी बढ़ गयी है, प्याससे गला सूखा जाता है। उसके बाईं ओर लौटते लौटते दोपहर हो गया तब वह जरा दम लेनेको बैठ गया। रोटी निकालकर खायी, पानी पिया और फिर चल खड़ा हुआ। सूर्य्यका तेज सहा न जाता था। गरमी इतनी थी कि शरीर झुलसा जाता था। परन्तु तृष्णाका भूत सिरपर सवार था। करे तो क्या करे, कहने लगा, क्या चिन्ता है, अब दुःख फिर सुख, चलो। चलते-चलते दूर निकल गया, तब उसे ध्यान आया यह तो बुरा हुआ। मैंने बड़ी चूक की, अब यदि पूरा घेरा देकर धरतीको ठीक चौकोर बनाऊंगा तो सूर्य्यास्तसे पहले छड़ीपर पहुंचना असम्भव है। अच्छा तिकोना ही रहने दो, यहींसे लौट चलो, ऐसा न हो कि सूर्य अस्त हो जाय और मैं बीचमें ही रह जाऊँ।

६

मथुरा नाककी सीध छड़ीकी ओर चलने लगा, गरमीके मारे उसका मुंह सूख गया, शरीर जल उठा, पाँव घायल हो गये, टांगें थक गयीं, ठहरे कैसे। सूर्य्य उसका चाकर हुआ तो था ही नहीं कि उसके कारण खड़ा रह जाय।

सोचने लगा—हाय हाय! यह मैंने किया क्या? मुझे लालचने मार गिराया। सूर्य्य डूबनेको आया, छड़ीका अभीतक कहीं पता ही नहीं, करू तो क्या करूँ! हे भगवान!

अब साफा सिरसे फेंक लाठी छोड़कर वह दौड़ने लगा।

दौड़ते-दौड़ते छाती लोहारकी धौंकनी बन गयी। उसका हृदय धड़कने लगा, वह सिरसे पैरोंतक पसीनेमें डूब गया। उसकी टांगें लड़खड़ा गयीं। उसने समझा कि अब प्राण गये। चिल्ला पड़ा—हाय, सारीकी लालचमें आधी भी खो बैठा! परन्तु इतना कष्ट उठाकर यदि यहीं ठहर जाऊँगा तो लोग मुझे महामूर्ख समझेंगे, दौड़ो जैसे बन सके छड़ीपर पहुँचो।

इतनेमें उसे विराट देशवासियोंका शब्द सुनायी देने लगा, सूर्य्य डूबनेको हुआ, लाली छा गयी, छड़ी सामने दिखायी देने लगी, पास राजा बैठा है, छड़ीपर एक सहस्र मुद्रा पड़ी हुई है। उसे रात्रिवाला स्वप्न स्मरण हुआ। निराश होकर बोला—धरती तो मिल गयी, परन्तु क्या मैं छड़ीपर पहुंच सकता हूँ?

इतनेमें सूर्य्य अस्त हो गया। टीलेपर वह किस प्रकार

पहुँचे। वह चिल्ला उठा, हाय हाय! मेरा सारा परिश्रम निष्फल हुआ, सूर्य्य अस्त हो गया।

लोग टीलेपर बैठे हुए पुकारने लगे, नहीं, नहीं, सूर्य्य अभी अस्त नहीं हुआ, दौड़ो।

वह जी तोड़कर दौड़ा और अन्तमें टीलेपर चढ़ गया, देखा कि छड़ी पड़ी है, राजा पास बैठा हँस रहा है। फिर स्वप्न याद आया, उसकी टाँगें कांप गयीं। वह मुँहके बल पृथ्वीपर गिर पड़ा।

गिरते हुए उसका हाथ छड़ीको जा लगा। राजा बोला—बड़ा उद्यमी है, इसने कितनी धरतीपर अधिकार जमा लिया।

नौकर जाकर उसे उठाने लगा तो देखा कि मथुराके मुखसे रुधिरकी धार बह रही है और वह मरा पड़ा है।

फिर क्या था, सबने वहीं जंगलसे लकड़ियां एकत्र करके उसका दाह-कर्म्म किया और सबको विदित हो गया कि उसे केवल डेढ़ गज धरतीकी आवश्यकता थी।

१४

अंडेके बराबर दाना

एक समय खेलते-खेलते नदीमेंसे बालकोंको अण्डेके बराबर अनाजका एक दाना मिला। पाससे एक राही जा रहा था,

उसने एक आनेमें मोल लेकर उस दानेको किसी राजाके हाथ बेच डाला।

राजा देखकर बड़ा चकित हुआ, सारे मन्त्रियोंको एकत्र करके पूछने लगा कि यह क्या है। कोई न बता सका। राजाने उसे खिड़कीमें रख दिया। एक दिन मुर्गीने आकर उस दानेमें छेद कर दिया, तब मन्त्रियोंने जाना कि वह अनाजका दाना है।

राजाने अपने राज्यके समस्त विद्वानोंको आज्ञा दी कि खोज लगावें कि ऐसा दाना किस देशमें उगता है। विद्वानोंने पुस्तकें छान मारीं, कुछ पता न लगा। उन्होंने आकर राजासे निवेदन किया कि महाराज, हमारी पुस्तकोंमें इस दानेकी कहीं व्याख्या नहीं मिलती, किसी किसानको बुलाकर पूछना चाहिये।

राजाने सेवक भेजकर एक किसानको बुलाया। किसान बूढ़ा, कूबड़ा, पीतवदन, मुँहमें दाँत न पेटमें आँत, आँखोंसे अन्धा, कानोंसे बहरा, दोनों हाथोंमें लाठियाँ लिये गिरता पड़ता राजाके सामने आया।

राजा—(हाथमें दाना देकर) तुम बतला सकते हो कि ऐसा दाना किस देशमें उत्पन्न होता है? तुमने ऐसा दाना कभी मोल लिया है अथवा अपने खेतमें बोया है?

किसान—(दाना टटोलकर) पृथ्वीनाथ, मैंने ऐसा दाना कभी नहीं देखा, न कभी मैंने मोल लिया न कभी बोया, मैंने तो यही साधारण दाने देखे हैं, स्यात् मेरे पिताको कुछ मालूम हो, उनसे पूछ देखिये।

राजाने उसके पिताको बुला भेजा। पिताके हाथमें एक लाठी थी वह बेटेसे अच्छी थी, आँख कानने भी जवाब न दिया था।

राजा—(दाना दिखलाकर) बाबा, यह दाना किस देशका है ? तुमने ऐसा दाना कभी खरीदा अथवा बोया है ?

पिता—महाराज, मैंने ऐसा दाना कभी नहीं बोया, मोल लेनेके विषयमें मेरी यह विनती है कि मेरे समयमें रुपयेकी चाल न थी। अनाजके बदलेमें ही सब व्यवहार चलता था, हाँ इतना कह सकता हूँ कि हमारे समयमें आजकलसे दाना बड़ा पैदा होता था, स्यात् मेरे पिताको कुछ मालूम हो, उसे बुलवा भेजिये।

राजाने उसके पिताको बुलाया, वह हट्टा-कट्टा, नख-सिखसे ठीक, हाथमें लाठी न सोटा, राजाके सामने आया। राजाने उसे दाना दिखाया और पहलेकी भाँति वही प्रश्न किया।

बूढ़ा—(हाथमें दाना लेकर) स्वामी, यह दाना मैंने बहुत दिनोंसे देखा है। (चखकर) हाँ, ठीक वही है।

राजा—भला यह तो बतलाओ कि ऐसा दाना कब और कहाँ होता था ? तुमने ऐसा दाना मोल लेकर कभी अपने खेतमें बोया था ?

बूढ़ा—मेरे समयमें सब जगह ऐसा ही दाना होता था, मैं ऐसे ही दानोंसे पला हूँ, हमारे खेतोंमें सर्वदा ऐसे ही दाने उगा करते थे।

राजा—परन्तु उन्हें तुम कहींसे मोल लाया करते थे क्या ?

बूढ़ा—(हंसकर) महाराज, उस समय मोल लेने अथवा बेंचनेका पाप-कर्म कोई नहीं करता था। हम रुपयेका नामतक भी नहीं जानते थे, सबके पास मुक्ता अनाज होता था।

राजा—तुम्हारे खेत कहाँ थे?

बूढ़ा—परमात्माकी पृथ्वी हमारे खेत थे; जो कोई जहां चाहता था हल चला सकता था। धरती किसी एक आदमीकी न थी। सब लोग अपने हाथोंकी कमाईसे पेट भरते थे।

राजा—अच्छा, पहले यह बतलाओ कि उस समय धरती ऐसा बड़ा दाना क्यों उत्पन्न करती थी, अब क्यों नहीं करती? दूसरे तुम्हारे पोता दो लाठियोंके सहारे चलता है, तुम्हारा बेटा एक के, तुम बिना सहारे चलते हो, तुम्हारी आँखें अच्छी हैं, दाँत एक भी नहीं टूटा यह बात क्या है?

बूढ़ा—स्वामी, इसका कारण यह है कि इस समय मनुष्योंने अपना काम करना छोड़ दिया है। दूसरोंकी कमाईसे अपना उदर पालन करते हैं। प्राचीन समयमें लोग परमात्माकी आज्ञा पालन करके अपने हाथोंसे प्राप्त की हुई वस्तुको अपनी वस्तु समझते थे, दूसरोंकी कमाईपर हाथ नहीं बढ़ाते थे।

———

१५

धर्म्म-पुत्र

१

किसी महात्माके वरदानसे एक अति निर्धन किसानके एक पुत्र हुआ। महात्माने यह बतला दिया था कि जन्म होते ही किसी पुरुषको बालकका धर्म्म-पिता और किसी स्त्रीको उसकी धर्म्म-माता बना देना, नहीं तो बालकको जानकी जोखिम है।

पुत्र-जन्मके अगले दिन किसानने एक पड़ोसीसे कहा कि मेरे बालकके धर्म्म-पिता बन जाइये। उसने उत्तर दिया कि मैं ऐसे कंगालके पुत्रका धर्म्म-पिता नहीं बनता। इसपर बेचारा किसान सारे गाँवमें फिरा, पर किसीने उसके पुत्रका धर्म्म-पिता बनना स्वीकार न किया। तब वह निराश होकर दूसरे गाँवको चल दिया। राहमें एक महापुरुषसे उसकी भेंट हुई।

महात्मा—बच्चा, कहाँ जाते हो?

किसान—महाराज, कहाँ जाते हैं, परमात्माने इस बुढ़ापेमें आँखोंका तारा, जीवनका सहारा, नामलेवा, पानीदेवा एक पुत्र दिया है। उसके धर्म्म-पिता, माता बनाये बिना उसका जीना कठिन है। महात्माका वरदान ही ऐसा है। मेरे निर्धन होनेके कारण कोई उसका धर्म्म-पिता नहीं बनता। अब किसी दूसरे

गांवमें जाता हूँ; शायद कोई दया करके बालकका धर्म्मपिता बन जाय।

महात्मा—ओह, यह बात है, मैं बन जाता हूँ।

किसान—(प्रसन्न होकर) आपने मुझपर बड़ी दया की मगर अब उसकी धर्म्म-माता कौन बने ?

महात्मा—यहाँसे थोड़ी दूरपर एक नगर है। चौराहेपर एक धनी वणिक्‌का घर है, वहाँ चले जाओ। द्वारपर ही तुम्हारी उससे भेंट हो जायगी। यह सब वृत्तान्त उसे सुनाकर कहना कि आप अपनी पुत्रीसे कह दीजिये कि मेरे पुत्रकी धर्म्म-माता बन जाय।

किसान—ऐसे धनी पुरुषसे यह बात कैसे कह सकता हूं ? वह तो मुझसे स्यात् बात भी न करे।

महात्मा—नहीं, ऐसी बात नहीं। तुम तुरन्त चले जाओ।

किसान उस सौदागरके पास पहुँचा। उसने बड़े हर्षसे अपनी पुत्रीको उसके पुत्रकी धर्म्म-माता बनाना मंजूर कर लिया।

२

यह बालक बड़ा पराक्रमी और बुद्धिमान था। दस वर्षकी अवस्थामें उसकी बुद्धि ऐसी अच्छी थी कि जो विद्या अन्य बालक पांच वर्षमें सीख सकते थे वह एक वर्षमें सीख लेता था।

एक बार दीपमालाके अवसरपर बालक माता-पिताकी आज्ञा लेकर नगरमें अपनी धर्म्म-माताको प्रणाम करने गया। सन्ध्या समय घर लौट आनेपर वह पितासे कहने लगा—

पिताजी, अपनी धर्म्म-माताको तो प्रणाम कर आया, पर धर्म्म-पिताका दर्शन करना भी आवश्यक है। कृपा करके मुझे बताइये उनका स्थान कहां है।

पिता—बेटा, हमें स्वयं इसका बड़ा शोक है कि हम उनका निवासस्थान नहीं जानते। तुम्हारे नामकरणके बाद हमने उन्हें कभी नहीं देखा। क्या जाने मर गये कि जीते हैं।

बालक—मैं उनके दर्शन करूंगा, आप कृपाकर मुझे आज्ञा दीजिये। क्या हुआ, उद्योग करनेसे कहीं न कहीं भेंट हो ही जायेगी।

माता-पिताने बालकको आज्ञा दे दी और उसने घरसे बाहर निकलकर जंगलकी राह ली।

३

अकस्मात् राहमें एक महात्मा दिखायी पड़े।

महात्मा—बेटा, कहां जाते हो?

बालक—अपने धर्म्म-पिताकी खोजमें। मैंने आजतक कभी उनके दर्शन नहीं किये। मुझे उनके दर्शनकी बड़ी अभिलाषा है, पर मेरे माता-पिता कहते हैं कि वह मेरे धर्म्म-पिता बननेके दिन-से फिर कभी दिखाई नहीं दिये। इस कारण माता-पिताकी आज्ञा लेकर मैं अपने धर्म्म-पिताको ढूँढ़ने जाता हूँ।

महात्मा—वाह वाह, लो तुम्हारा काम बन गया। मैं ही तुम्हारा धर्म्म-पिता हूँ।

बालकने प्रसन्न होकर उनके चरण छूये और पूछा—तो अब आप किधर जा रहे हैं? यदि मेरे घर चलनेका विचार है तो अहोभाग्य, नहीं तो मैं आपके साथ चलूँगा।

महात्मा—मुझे इस समय तुम्हारे घर चलनेका अवकाश नहीं और बहुत काम करने हैं। मैं कल निज स्थानको लौटूँगा तुम कल वहाँ आ जाना।

बालक—मैं आपका घर नहीं जानता, आऊँगा कहाँ?

महात्मा—कल प्रातःकालको अपने घरसे बाहर निकलकर सीधा पूर्व दिशाकी राह लेना। कुछ दूर चलकर तुम्हें जङ्गल मिलेगा। वहाँ एक घाटी है, उस घाटीमें बैठकर तनिक विश्राम करके देखना कि क्या होता है। जो कुछ देखो उसे भूलना नहीं। फिर वहाँसे आगे चल देना। जङ्गल निकल जानेपर एक बाग आयेगा। उसमें सुनहरी छतवाला स्थान मेरा घर है। मैं द्वारपर ही तुम्हें मिल जाऊँगा।

बालक—जो आज्ञा।

यह कहकर धर्म्मपिता अन्तर्धान हो गये और बालक अपने घर लौट आया।

४

दूसरे दिन प्रातःकाल बालकने जङ्गलकी राह ली। पूर्व दिशाकी ओर चलते-चलते वह घाटीमें पहुँच गया। देखा कि बीचमें चीड़का एक वृक्ष है; उसकी शाखामें रस्सेसे बँधी हुई एक

बड़ी शहतीर लटक रही है और ठीक उसके नीचे शहदसे भरा हुआ एक कुण्ड है। बालक बैठकर देखने लगा। इतनेमें चार बच्चोंके संग उसे एक रीछनी आती दिखायी दी। वह सब दौड़कर मधु-कुण्डके पास पहुंचे। रीछनी लटकते हुए शहतीरको सिरसे ढकेलकर मधु खाने लगी और बच्चोंने भी वैसा ही किया। इतनेमें शहतीर उलटकर बच्चोंको लगी। रीछनीने उसे फिर धक्का दिया। वह उलटकर एक बच्चेकी पीठपर लगी, बच्चे भाग गये। रीछनीने शहतीरको फिर बड़े जोरसे धक्का दिया। उस समय बच्चे आकर मधु खाने लगे थे। बल्ली उलटकर एक बच्चेको ऐसी लगी कि वह मर गया। रीछनीको क्रोध आ गया। उसने बल्लीको ऐसा झटका दिया कि रस्सा टूट गया, बल्ली रीछनीके सिरपर गिरी और वह मर गयी।

५

बालक इस दृश्यका अर्थ कुछ न समझा और वहाँसे चल दिया। बाग़में पहुँचकर फाटकपर धर्म्मपितासे उसकी भेंट हो गई। वह बालकको भीतर ले गया। बालकने ऐसा सुन्दर और रमणीक स्थान कभी नहीं देखा था। धर्म्म पिताने उसे सारा महल दिखाया और तब एक द्वारपर खड़ा होकर कहने लगा—

बेटा, देखो इस द्वारमें ताला नहीं, केवल मोहर लगी हुई है। यह द्वार खुल सकता है, परन्तु तुम कभी इसके खोलनेका इरादा न करना। जबतक चाहो, इस घरमें रहो पर इस द्वारको कभी

न खोलना। यदि भूलकर कभी खोल बैठो तो रीछनीवाला दृश्य याद रखना, भूल न जाना।

अगले दिन धर्म्म-पिता तो कहीं बाहर चला गया, धर्म्म-पुत्र वहाँ आनन्दपूर्वक निवास करने लगा। रहते-रहते तीन वर्ष बीत गये। एक दिन मोहरवाले द्वारपर खड़ा होकर वह विचार करने लगा कि धर्म्म-पिताने इस द्वारको खोलनेका निषेध क्यों किया है, देखूँ तो इसके भीतर है क्या।

धक्का देनेपर मोहर टूट गई, द्वार खुल गया, देखा कि अन्दर बड़ा दालान है। बीचमें एक सिंहासन पड़ा हुआ है और उस-पर एक गदा रक्खी हुई है। धर्म्म-पुत्रने झटसे सिंहासमपर चढ़-कर गदा हाथमें उठा ली। गदा उठाते ही दालान तो लोप हो गया, उसे सारा संसार दृष्टिगोचर होने लगा। कहीं समुद्र, कहीं धरती, कहीं जंगल, कहीं पहाड़, कहीं बस्ती, कहीं उजाड़, कहीं पुण्यात्मा, कहीं पापात्मा सबके सब आँखोंके सामने आ गये। अब धर्म्म-पुत्रने विचारा कि चलो अपने खेत तो देखें कि अनाज कैसा पैदा हुआ है। देखता क्या है कि खेती पकी खड़ी है और दूलो चोर रातको चोरीसे फ़सल काटकर अपने घर ले जाना चाहता है। धर्म्म-पुत्रने सोचा कि यह तो सारी खेती ही चुरा ले जायगा, मुझे पिताको जगा देना उचित है। उसने अपने पिताको जगा दिया। पिताने पड़ोसियोंको जमा करके खेतमें पहुँच कर दूलोको पकड़ लिया और उसे कारागारमें भिजवा दिया।

तब धर्म्म-पुत्रने विचारा कि चलो अपनी धर्म-माताको देखें

कि वह क्या करती है। धर्म्म-माताका विवाह एक सौदागरसे हो चुका था। इस समय वह सोई पड़ी थी। उसका पति उसे सोती छोड़कर किसी परस्त्रीके पास चल दिया था। धर्म्म-पुत्रने यह दशा देखकर धर्म्म-माताको जगा दिया और कहा कि तुम्हारा पति इस समय अमुक स्त्रीके पास गया है। धर्म्म-माता उस स्त्रीके घर जाकर अपने पतिको निकाल लायी और अपनी सौतको बहुत मारा।

६

इसके बाद धर्म्म-पुत्रने देखा कि उसकी माता झोपड़ेमें सोयी हुई है, एक चोर भीतर घुसकर उसका सन्दूक तोड़ने लगा है। माता जाग उठी, चोर मारने दौड़ा। धर्म्म-पुत्रने क्रोधसे चोरको गदा मारी, चोर तुरत मर गया और गदा हाथसे छूट गई।

गदा छूटते ही संसारका दृश्य जाता रहा। फिर वही दालान था और बाहरसे धर्म्म-पिता आकर खड़ा था। उसने धर्म्म-पुत्रको सिंहासनसे नीचे उतारकर कहा—

आखिर तुमने मेरी आज्ञा भंग की। देखो पहला पाप तुमने यह किया कि मोहर तोड़ी, दूसरा पाप यह कि सिंहासन-पर बैठकर मेरी गदा हाथमें ली, तीसरा पाप यह कि गदा हाथमें लेकर तुमने जगत्‌में इतना पाप फैला दिया कि यदि तुम आधा घण्टा और बैठे रहते तो आधा संसार नष्ट हो जाता। देखो, मैं स्वयं सिंहासनपर बैठकर तुम्हें दिखाता हूँ कि तुमने क्या कर डाला।

यह कह, उसने सिंहासनपर बैठकर गदा हाथमें ले ली। फिर संसार आँखोंके सामने आ गया।

धर्म्म-पिता—देख, तूने अपने पिताकी क्या दुर्दशा कर दी है। दूलो चोर कारागारमें रहकर सब प्रकारके दुष्कर्म सीख आया है। अब उसका सुधार असम्भव है। वह तेरे पिताके दो बैल चुरा चुका है। इस समय वह खलिहानमें आग लगानेको तैयार है। यह सब तेरी ही करतूत है।

धर्म्म-पुत्र अपने पिताका खलिहान जलता देखकर शोकातुर हुआ।

धर्म्म-पिता—देख, अब इधर देख, यह तेरी धर्म्म-माताका पति है। इसने परस्त्रीगामी होकर अपनी विवाहिता स्त्रीको त्याग दिया है। इसकी पहली प्रिया वेश्या बन गयी है। तेरी धर्म्म-माता दुःखसे पीड़ित होकर मद्यसेविनी हो गयी है। देखा, अच्छा अब अपनी माताको देख कि वह क्या कर रही है—

माता कह रही थी—क्या अच्छा होता यदि चोर मुझे उस रात मार डालता, मैं इन पापोंसे तो बच जाती।

तब धर्म्म-पिताने धर्म्म-पुत्रको कारागारका दृश्य दिखाया कि दो सिपाही एक डाकूको पकड़े खड़े हैं।

धर्म्म०—देख, इस डाकूने दस मनुष्योंका वध किया है। उचित यह था कि वह अपने पापकर्मों पर आप पश्चात्ताप करता, परन्तु तूने उसे मारकर उसके सारे पाप अपने ऊपर ले लिये। पाप-कर्मका फल भोगना ही पड़ेगा। यदि तू रीछनीवाला दृश्य स्मरण

रखता तो तेरी यह दशा न होती। देख, रीछनीने पहली बार ढकेला तो बच्चे डर गये, फिर ढकेला तो एक बच्चा मर गया, तीसरी बार ढकेला तो आप प्राण खो बैठी। वही तूने किया। अब उपाय यही है कि तीस वर्ष तप करके तू डाकूके पापोंका प्रायश्चित कर, नहीं तो उसके बदले तुझे नरक भोगना पड़ेगा।

धर्म्म-पुत्र—डाकूके पापोंका प्रायश्चित मैं किस भांति कर सकता हूं?

धर्म्म-पिता—जितना पाप तूने जगतमें फैलाया है उसका दूर कर देना ही डाकू और अपने पापोंका प्रायश्चित कर देना है।

धर्म्मपुत्र—मैं संसारसे पाप कैसे दूर कर सकता हूँ?

धर्म्म-पिता—पूर्व दिशाको जानेपर तुझे खेतमें कुछ मनुष्य मिलेंगे। निज बुद्धि अनुसार उन्हें शिक्षा देना और रास्तेमें जो कुछ देखो उसे स्मरण रखना। चौथे दिन तुझे एक जंगल मिलेगा। वहाँ एक कुटिया है। उसमें एक साधु निवास करता है। उसे यह सारा वृत्तान्त सुना देना। वह तुझे प्रायश्चित करनेकी क्रिया बतला देगा। उसकी आज्ञानुसार तप करनेसे तेरे पाप दूर हो जायंगे।

धर्म्मपुत्र यह बातें सुनकर वहांसे चल दिया।

७

राहमें धर्म्म-पुत्र यह विचार करता जा रहा था, कि बिना अपने ऊपर पाप लिये संसारसे पाप किस प्रकार नष्ट हो सकता है।

पापियोंको कारागारमें भेजने या बध करनेसे ही जगत्से पाप दूर हो सकता है और कोई उपाय नहीं।

देखता क्या है कि खेतमें एक बछड़ा घुसा हुआ है, लोग उसे बाहर निकाल रहे हैं, वह निकलता नहीं, एक बुढ़िया बाहर खड़ी पुकार रही है कि मेरे बछड़ेको क्यों मारते हो।

धर्म्म-पुत्रने किसानोंसे कहा कि तुम क्यों व्यर्थ हल्ला मचाते हो। बाहर आ जाओ, बुढ़िया आप अपने बछड़ेको बुला लेगी।

किसान बाहर निकल आये, बुढ़ियाने बछड़ेको पुकारा। वह झट दौड़कर बाहर आ गया और बुढ़ियाके हाथ चाटने लगा।

धर्म्म-पुत्र इतना तो समझ गया कि पाप पापसे बढ़ता है। मनुष्य पाप-कर्म द्वारा पाप नष्ट करनेका जितना यत्न करते हैं उतना ही पाप फैलता है, परन्तु इसे नष्ट क्यों करूँ ? देखो, बुढ़ियाके पुकारनेपर बछड़ा बाहर न निकलता, तो क्या होता।

८

अगले दिन धर्म्म-पुत्र एक गाँवमें पहुँचा और एक किसानके घरमें जाकर चारपाईपर बैठ गया। वहाँ एक स्त्री मैले वस्त्रसे पत्थरकी चौकी साफ कर रही थी। वह जितना साफ करती थी चौकी उतनी ही और मैली हो जाती थी।

धर्म्म-पुत्र—माई, यह क्या करती हो ?

स्त्री—चौकी साफ करती हूं। मैं तो थक गयी, यह किसी तरह साफ ही नहीं होती।

धर्म्म-पुत्र—शुद्ध कैसे हो, वस्त्र तो मैला है पहले वस्त्र धोकर स्वच्छ कर लो फिर चौकी तुरन्त साफ हो जायगी।

स्त्रीने वैसा ही किया, चौकी साफ हो गयी। अगले दिन धर्म्मपुत्र एक जंगलमें पहुंचा, देखा कि कुछ मनुष्य एक लोहेकी छड़को मोड़ रहे हैं, पर वह नहीं मुड़ती। लोग आप चक्कर खाये चले जाते हैं।

बात यह थी कि जिस खम्भेके साथ उन्होंने छड़का सिरा बाँध रक्खा था, वह स्वयं घूमता था। छड़ मुड़े कैसे? छड़के साथ-साथ खम्भा चक्कर खाता जाता था और उसके साथ-साथ मनुष्य भी चक्कर खाते जाते थे।

धर्म्म-पुत्र—तुम यह क्या करते हो?

लोग—तुम देखते नहीं कि हम क्या करते हैं! हम छड़ मोड़ रहे हैं। हम परिश्रम करते-करते हार गये परन्तु यह छड़ मुड़ती ही नहीं।

धर्म्म-पुत्र—मुड़े कैसे खम्भा तो घूम जाता है। यदि पहले खम्भेको स्थिर कर लो तो छड़ तुरन्त मुड़ जायगी।

किसानोंने वैसा ही किया और छड़ मुड़ गयी। अगले दिन धर्म्म-पुत्रको कुछ चरवाहे मिले, देखा कि वे शीत-निवारणके लिये आग जला रहे हैं। उन्होंने सूखी लकड़ियां एकत्रित करके आग जलाई। अभी आग जली ही थी कि उन्होंने ऊपरसे गीली घास डाल दी। आग बुझ गयी, चरवाहोंने कई बार ऐसा ही किया परन्तु आग न जली।

धर्म्म-पुत्र—भाई, कुछ धैर्य धारण करो। पहले आगको भली-भांति दहक लेने दो, प्रचण्ड हो जानेपर जो डालोगे भस्म हो जायगा।

चरवाहोंने वैसा ही किया। आग जलने लगी, परन्तु धर्म्म-पुत्रने इन दृश्योंका तात्पर्य कुछ नहीं समझा।

६

चौथे दिन धर्म्म-पुत्र साधुकी कुटियापर पहुंच गया।

साधु—कौन ?

धर्म्म-पुत्र—पापी और महान पापी। मैं अपने और दूसरोंके पापोंका प्रायश्चित करने आपके पास आया हूँ।

साधु—(बाहर आकर) कौनसे पाप ?

धर्म्म-पुत्रने आदिसे लेकर अन्ततक सारा वृत्तान्त साधुको कह सुनाया और बोला—प्रभो, मैं यह तो समझ गया कि पापसे पाप दूर नहीं होता, किन्तु बढ़ता ही है, परन्तु आप कृपाकर यह उपदेश कीजिये कि पाप नष्ट किस प्रकार हो सकता है।

साधु—अच्छा, मेरे साथ आओ।

साधुने जंगलमें जाकर धर्म्म-पुत्रको एक कुठार देकर कहा कि इस वृक्षको काटकर इसके तनेके तीन टुकड़े करके उन्हें आगसे झुलस दो। धर्म्मपुत्रने वैसा ही किया। तब साधु बोला—अच्छा, अब इन्हें यहाँ धरतीमें गाड़ दो। सामने पहाड़ीके नीचे एक नदी बहती है, वहाँसे मुंहमें भर-भरकर पानी

लाओ और इन तीनों टुंडोंको सींचते रहो। पहला टुंड स्त्री, दूसरा किसानों और तीसरा चरवाहोंवाला है। जब तीनों टुंड हरे हो जायं तो जान लेना कि तेरी तपस्या पूर्ण हो गयी।

यह कहकर साधु अपनी कुटियामें चला गया।

१०

जब धर्म्म-पुत्र टुंडोंको पानी देकर सन्ध्याके समय कुटियामें पहुंचा तो देखा कि साधु मरा हुआ पड़ा है; उसने साधुका दाह-कर्म किया।

लोगोंमें यह बात प्रसिद्ध हो गयी कि साधुका देहान्त हो गया और उसने धर्म्म-पुत्रको अपना शिष्य बनाकर कुटियामें छोड़ दिया है। साधुकी उस प्रान्तमें बड़ी प्रतिष्ठा थी, इस कारण धर्म्मपुत्रको अन्न-पानीका घाटा न रहा।

एक वर्षके पश्चात् दूर-दूर यह चर्चा फैल गयी कि धर्म्मपुत्र नित्य मुंहमें पानी भर भरकर लाता है और उससे टुंडोंको सींच कर कठिन तपस्या करता है फिर क्या था, चढ़ावा चढ़ने लगा। संसारी पुरुष स्वार्थके वश दूर-दूरसे उसके पास आने लगे और धर्म्म-पुत्र पुजने लगा। परन्तु उसका यह नियम था कि जो कुछ आता अनाथोंको बाँट देता, अपने वास्ते केवल उदर-पूरण योग्य अन्न ही रखता और कुछ नहीं।

यद्यपि उसे टुंड सींचते-सींचते कई वर्ष हो गये, परन्तु हरा एक भी नहीं हुआ। एक दिन कुटियाके बाहर उसे घोड़ेपर सवार कोई मनुष्य जाता दिखाई दिया। धर्म्मपुत्रने बाहर जा-

कर पूछा।

धर्म्म-पुत्र—तुम कौन हो ?

पुरुष—मैं डाकू हूँ, मनुष्योंको मार करके उनका धन चुराकर बड़ा आनन्द करता हूँ।

धर्म्म-पुत्र—(भयसे स्वगत) इसका सुधार असम्भव है और लोग तो मेरे पास आकर अपने पापोंपर पश्चाताप करते हैं किन्तु यह तो अपने पापोंकी प्रशंसा करता है। हाय हाय, यदि यह डाकू यहाँ आया-जाया करेगा तो लोग डरके मारे मेरे पास आना छोड़ देंगे और फिर मुझे अन्न-पानी भी न मिलेगा। (प्रकट) तेरी वार्ता सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य होता है। लोग तो मेरे पास आकर अपने पाप-कर्मोंका स्मरण करके पश्चात्ताप करते हैं किन्तु तू उनपर घमण्ड करता है। सम्भवतः तुझे परमेश्वरका भय नहीं है। देख, यहाँ तेरे आनेसे लोग भय खाकर मेरे पास आना छोड़ देंगे। इस कारण तू यहाँसे चला जा और फिर यहाँ न आना।

डाकू—मैं परमात्मासे नहीं डरता। रही चोरी, सो इसमें पाप ही क्या है ? तू तपस्यासे पेट भरता है, मैं चोरीसे, पेटपालन सबको ही करना पड़ता है। यह बातें तू उन्हीं मूर्खोंको सिखलाना मुझे क्या सिखलाता है। मैं तो परमात्माके नामपर कल और दो मनुष्योंका बध कर डालूंगा। बस कि और कुछ भी ? मैं तेरे रुधिरसे अपने हाथ रंगना नहीं चाहता। देख फिर मेरे मुँह न लगना।

यह कहकर डाकू वहांसे चल दिया ।

११

धर्म्म-पुत्रको वहाँ रहते-रहते आठ वर्ष व्यतीत हो गये, डाकूके भयसे लोगोंने कुटियापर आना छोड़ दिया। धर्म्म-पुत्रको इसका बड़ा शोक हुआ। एक समय उसने चित्तमें सोचा।

धर्म्म-पुत्र—(स्वगत) डाकू सत्य कहता था, मैंने तो निस्सन्देह तपस्याको जीविका बना रक्खा है। साधुने तो तप करनेको कहा था, किन्तु मैंने अच्छा तप किया कि महन्त बनकर अपनेको पुजवाने लगा। जब लोग यहां आकर मेरी स्तुति करते हैं तो प्रसन्न होता हूँ, जब नहीं आते तो दुःख मानता हूँ। क्या इसीका नाम तपस्या है ? मान और प्रतिष्ठाके लोभमें हूँ, पाप नष्ट तो क्या करता उलटा और संचय कर लिये। बस, अब उत्तम यही है कि विरक्त होकर एकान्तमें बैठकर पहले अन्तःकरण शुद्ध करूँ, तब कुछ बनेगा अन्यथा नहीं।

यह निश्चय करके वह कुटिया छोड़कर जङ्गलको चल दिया। मार्गमें उसकी फिर डाकूसे भेंट हुई।

डाकू—क्यों, आज कहां चले ?

धर्म्म-पुत्र—एकान्त सेवन करने, क्योंकि मैं अब ऐसे स्थानमें निवास करना चाहता हूँ, जहां कोई न आवे।

डाकू—तो पेट कहांसे भरोगे ?

धर्म्म-पुत्र—जैसी ईश्वरेच्छा, देखा जायगा।

डाकू तो चल दिया, धर्म्मपुत्र सोचने लगा मैंने उसे उपदेश क्यों न किया। आज तो उसका मुख शान्त था। सम्भवतः कुछ सुनकर वह सत्मार्गपर चलनेका उद्योग करता।

धर्म्मपुत्र—(डाकूको पुकारकर) ओ भाई डाकू, सुनो, परमात्मा सर्वत्र व्यापक है। अब भी मान जाओ, यह दुष्ट कर्म त्याग दो।

डाकू यह सुनकर छुरा निकालकर धर्म्मपुत्रको मारनेको दौड़ा। धर्म्मपुत्र डरकर झटसे जङ्गलमें भाग गया।

डाकू—जा! चला जा! छोड़ देता हूँ। यदि फिर कभी मेरे सामने आया तो मार ही डालूँगा।

सन्ध्या समय धर्म्मपुत्र जब दुण्ड सींचने गया तो उसने देखा कि खीवाला दुण्ड हरा हो गया है।

१२

अब धर्म्मपुत्र विरक्त होकर एकान्त सेवन करने लगा। एक दिन जो वह क्षुधावश होकर कन्द-मूल-फल खाने गुफासे बाहर निकला तो देखता क्या है कि सामने वृक्षपर साफेमें बंधी रोटी लटक रही है। रोटी लेकर वह गुफामें लौट आया।

जब कभी भूख सताती और वह गुफासे बाहर आता, तब उसे वृक्षपरसे रोटी मिल जाती। वह सुखपूर्वक काल व्यतीत करने लगा। उसे केवल यह भय बना रहता कि ऐसा न हो कि तपस्या पूर्ण होनेसे पहले ही डाकू मुझे मार डाले। यदि कभी

डाकूकी आहट पाता तो वह गुफामें छिप जाता। दस वर्ष बीत जानेपर वह एक दिन जब टुण्डोंको पानी दे रहा था तो उसके चित्तमें यह विचार उत्पन्न हुआ, मैं मृत्युसे डरता हूँ, यह भो पाप है। कौन जाने कि मैं प्राणान्त होनेसे ही मापोंसे निवृत्त हो जाऊँ। हानि लाभ सब परमात्माके हाथ है, मनुष्य किसीका कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

इस विवेकके उत्पन्न होते ही वह अभय होकर डाकूकी खोजमें चला। थोड़ी दूर जानेपर उसे सामनेसे डाकू आता दिखायी पड़ा। देखता क्या है कि डाकूने हाथ पैर बाँधे एक मनुष्यको घोड़ेपर अपने पीछे बिठा रखा है।

धर्म्मपुत्र—भाई डाकू, यह कौन है? इसे कहाँ लिये जाते हो?

डाकू—यह एक धनाढ्य सौदागरका पुत्र है, अपने पिताके धनका पता नहीं बतलाता। मैं अब इसे जङ्गलमें ले जाकर किसी वृक्षसे बाँधकर इतने चाबुक मारूँगा कि यह आपही बतला देगा।

धर्म्मपुत्र—नहीं नहीं, ऐसा मत करो, इसे छोड़ दो।

डाकू—क्यों, क्या तुम्हारा जी भी मार खानेको चाहता है? हटो, अपना रास्ता लो, नहीं तो अभी मार डालूँगा।

धर्म्मपुत्र—(निडर होकर) मैं अभय हूँ, मरनेसे नहीं डरता। बस, परमात्माकी यही आज्ञा है कि इस मनुष्यको छोड़ दो।

डाकू—अच्छा, छोड़ देता हूँ। देखो, मैंने कितनी बार तुमसे

कहा है कि तुम मेरे सामने न आया करो, परन्तु तुम नहीं मानते।

धर्म्मपुत्र—भाई, अब भी डाकूपना छोड़ दो।

डाकूने कुछ न सुना। वह घोड़ा दौड़ाकर वहाँसे चल दिया। मनुष्य प्रसन्न होकर धर्म्मपुत्रका धन्यवाद करता हुआ अपने घरको लौट गया।

सन्ध्या समय धर्म्मपुत्रने जाकर देखा कि किसानोंवाला टुण्ड हरा हो गया है।

१३

दस वर्ष और बीत गये। धर्म्मपुत्र शान्तस्वरूप राग द्वेषसे रहित अभयपदको प्राप्त होकर, आनन्दमें मग्न बैठा एक दिन यह विचार करने लगा।

धर्म्मपुत्र—अहा हा, परमात्मा कैसा कृपालु और दयालु है! उसने मनुष्योंके कारण क्या-क्या अद्भुत पदार्थ उपस्थित किये हैं! तिसपर भी मनुष्य दुःखसे क्लेशित क्यों हैं? मेरी समझमें नहीं आता कि मनुष्य सुखसे जीवन क्यों व्यतीत नहीं करते? मेरे ध्यानमें तो केवल अज्ञान ही इसका मूल कारण है। यदि प्रेम-भावसे प्राणियोंको सदुपदेश किया जावे तो उन्हें सुख मिल सकता है। एकान्तमें रहना पाप है। मेरा धर्म है कि इस तपसे जो कुछ मुझे प्राप्त हुआ है। दूसरोंपर उसको प्रकट करूँ।

उस समय उसका चित्त दयासे परिपूर्ण हो गया। इतनेमें

उसे डाकू दिखायी पड़ा। पहले तो उसने विचारा कि डाकूको उपदेश करना व्यर्थ है, इतनी बार समझा चुका हूँ। परन्तु उसने फिर सोचा कि क्या हुआ मेरा तो धर्म्म ही यह है कि प्राणि-मात्रमें प्रेम और दया-भाव उत्पन्न करूँ।

धर्म्म-पुत्रने देखा कि डाकू नेत्र नीचे किये मन मलीन उसकी ओर आ रहा है। वह दौड़कर डाकूके चरणोंमें गिर पड़ा और बोला—

धर्म्म-पुत्र – भाई, ऐ भाई, प्यारे, अपने स्वरूपको विचारो। देखो, तुम्हारे भीतर सत् चित्त आनन्द स्वरूप, शुद्ध, नित्य मुक्त परमात्मा विराजमान हैं। अज्ञानके कारण क्यों दूसरोंको कष्ट देते और आप कष्ट भोगते हो? क्यों जन्म-जन्मान्तरके लिये पापका बोझा इकट्ठा करते हो? भाई मेरा कहना मानो, अपना सर्वनाश मत करो, मान जाओ, भाई मान जाओ।

डाकू—(क्रोधसे) बस! बस! इस बकवादको छोड़ो, जाओ अपना काम करो।

परन्तु अब धर्म्मपुत्र वहाँसे टलनेवाला न था। वह डाकूको आलिंगन करके रोने लगा। डाकूका चित्त उसकी यह दशा देख-कर तुरन्त द्रवित हो गया। वह झट धर्म्मपुत्रके चरणोंमें गिर पड़ा और बोला—

डाकू—धर्म्मपुत्र, आज तुमने मुझे पराजित किया। बीस वर्षतक मैं तुम्हारा सामना करता रहा! मैंने तुम्हारी एक न सुनी। परन्तु आज बेबस हूँ। देखो, पहली बेर जब तुमने मुझे

उपदेश किया था, मैंने बड़ा क्रोध किया था । फिर जब तुम गुफामें निवास करने लगे तो मैं समझ गया कि तुम पूर्ण वैरागी हो गये । उसी दिनसे मैं तुम्हारे भोजनार्थ वृक्षमें रोटी लटकाने लगा ।

तब धर्म्म-पुत्रने समझा कि स्त्री चौकी तब ही शुद्ध कर सकती थी, जब वह पहले वस्त्र शुद्ध कर लेती, अर्थात् अपना अन्तःकरण शुद्ध किये बिना दूसरोंका अन्तःकरण शुद्ध करना असम्भव है ।

डाकू—जब तुम मृत्युसे अभय हो गये तो मेरा चित्त फिर गया ।

धर्म्म-पुत्र—जान गया कि जिस प्रकार खम्भेके स्थिर किये बिना छड़ नहीं मुड़ सकी थी, उसी प्रकार अपना चित्त स्थिर किये बिना दूसरोंके चित्तको अपनी ओर मोड़ना कठिन है ।

डाकू—परन्तु देखो, जबतक तुम दयामय नहीं बने मेरा चित्त भी द्रवित नहीं हुआ । परन्तु तुम्हारा प्रेमरूप बनना था कि मैं तुम्हारे अधीन हो गया ।

धर्म्म-पुत्र परमानन्दको प्राप्त होकर डाकू सहित ठुंडोंके पास गया । देखा कि चरवाहोंवाला ठुंड भी हरा हो गया है । तब धर्म्म-पुत्रको निश्चय हो गया कि जिस प्रकार मध्यम अग्नि गीले घासको नहीं जला सकती थी, उसी प्रकार जबतक पुरुषका अपना चित्त प्रकाश स्वरूप नहीं हो जाता, तबतक दूसरेको प्रकाशित नहीं कर सकता ।

तीनों ठुंडोंके हराभरा हो जानेपर धर्म्म-पुत्रके आनन्दकी कोई सीमा न रही। उसे विश्वास हो गया कि मेरी तपस्या पूर्ण हुई। उसने डाकूको दीक्षित करके तुरन्त वहीं समाधि ले ली। अब डाकू बड़े उत्साहसे अपने गुरुके आज्ञानुसार जगतमें भक्ति-मार्गका उपदेश करके जीवन व्यतीत करने लगा।

——:ꕥ:——

१६

दयामयकी दया

किसी समय एक मनुष्य ऐसा पापी था कि अपने ७० वर्षके जीवनमें उसने एक भी अच्छा काम नहीं किया था। नित्य पाप करता था, लेकिन मरते समय उसके मनमें ग्लानि हुई और वह रो-रोकर कहने लगा—

हे भगवन्! मुझ पापीका बेड़ा कैसे पार होगा? आप भक्त-वत्सल, कृपा और दयाके समुद्र हो, क्या मुझ जैसे पापीको क्षमा न करोगे?

इस पश्चातापका यह फल हुआ कि वह नर्कमें न गया, स्वर्गके द्वारपर पहुँचा दिया गया। उसने कुण्डी खड़कायी।

भीतरसे आवाज आयी—स्वर्गके द्वारपर कौन खड़ा है? चित्रगुप्त, इसने क्या-क्या कर्म किये हैं?

चित्रगुप्त—महाराज, यह बड़ा पापी है। जन्मसे लेकर मरण पर्यन्त इसने एक भी शुभ कर्म नहीं किया।

भीतरसे—जाओ, पापियोंको स्वर्गमें आनेकी आज्ञा नहीं हो सकती।

मनुष्य—महाशय, आप कौन हैं ?

भीतरसे—योगेश्वर।

मनुष्य—योगेश्वर, मुझपर दया कीजिये और जीवकी अज्ञानतापर विचार कीजिये। आप ही अपने मनमें सोचिये कि किस कठिनाईसे आपने मोक्षपद प्राप्त किया है। माया मोहसे रहित होकर मनको शुद्ध करना क्या कुछ खेल है ? निस्सन्देह मैं पापी हूँ, परन्तु परमात्मा दयालु हैं, मुझे क्षमा करेंगे।

भीतरकी आवाज बन्द हो गयी। मनुष्यने फिर कुण्डी खटखटायी।

भीतरसे फिर आवाज आयी—कौन है ? मृतलोकमें इसने क्या कर्म किये हैं ?

चित्रगुप्त—स्वामी, इसने जीवन-पर्य्यन्त एक काम भी अच्छा नहीं किया।

भीतरसे—जाओ, तुम्हारे सरीखे पापियोंके लिये स्वर्ग नहीं बना।

मनुष्य—महाराज आप कौन हैं ?

भीतरसे—बुद्ध।

मनुष्य—महाराज, केवल दयाके कारण आप अवतार कह-

लाये। राज-पाट, धन-दौलत सबपर लात मारकर प्राणिमात्रका दुःख निवारण करनेके हेतु आपने वैराग्य धारण किया, आपके प्रेममय उपदेशने संसारको दयामय बना दिया। मैंने माना कि मैं पापी हूँ, परन्तु अन्त समय प्रेमका उत्पन्न होना निष्फल नहीं हो सकता।

बुद्ध महाराज मौन हो गये।

पापीने फिर द्वार हिलाया।

भीतरसे—कौन है?

चित्रगुप्त—स्वामी, यह बड़ा दुष्ट है।

भीतरसे—जाओ, भीतर आनेकी आज्ञा नहीं।

पापी—महाराज, आपका नाम?

भीतरसे—कृष्ण।

पापी—(अति प्रसन्नतासे) अहाहा! अब मेरे भीतर चले जानेमें कोई सन्देह नहीं। आप स्वयं प्रेमकी मूर्ति हैं, प्रेमवश होकर आप क्या नाच नाचे हैं, अपनी कीर्तिको विचारिये, आप तो सदैव प्रेमके वशीभूत रहते हैं।

आप हीका उपदेश तो है—'हरिको भजे सो हरिके होई,' अब मुझे कोई चिन्ता नहीं।

स्वर्गका द्वार खुल गया और पापी भीतर चला गया।

——❀——

१७

सूरतका चायखाना

बम्बई सूबेके-सूरत नगरमें चायकी एक दूकान थी। जहाँ देश-देशान्तरके निवासी चाय पीने आया करते थे। एक दिन वहाँ फारस देशका एक विद्वान मुल्ला चाय पीने आया। उसने सारा जीवन परमेश्वरका सच्चा स्वरूप जानने और इसी विषयमें पुस्तकें लिखने और पढ़नेमें व्यतीत किया था। फल यह हुआ कि वह नास्तिक हो गया था। फारसके बादशाहने इसे बहुत बुरा माना और उसे अपने राज्यसे निकाल दिया था।

जन्मभर आदि कारणकी खोज करते-करते यह अभागा मुल्ला अन्तमें बुद्धिहीन होकर यह माननेपर उतर आया कि इस संसारका कोई कर्त्ता ही नहीं।

इस मुल्लाके साथ एक हब्शी गुलाम था। मुल्ला तो दूकानमें चला गया, हब्शी बाहर बैठकर धूप खाने लगा। मुल्लाने अफीम फाँककर चायकी प्याली पीई और गुलामसे बातचीत करने लगा।

मुल्ला—अबे, ओ नालायक भला बता, खुदा है कि नहीं।

हब्शी—खुदाके न होनेमें भी शक हो सकता है? कभी नहीं, खुदा है, (काठकी मूर्ति दिखलाकर) देखिये, यह मेरा खुदा है।

यह हमेशा मेरी हिफाजत करता है। हमारे मुल्कमें इस लकड़ीको पाक माना जाता है।

उस समय दूकानमें और लोग भी उपस्थित थे। स्वामी-सेवकमें यह बातें देखकर एक ब्राह्मण देवता बोले।

ब्राह्मण—हब्शी, तू अत्यन्त मूर्ख है। परमात्मा कहीं जेबमें समा सकता है? वह तो सारे संसारका कर्त्ता धर्ता और हर्ता है। उस सर्वशक्तिमान परब्रह्मके मन्दिर श्रीगंगाजीके तटपर बने हुए हैं, वहाँके पुजारी ही उस परमात्माका वास्तविक स्वरूप जानते हैं, दूसरा कोई नहीं जानता। सहस्रों वर्षके उलट-फेरसे उन पुजारियोंके सम्मान अथवा अधिकार और प्रतिष्ठामें कोई न्यूनता नहीं हुई, जिससे सिद्ध होता है कि भगवान स्वयं उनकी रक्षा करते रहते हैं।

यहूदी—हरगिज नहीं, सच्चे खुदाका घर हिन्दोस्तानमें नहीं, न वह ब्राह्मणोंकी हिफाजत करता है। ब्राह्मणोंका खुदा सच्चा नहीं हो सकता। सच्चा खुदा तो इब्राहीम, इसहाक और याकूबका है। वह सिवा बनी इसराईलके और किसी कौमकी हिफाजत नहीं करता। हमेशासे हमारी कौम खुदाको प्यारी है। आजकल जो हम गिरे हुए दिखाई देते हैं यह दर असल हमारा इम्तहान हो रहा है, क्योंकि खुदा हमें कौल दे चुका है कि वह एक दिन हम सबको यूरेशलममें जमा कर देगा। उस वक्त वहाँ-के पुराने मन्दिरकी शान दुगुनी होकर कुल दुनियापर हमारी बादशाहत कायम हो जायगी।

यह कह कर यहूदीकी आखोंमें पानी भर आया।

इसपर एक पादरी साहब बोले—झूठ सरासर झूठ, तुम तो परमात्माको अन्यायी ठहराते हो। वह सबसे प्रेम करता है, केवल तुमसे ही नहीं। माना कि प्राचीन समयमें उसने तुम्हारी सहायता की थी, परन्तु इधर १९०० वर्ष हुए कि वह तुमसे अप्रसन्न है। इस कारण आज कोई भी मनुष्य तुम्हारा मत अंगीकार नहीं करता।

परमात्माने अपने बेटे यीसूको मनुष्योंका पाप हरनेके लिये भेजा और जबतक कोई यीसूकी शरण न जाय उसकी मुक्ति नहीं हो सकती।

यह सुनकर एक मुसलमान तुर्क बोल उठा—आप दोनोंका यकीन गलत है। बारह सौ वर्ष हुए कि हजरत मुहम्मद साहिब ने सच्चा दीन फैलाकर आपके मजहबको रद्द कर दिया। क्या आप नहीं देखते कि यूरप, एशिया और चीनमें दीने इसलामकी रोशनी किस तेजीसे फैल रही है? आप लोग खुद मानते हैं कि खुदा यहूदियोंसे खफा हैं, फिर इसलाम कबूल क्यों नहीं करते? शिया काफिर हैं, सुन्नत जमाअत बनो और असली रबको पाओ।

ईरानी मुल्ला शिया था। शियोंपर यह कटाक्ष सुनकर बिगड़ा और कुछ जवाब देना चाहता था परन्तु हब्शियों, ईसाइयों, तिब्बत-निवासी लामाओं और फारस आदि देश देशान्तरके रहनेवालोंमें मत मतान्तर विषयक ऐसा कोलाहल मचा कि वह

कुछ न बोल सका। प्रत्येक मनुष्य यही कहता था कि मेरे ही देशमें सच्चा परमेश्वर है और मैं ही यथार्थ रीतिसे उसकी पूजा करता हूँ। एक चीनी अलग चुप-चाप बैठा चाय पी रहा था। तुर्कने उससे कहा—

तुर्क—भाई साहब, आप चुप क्यों बैठे हैं? मेरी मदद क्यों नहीं करते? मेरे पास आनेवाले चीनी सौदागर सब यही कहते हैं कि आप लोग इसलामको सब मजहबोंसे अच्छा ख्याल करते हैं। आप इस मौकेपर जरूर अपनी राय दें।

चीनी—महाशयो, मेरे विचारमें इन झगड़ों और लड़ाइयों-का मुख्य कारण अज्ञान है। सुनिये मैं आपको एक दृष्टान्त सुनाता हूं।

जिस जहाजमें मैं चीनसे यहां आया हूं वह सारी पृथ्वीका चक्कर लगा चुका है। आते समय हम पानी लेनेके लिये एक दिन सुमात्रा टापूके पूर्वी तटपर ठहरे। तटपर नारियलके वृक्ष खड़े थे, सबके सब जहाजसे उतर, तटपर जाकर, वृक्षोंकी छायामें बैठ गये।

इतनेमें वहां एक अन्धा आया, बात-चीत करनेपर मालूम हुआ कि वह सूर्य्यके प्रकाशका तत्व जाननेके निमित्त लगातार सूर्य्यपर दृष्टि रखनेसे अन्धा हो गया है। हमारे पास आकर वह कहने लगा—

देखो, सूर्य्यका प्रकाश पानी नहीं, क्योंकि हम उसे पानीके समान एक बरतनसे दूसरे बरतनमें नहीं ढाल सकते और वायु

उसे हिला भी नहीं सकती। यह अग्नि भी नहीं, यदि अग्नि होता तो पानीसे बुझ जाता। यह आत्मा भी नहीं, क्योंकि आंखोंसे दिखाई देता है। प्रकृति भी नहीं, क्योंकि यह नित्य है। बस सिद्ध हुआ कि सूर्य्यका प्रकाश जल है न अग्नि, आत्मा है न प्रकृति। तो है क्या, कुछ भी नहीं !

इस अन्धेके साथ गोपाल नामका एक नौकर था। अन्धा तो हमसे बातें करता रहा, गोपालने नारियलकी जट और दूधसे एक मोमबत्ती तैयार कर ली। अन्धा गोपालसे बोला।

गोपाल, देखो कैसा अन्धेरा है, मैंने तुमसे ठीक कहा था कि सूर्य्य नहीं है, फिर भी सब लोग कहा करते हैं कि सूर्य्य है, परन्तु मैं उनसे पूछता हूँ कि वह क्या है ?

गोपाल--सूर्य्य क्या है यह जाननेसे मुझे कुछ प्रयोजन नहीं। हां, प्रकाशको मैं भलीभांति जानता हूँ। देखिये, मैंने यह मोमबत्ती बना ली है। यही मेरा सूर्य्य है। रातको इसीकी सहायतासे मैं सब काम कर सकता हूँ।

पास ही सुमात्रा टापूका रहनेवाला एक लंगड़ा बैठा था।

हँसकर बोला—मालूम हुआ कि जन्महीसे अन्धे हो, जभी कहते हो कि सूर्य्य नहीं है। सुनो, सूर्य्य अग्निका एक गोला है, प्रातःकाल नित्य समुद्रसे निकलता है और सन्ध्या समय हमारे टापूके पर्वतोंमें छिप जाता है। मुझे शोक है कि तुमको नेत्र नहीं, नहीं तो स्वयं देख लेते।

एक धीवर बैठा यह बातें सुन रहा था। बोला—वाह जो

वाह क्या कहना है, तुम कभी टापूके बाहर नहीं गये। यदि नौकापर बैठकर दूर समुद्रमें जाते तो पता लग जाता कि सूर्य्य टापूके पर्वतोंमें लोप नहीं होता, किन्तु समुद्रसे ही निकलता और सायंकालको समुद्र में ही डूब जाता है। यह सब कुछ मैंने अपने नेत्रोंसे देखा है।

इसपर हमारे साथके एक हिन्दुस्तानीने कहना आरम्भ किया—

मुझे आपकी मूर्खता देखकर बड़ा अचरज होता है। सूर्य्य यदि अग्निका गोला होता, तो समुद्रमें डूबकर बुझ न जाता? भाई साहिब यह बात नहीं, वह तो साक्षात् देवता है। रथमें सवार सुमेरु पर्वतके गिर्द घूमता है। कभी-कभी राहु और केतु उसे पकड़ लेते हैं। परन्तु ब्राह्मण लोग ईश्वरसे विनती करके उसे छुड़ा लेते हैं। तुम यह समझते हो, कि सूर्य्यदेव केवल तुम्हारे टापूमें प्रकाश करते हैं और जगह नहीं, तुम्हारा यह विचार मिथ्या है।

एक जहाजका कप्तान भी वहां मौजूद था। बोला—देवताकी एक ही कही। सूर्य्य देवता नहीं, वह केवल हिन्दोस्तानमें ही प्रकाश नहीं करता। मैंने देश-देशान्तरकी यात्राकी है। सूर्य्य तो सारी पृथ्वीपर प्रकाश करता है। बात यह है कि वह जापान देशसे निकलता और इङ्गलिस्तानके पीछे छिप जाता है, इसी कारण जापानी अपने देशको निपन अर्थात् सूर्य्यकी जन्मभूमि कहते हैं।

एक अङ्गरेज भी वहाँ बैठा था। बोला—तुम सब मूर्ख हो। सूर्य्यकी चालका निर्णय हमने किया है। वह न कहींसे निकलता है न छिपता है, सदैव पृथ्वीके गिर्द घूमता रहता है। यदि ऐसा न होता तो अभी हम पृथ्वीका चक्कर काटकर आये हैं कहीं न कहीं हम अवश्य सूर्य्यसे टकराते।

कप्तान—तुम सब मूर्ख हो, सूर्य्य पृथ्वीके गिर्द नहीं घूमते, वरन् पृथ्वी सूर्य्यके गिर्द घूमती है, वह अपनी धुरीपर फिरती हुई चौबीस घण्टेमें एक चक्कर पूरा करती है। जो भाग घूमते समय सूर्य्यके सम्मुख होता है वहां दिन होता है, बाकी सब देशमें रात होती है। सूर्य्य किसी विशेष पर्वत, द्वीप, समुद्र अथवा देशमें प्रकाश नहीं करता वरन् उसका प्रकाश सभी ग्रह उपग्रहोंको समान परिमाणमें मिलता है। विचार करके देखें तो आपको मेरा कहना बिलकुल ठीक जँचेगा। तब आपको विश्वास हो जायगा कि सूर्य्य, तारे सबके लिये समान उपकारी हैं।

बुद्धिमान कप्तानने इस प्रकार अपने अनुभव और दृष्टान्तसे सबको समझा दिया।

चीनी फिर कहने लगा—भिन्न-भिन्न मतवाले कहते हैं कि हमीं भगवानको मानते हैं, दूसरा कोई नहीं मानता और जिस परब्रह्मने सारे जगतको रचा है उसे अपने-अपने मन्दिरोंमें बन्द करनेकी चेष्टा करते हैं।

परमात्माने मनुष्यको समता दिखलानेके लिये अपना मन्दिर आप बना दिया है जो अद्वितीय है।

वह मन्दिर यही विराट संसार है। सारे मानुषी मन्दिर इस मन्दिरकी प्रतिछाया हैं। साधारण मन्दिरोंमें तो शंख, घटा, दीपक, चित्र, मूर्तियां, धार्मिक-पुस्तकें, हवन-कुण्ड और पुजारी आदि पाये जाते हैं, पर क्या कोई ऐसा मन्दिर है जहां समुद्रके समान कुंड, सूर्य्य, चंद्र और उपग्रहोंके समान प्रकाशमान दीपक और नभमंडलकी तरह मनोहारी चित्र हो? क्या इन अर्घ्यसामग्रियोंकी संसारकी इन नश्वर वस्तुओंसे तुलना की जा सकती है? ईश्वरकी कृपालुता और दयालुताकी व्याख्या करनेके लिये सांसारिक सुख-सामग्रीकी अपेक्षा और कौन सी धर्म्म पुस्तक अधिक उपयुक्त हो सकती है? पुरुषकी निज आत्मासे अधिक धर्म्म-शास्त्र कौन-सा है? परोपकारके समान कौन-सा बलिदान है और योगीके चित्तके तुल्य और कौन हवन कुण्ड है, जहाँ स्वयं भगवान निवास करते हैं?

पुरुषको निज बुद्धिके अनुसार परमात्माका ज्ञान होता है। ज्यों-ज्यों प्राणी परमदेवकी कृपालुता और प्रभुको अपने चित्तमें स्थापन करके उसे अनुभव करता है त्यों-त्यों वह परमात्माके समीप हो जाता है।

इस कारण ज्ञानीको अज्ञानीसे ग्लानि करना अधर्म्म है, जोगी और महात्मा वही है जो नास्तिकसे भी द्वेष नहीं करता।

चीनीकी वार्ता सुनकर सब चुप होगये।

———

१८

महंगा सौदा

भारतवर्षमें मैनपुरी एक बहुत छोटीसी रियासत है। उसमें केवल सात हजार मनुष्योंकी बस्ती है; परन्तु क्या हुआ, महल, मन्त्री, जनरेल, करनेल सब हैं। सेनामें साठ सिपाही हैं परन्तु नाम तो सेना है, साठ हों चाहे साठ हजार। सब व्यावहारिक पदार्थोंपर कर लगा हुआ है, परन्तु मनुष्य ही इतने थोड़े हैं कि करकी आमदनीसे राजा तकका पेट नहीं भरता। मन्त्री आदिका तो कहना ही क्या है। इस कारण राजाने आमदनीका एक और उपाय कर रखा है, अर्थात् जुआ-घर बनाकर उसे ठेकेपर दे रखा है। जुआ खेलनेवाले हारें अथवा जीतें, राजा अपना टकोना ले लेता है। यहाँ विशेष आमदनी इस कारण होती है कि और राजाओंने अपने देशोंमें जुआ बन्द कर रखा है क्योंकि मनुष्य जुआ हारकर प्राय: आत्मघात कर लिया करते थे। मैनपुरीका राजा स्वतन्त्र है, इसलिये उसे जुआ खिलानेसे कौन रोक सकता है?

इस जुआघरमें देश-देशान्तरके लोग जुआ खेलने आते हैं। यद्यपि राजा इस कमाईको पाप समझता है, परन्तु करे क्या,

सत्य व्यवहारसे धन तो नहीं मिलता। बिना धनके काम नहीं चले। इस कारण उसे जुआ खेलना ही पड़ता है।

बड़ी राजधानियोंकी भाँति यहाँ किसी बातकी कमी नहीं, दरबार होते हैं, सेना कवायद-परेड करती है, चीफ कोर्ट, वकील, कानून आदि सब कुछ विद्यमान हैं।

यहाँकी प्रजा बड़ी सुशील है, परन्तु दैवयोगसे वहाँ किसी मनुष्यने एक पुरुषको मार डाला। अब बड़े ठाट-बाटसे चीफ कोर्टके जज एकत्र हुए। वकील, बारिष्टर आदि सबके सामने उन्होंने यह फैसला दिया कि घातकका सिर काट दिया जाय।

मुश्किल यह पड़ी कि इस राजधानीमें गला काटनेकी कल विद्यमान न थी। राजाने मन्त्रियोंकी सम्मतिसे काश्मीरके राजाको पत्र लिखा कि कृपा करके गला काटनेकी कल भेज दीजिये। उस राजाने दस हजार रुपये मांगे, तब तो राजाजी चकराये कि दस हजारका तो आदमी भी नहीं, कलके दाम इतने। फिर दक्खिनके महाराजको लिखा। उसने आठ हजार मोल किया। राजाने विचारा कि यदि गला काटनेकी कल मोल ली गयी तो सारी राजधानी ही बिक जायगी, यह ठीक नहीं। क्या करें? मन्त्रियोंने कहा—महाराज, सेनापतिसे कहिये कि वह किसी सिपाहीको हुक्म दे दें कि वह खूनीका गला काट दे, क्योंकि युद्धमें भी तो वह यही काम करते हैं। परन्तु किसी सिपाहीने गला काटना अङ्गीकार नहीं किया।

राजाने इस विषयमें मन्त्रियोंसे सलाहकी और उस सभाने

एक उप-सभा बनायी। अन्तमें बड़े झगड़ेके पीछे यह निश्चय हुआ कि खूनीको उमरभरके लिये कैद कर दिया जाय।

राजाने यह बात मान ली। अब बन्दीखाना कहांसे लावें। एक साधारण कोठरी थी, वहीं खूनीको कैद करके उसपर पहरा लगा दिया और हुक्म दिया कि पहरेवाला कैदीके वास्ते राजाके लंगरमेंसे नित्य रोटी ला दिया करे।

एक वर्ष पूरा हो जानेपर राजा जब राजधानीका हिसाब देखने लगा तो उसने पांच सौ रुपया खूनीके भोजन-छाजन पहरे आदिका खर्च लिखा हुआ देखा। सोचने लगा—हैं, यह क्या, पांच सौ रुपया! यह खूनी तो अभी जवान है, मरनेके समयतक तो हमारी राजधानी ही चट्ट कर जायगा।

मन्त्रियोंको बुलाकर कहने लगा कि शीघ्र इस खूनीका कोई ठिकाना करो।

मन्त्री आपसमें विचार करने लगे।

पहला—पहरा हटा दो।

दूसरा—खूनी यदि भाग गया?

पहला—भाग गया तो पाप कटा।

अतएव पहरा हटा दिया गया। मगर खूनी भागा नहीं। आप नित्य जाकर राजाके लंगरसे रोटी ले आता, रातको कोठरी बन्द करके आनन्द सहित सोता और भागनेका नामतक न लेता था।

मन्त्री बड़े चकित हुए कि अब क्या करें, इसके यहां पड़े

रहनेसे हमारे राजकी हानि ही हानि है, लाभ कुछ भी नहीं। एक मन्त्रीने खूनीको बुलाया और यों बात-चीत करने लगा।

मन्त्री—भाई, तुम भागते क्यों नहीं ? तुम जहां चाहो जा सकते हो, महाराज इसका बुरा न मानेंगे।

खूनी—महाराज बुरा मानें अथवा भला, मैं जाऊँ कहां और करूँ क्या ? आपने तो मेरा सर्वनाश कर दिया, काम करनेका अभ्यास मुझे नहीं रहा। इससे तो यह अच्छा था कि आप उसी समय मेरा गला काट डालते। हाय हाय, यह कैसा अन्याय है, पहले मनुष्यको कैद करके निकम्मा बना देना और फिर कहना कि भाग जाओ। मैं नहीं जाता। मैं तो अब यहीं प्राण दूँगा।

लीजिये अब फिर कमीशन बैठी, कई दिनके अधिवेशनके उपरान्त यह निश्चय हुआ कि सौ रुपये साल पेंशन देकर उसे यहाँसे विदा कर दिया जाये।

अन्धेको चाहिये दो आंखें, खूनी पेंशन पाकर बड़ा प्रसन्न हुआ। मैनपुरी छोड़कर दूसरी राजधानीमें धरती मोल लेकर खेती करने लगा। अब वह आये वर्ष मैनपुरी जाकर सौ रुपये ले आता है आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत करता है।

बस, इसमें यही बात अच्छी हुई कि उसने किसी ऐसे देश में अपराध नहीं किया जहां कैदीका गला काटने अथवा बन्दी-खानेमें रखनेके लिये खर्चकी कुछ भी चिन्ता नहीं की जाती।

———

१९

राजा दृगपाल और चन्द्रदेव

विजय नगरके राजा दृगपालने राजा चन्द्रदेवके साथ युद्ध करके उसकी सेनाके सहस्रों योधा मार डाले, गाँव जला दिये और स्वयं चन्द्रदेवको पकड़कर पिंजरेमें कैद कर दिया।

रातको चारपाईपर पड़ा हुआ दृगपाल यह विचार कर रहा था कि चन्द्रदेवका किस प्रकार वध करूं कि अकस्मात् एक बूढ़ा दिखाई पड़ा।

बूढ़ा—तुम चन्द्रदेवके वध करनेका विचार कर रहे हो?

दृगपाल—हाँ, बात तो यही है, परन्तु अभीतक मैंने कुछ निश्चय नहीं किया।

बूढ़ा—परन्तु तुम तो स्वयं चन्द्रदेव हो।

दृगपाल - झूठ, मैं, मैं चन्द्रदेव, चन्द्रदेव!

बूढ़ा—तुम और चन्द्रदेव एक हो। चन्द्रदेवको जो तुम अपनेसे भिन्न मानते हो, यह केवल तुम्हारी भूल है।

दृगपाल—आप कहते क्या हैं, मैं यहां कोमल बिछौनेपर पड़ा हूँ। दास-दासी मेरी सेवामें लगे हैं। आजकी भांति कल मैं अपने मित्रोंके संग प्रीति-भोजन करूंगा। चन्द्रदेव पक्षीकी तरह पिंजरेमें बन्द है। कल वह कुत्तोंसे फड़वा दिया जायगा।

बूढ़ा—उसकी आत्माको नाश नहीं कर सकते।

दृगपाल—वाह वाह, तो चौदह हजार योद्धा मारकर ढेर कैसे लगा दिया? मैं जीता हूँ, वह मर गये, क्या इससे यह सिद्ध नहीं होता कि मैं आत्माको नष्ट कर सकता हूँ?

बूढ़ा—यह आप किस तरह जानते हैं कि वह मर गये?

दृगपाल—इसलिये कि वह दिखायी नहीं देते। इसपर एक बात यह है कि उन्हें कष्ट हुआ और मुझे राज्य मिला।

बूढ़ा—यह भी आपको भ्रम हुआ है, आपने उन्हें कष्ट नहीं दिया, वरन् अपने आपको कष्ट दिया है।

दृगपाल—मैं आपकी बात नहीं समझता!

बूढ़ा—आपको समझनेकी इच्छा है?

दृगपाल—हां, समझनेकी इच्छा है।

बूढ़ा—अच्छा तो आओ उस तालाबपर चलें।

तालाबपर पहुंचकर बूढ़ेने कहा कि वस्त्र उतारकर इस तालाबमें उतर जाओ, ज्योंही मैं तुम्हारे सिरपर पानी डालने लगूं, तुम तालाबमें गोता लगाना। राजा दृगपालने वैसा ही किया। गोता लगाते ही उसने देखा कि मैं राजा दृगपाल नहीं कोई और हूँ। पास एक सुन्दर स्त्री लेटी हुई है। यद्यपि इस स्त्रीको उसने पहले कभी नहीं देखा था, फिर भी उसे वह अपनी रानी समझ रहा था।

स्त्री—प्यारे प्राणपति, कलके थकानके कारण आपको सोते-सोते देर हो गयी है। मैंने आपको जगाया नहीं। अब आप

उठिये, वस्त्र पहनकर दरबारमें जाइये। राजे-महाराजे आपकी राह देख रहे हैं।

राजा दृगपाल अपनेको चन्द्रदेव समझकर तुरन्त उठकर दरबारमें चला गया।

वहाँ राजे-महाराजे चन्द्रदेवको देखकर अति प्रसन्न हुए और प्रणाम करके बोले—महाराज, हमको दृगपाल बड़ा दुःख दे रहा है। यह अपमान अब नहीं सहा जाता। आज्ञा दीजिये कि युद्धकी दुन्दुभी बजायी जावे। चन्द्रदेव बोला—नहीं, पहले दूत भेजकर दृगपालको समझाना उचित है। दूत भेजकर आप शिकार खेलने चल दिया और वहां जाकर जंगलसे दो सिंह मार लाया। फिर महलमें जाकर उसने भोजन किया और रात्रिको रानीके साथ विहार करता रहा।

अब इस प्रकार सदैव वह राज-काज करके मृगया करने जाता; रात्रिको महलमें आकर रानीके साथ विहार करता था। महीनों बीत गये, इतनेमें उसके दूत लौट आये, पर उनके नाक और कान कटे हुए थे। राजा दृगपालने कहलाया था कि दूतोंकी जो दुर्गति हुई है वही चन्द्रदेवकी भी होगी, अगर उसने सोना चांदी कर न दिया।

चन्द्रदेव (वास्तवमें दृगपाल) ने मन्त्रियोंको एकत्र करके आज्ञा दी कि चतुरंगिनी सेना सजाकर युद्धकी तैयारी करो, मैं स्वयं संग्राम करूँगा। आठवें दिन चन्द्रदेव और दृगपालमें घोर संग्राम हुआ, चन्द्रदेव (अर्थात दृगपाल) पकड़ा गया। उसे

भूख प्यासका इतना दुःख न था जितना कि अपमान और अप्रतिष्ठाका। पिंजरेमें बन्द रहकर सदा अपने मित्रों और सम्बन्धियोंको बँधे हुए देखकर उसका मन बहुत दुःखी होता। नित्य यही विचार करता था कि शत्रुको किस प्रकार मारूँ, यहांतक कि जब उसने अपनी रानीके हाथ-पांव बंधे देखे और यह जाना कि दृगपालके पास ले जा रहे हैं तो वह क्रोधसे जल उठा और चाहता था कि पिंजरा तोड़कर बाहर निकल जायें परन्तु वह बेसुध होकर अन्दर ही गिर पड़ा।

इतनेमें दो वधिकोंने आकर उसकी मुश्कें कस लीं और उसे फांसीपर ले चले। चन्द्रदेव रो-रोकर कहने लगा—मुझे मत मारो; मुझपर दया करो। परन्तु किसीने न सुना। फाँसीपर लटकनेको ही था कि उसे ध्यान आया—ओहो, यह तो मेरा भ्रम है, मैं तो दृगपाल हूँ। यह तो स्वप्न है। वह जोर मारकर सिर बाहर निकाला ही चाहता था कि फिर सो गया और देखा कि मैं तो पशु बन गया हूँ।

अब वह पशु बनकर जंगलमें चरने लगा, बच्चे उसका दूध पीने लगे। तब दृगपालने समझा 'कि मैं तो हिरनी बन गया, परन्तु इस अवस्थामें वह बड़ा सुख मान रहा था। इतनेमें किसी शिकारीने बच्चेके गोली मारी। बच्चा गिर पड़ा और एक भयानक मनुष्यने आकर उसका सिर काट डाला।

दृगपालने भयसे चौंककर सिर बाहर निकाल दिया तो देखा कि बूढ़ा पास खड़ा है और वहां कुछ नहीं।

दृगपाल—ओहो ! मैंने कितने कालपर्य्यन्त कष्ट भोगा, कि मैं कुछ वर्णन नहीं कर सकता।

बूढ़ा - अभी तो आपने सिर डुबोया था, मेरा तो लोटा भी खाली नहीं हुआ, आप कहते हैं कि चिरकालतक आपने दुःख भोगा। विचारो कि चन्द्रदेव और जिन योधाओं और पशुओंको तुमने मारा है वह सब वास्तवमें तुम ही हो। तुम यह समझ रहे हो कि आत्मा केवल तुममें ही है; परन्तु मैंने तुम्हारा चोला बदल करके यह दिखला दिया है कि दूसरोंको कष्ट देनसे वास्तवमें तुम अपनेको ही कष्ट देते हो। आत्मा एक और सर्वत्र व्यापक है उसीका एक अंश तुममें है, उस अंशको शुद्ध अथवा अशुद्ध करना तुम्हारे वशमें है। सबको अपनी आत्मा समझकर उनके साथ प्रेम करनेसे तुम्हारी आत्मा शुद्ध हो जायगी। दूसरोंको दुःख देकर निज आत्माको पालन करनेसे तुम्हारी आत्मा भ्रष्ट हो जायगी। आत्मा अविनाशी है। जो मर गये वह तुम्हें दिखायी नहीं देते परन्तु आत्मा नहीं मरती। तुम दूसरोंको मारकर अपनी आयु बढ़ाना चाहते हो, यह असम्भव है। आत्मा छोटी-बड़ी नहीं हो सकती, वह देश कालसे परे है। उससे भिन्न जो कुछ दिखायी देता है वह सब भ्रान्ति मात्र है।

यह कहकर बूढ़ा अन्तर्ध्यान हो गया।

अगले दिन दृगपालने चन्द्रदेवको छोड़ दिया और पुत्रको राज्य सौंपकर बनमें तपस्या करने चला गया।

अन्तःकरणका मल मैल दूर करके अब दृगपाल साधुवेषमें

प्राणिमात्रको देश-देश फिरकर यह उपदेश करता है, कि दूसरों-का अपकार करना स्वयं अपना अपकार करना है।

२०

रोग और मृत्यु

सृष्टिके आदिमें मनुष्योंको कोई काम न करना पड़ता था क्योंकि उन्हें अन्न, वस्त्र गृह आदिकी कोई कमी न थी। इस प्रकार रहते-रहते वह सौ मनुष्य हो गये। इस समय तक वह रोगका नामतक नहीं जानते थे।

कुछ दिन पीछे परमात्माने मनुष्योंको देखनेकी इच्छा की, आकर देखा कि वह सब परस्पर विरोध करके स्वार्थी बन गये हैं और जीवनको सुखका मूल नहीं दुःखका मूल समझते हैं।

परमात्माने विचारा कि यह सब अलग-अलग रहनेका फल है। ऐसा प्रबन्ध करूँ कि मनुष्य परस्पर मिलापके बिना जीवित ही न रह सकें। अब उन्हें सरदी-गरमी सताने लगी। भूख-प्याससे कष्ट होने लगा। उनसे बचनेके लिये उन्हें घर बनाना और खेती करनी पड़ी।

परमात्माने सोचा कि प्रत्येक मनुष्य सब काम नहीं कर सकता, अवश्य एकको दूसरेकी सहायता लेनी पड़ेगी। भला यह कब सम्भव है कि एकही मनुष्य अपने लिये हथियार बना-

कर जंगलसे लकड़ी काटकर मकान बनाये अथवा कपास बोकर आप ही उसे कातकर कपड़ा बुने। वह अब यह जान लेंगे कि परस्पर मित्रतासे काम करनेमें ही उनका भला है और किसी प्रकार नहीं।

कुछ काल पीछे परमात्माने आकर देखा कि मनुष्य पहलेकी अपेक्षा और भी दुखी है, काम तो मिलकर करते हैं, क्योंकि इसके बिना जीना असम्भव है परन्तु सब मिलकर काम नहीं करते। उन्होंने छोटे-छोटे जत्थे बना रखे हैं और एक जत्था दूसरे जत्थेको कष्ट दे रहा है।

यह देखकर परमात्माने ऐसी माया फैलायी कि किसी आदमीको अपनी मौतका समय न मालूम हो। ऐसा करनेसे चित्तमें यह भाव उत्पन्न हो जायगा कि कौन जाने कब देहान्त हो जाय, हम अपने इस चार दिनके जीवनको भ्रष्ट क्यों करें।

परन्तु इससे भी कुछ न हुआ, परमात्माने देखा कि बल-वालोंने दुर्बलोंको मृत्युका भय दिखलाकर उन्हें अपने वशमें कर लिया है। स्वयं कुछ काम नहीं करते और आलसके कारण मोटे हो गये हैं। दुर्बलोंको अत्यन्त काम करनेमें अति कष्ट होने लगा है। प्रत्येक जत्था एक दूसरेसे भय और द्वेष करने लगा है।

परमात्माने यह दशा देखकर निश्चय किया कि अब अन्तिम उपाय यह है कि अब मैं रोगको भेजता हूँ, क्योंकि जब वह यह जान लेंगे कि प्रत्येक मनुष्य रोगग्रस्त हो सकता है, तो उनमें परस्पर दया करनेका भाव उत्पन्न हो जायगा।

कुछ काल पीछे परमात्माने आकर देखा कि रोगने मनुष्यों-में ऐक्यता तो क्या उत्पन्न कर दी, उल्टी उनमें निर्दयता बढ़ा दी। धनवान जब रोगी होते हैं तो निर्धनोंसे काम कराते हैं, और जब दूसरे रोग-ग्रस्त होते हैं तो धनी लोग उनकी किंचि-न्मात्र भी चिन्ता नहीं करते। निर्धन बेचारोंको कामसे इतनी छुट्टी ही नहीं मिलती कि वह अपने कुटुम्बियोंकी रक्षा कर सकें। इसलिये कि रोगी पुरुषोंके देखनेसे अमीरोंके भोगविलासमें कोई वाधा न हो, बस्तीसे दूर मकान बनाकर उनमें वैद्यादि नौकर रख दिये गये हैं जो कंगाल रोगियोंपर दया न करके उनसे घृणा करते हैं और वह बेचारे इन वैद्योंकी बातोंमें आकर अनेक प्रकारका कष्ट भोगकर प्राण त्याग देते हैं। तिसपर बहुतसे रोगोंको लोग छूत अथवा गन्ध रोग समझकर न केवल रोगियों-से बचते हैं। वरंच उनकी रक्षा करनेवालोंको भी छूना पाप मानते हैं।

तब परमात्माने यह निर्णय किया कि मनुष्योंको सुखी करना असम्भव है, जैसे हैं वैसे ही रहने दो।

कुछ काल उपरान्त अब लोग यह मानने लगे हैं कि हमें सुख प्राप्तिका उपाय करना उचित है, कुछ लोग ऐसा जान गये हैं कि काम ऐसा होना चाहिये जो सबको प्रिय हो, यह नहीं कि धनाढ्य तो उसे रीछ समझकर भागें और निर्धन उसे करते करते प्राण दे दें। वह समझने लगे हैं कि मौतका डंका सदैव बज रहा है, इस कारण वर्ष, महीने, घण्टे, मिनट जो कुछ भी

मिले उसे मेल और प्रेममें बिताना चाहिये। उन्हें विश्वास होता जाता है कि रोग उत्पन्न होनेपर बैर-भाव प्रकट करनेके प्रतिकूल एक दूसरेके साथ प्रेम करनेका अवसर मिलता है।

२१

तीन प्रश्न

एक समय एक राजाने विचार किया कि मुझे यह मालूम हो जाना चाहिये कि—

१—किसी कामको शुरू करनेका ठीक समय कौन-सा है।

२—किन लोगोंकी बात सुननी चाहिये, किनकी नहीं।

३—संसारका सबसे उत्तम पदार्थ क्या है जिससे मैं जो चाहूँ सो कर सकता हूँ।

अतएव उसने अपनी राजधानीमें डौंडी पिटवा दी कि जो कोई पुरुष इन तीन बातोंका उत्तर देगा, उसे बहुत इनाम दिया जायगा। अब बुद्धिमान पुरुष आकर राजाको इन प्रश्नोंका उत्तर देने लगे।

पहले प्रश्नके उत्तरमें किसीने कहा कि मनुष्यको काम करनेके वास्ते पहले दिनों; महीनों और वर्षोंका सूचीपत्र बना लेना चाहिये। किसीने कहा कि कार्य्य आरम्भ करनेका पहलेसे ठीक समय नियत करना असम्भव है। मनुष्यको चाहिये कि

वृथा समय न गँवाये। जो कर्त्तव्य हो सदा उसे करता रहे। किसीने कहा कि राजा कितना भी चतुर और सावधान क्यों न हो वह अकेला प्रत्येक कार्य्य आरम्भ करनेका ठीक समय नहीं जान सकता। उसे बुद्धिमान लोगोंकी सभा बनाकर उनसे सम्मति लेनी चाहिये।

इसपर दूसरे बोले कि कुछ कार्य ऐसे होते हैं कि उन्हें तुरन्त करना पड़ता है। सभामें उनपर विचार करनेका अवकाश नहीं मिल सकता और कार्य करनेसे पहले उसका फल जानना आवश्यक है, यह सब बातें ओझे, पंडित जानते हैं इस कारण उनसे पूछना उचित है।

इसी प्रकार लोगोंने दूसरे प्रश्नके भी अनेक उत्तर दिये। किसीने कहा राजाके मंत्री अति उत्तम होने चाहिये, कोई बोला पंडित, कोई बोला, वैद्य, किसीने कहा, सेना इत्यादि।

तीसरे प्रश्नका उत्तर भी ऐसा ही मिला, कोई कहता था पदार्थ विद्या सबसे उत्तम है, कोई कहता था शास्त्र-विद्या, कोई बतलाता था पूजा-पाठ।

राजाको कोई उत्तर ठीक मालूम न हुआ। पासके जंगलमें एक जगत-विख्यात, बुद्धिमान साधु निवास करता था। राजाने विचारा कि चलो उस साधुसे इन प्रश्नोंका उत्तर पूछें।

साधु कुटिया छोड़कर कहीं बाहर नहीं जाता था और केवल दीन मनुष्योंसे मिला करता था। इस कारण राजा साधारण वस्त्र पहनकर पैदल साधुकी कुटियापर पहुँचा।

देखा कि साधु कुटियाके सामने धरती खोद रहा है। राजाको देखते ही साधुने प्रणाम किया और फिर मिट्टी खोदने लगा। वह बहुत दुबला और कमजोर था और फावड़ा चलाते हुए हाँफता था!

राजाने कहा, महाराज मैं आपसे तीन बातें पूछने आया हूँ—पहली यह कि मैं ठीक काम करनेका ठीक समय किस प्रकार जान सकता हूँ। दूसरी यह कि मुझे किन लोगोंसे सहवास करना उचित है। तीसरी यह कि कौनसा विषय सबसे उत्तम है।

साधुने कोई उत्तर नहीं दिया और धरती खोदता रहा।

राजा—महाराज, आप थके मालूम होते हैं, लाइये फावड़ा मुझे दीजिये, और आप जरा विश्राम कर लीजिये।

साधुने राजाको धन्यवाद दिया और फावड़ा उनके हाथमें दे दिया। आप जमीनपर बैठ गया।

राजा दो क्यारियाँ खोद चुका तो रुक गया और फिर अपने तीनों प्रश्न दुहराये। साधुने उत्तर दिया, हाँ— फावड़ा लेनेको हाथ बढ़ा दिया लेकिन राजाने फावड़ा न दिया और खोदता ही रहा, यहाँ तक कि साँझ हो गयी। तब राजाने फावड़ा जमीन पर रख दिया और बोला—

महाराज, मैं तो आपसे अपने प्रश्नोंका उत्तर लेने आया था, यदि आप कोई उत्तर नहीं दे सकते तो मैं लौट जाता हूँ।

साधु—देखो कोई भागा आता है।

राजाने मुँह फेरकर देखा कि एक दाढ़ीवाला मनुष्य जंगल-की ओरसे दौड़ा आ रहा है। उसने अपने पेटको हाथोंसे दाब रखा था और हाथोंके बीचसे रुधिर बह रहा था। राजाके पास पहुँचकर वह बेसुध होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा। राजा और साधुने कुरता उठाकर देखा तो उसके पेटमें बड़ा भारी घाव पाया। राजाने घावको पानीसे धोकर अपना रूमाल उसपर बाँध दिया, रुधिर बन्द हो गया, कुछ काल उपरान्त मनुष्यको सुध आयी, पानी माँगा। राजाने तुरन्त जल लाकर मनुष्यको पिलाया। इतनेमें सूर्य्यास्त हो गया, राजा साधुकी सहायतासे मनुष्यको उठाकर कुटियामें ले गया और वहाँ चारपाईपर लेटा दिया। घायल आदमीको नींद आ गयी और राजा भी थक जानेके कारण तुरन्त सो गया। भोर होनेपर उठा तो घायल-ने कहा—राजन् आप मुझे क्षमा कीजिये।

राजा—क्षमा कैसी, मैं तो तुम्हें जानता भी नहीं।

मनुष्य—आप मुझको नहीं जानते, परन्तु मैं आपको जानता हूँ। आपने मेरे भाईका धन हर लिया था, इस कारण मैंने प्रतिज्ञाकी थी कि आपसे बदला लूँ। मैं जानता था कि आप साधुसे मिलकर सन्ध्या समय अकेले घरको लौटेंगे, इस कारण जंगलमें छिप रहा था। आपके सिपाहियोंने मुझे वहाँ देखकर पहचान लिया और मुझे गोली मारी। मैं भागकर यहाँ आया। यदि आप मेरा घाव न बन्द करते तो मैं अवश्य मर जाता,

आपने मुझपर बड़ी दया की। मैं आपको मारना चाहता था, परन्तु आपने मेरी जान बचायी। अब भविष्यमें आपका निज दास बनकर सेवा करूंगा, आप क्षमा करें।

राजा बड़ा प्रसन्न हुआ कि ऐसा घातक शत्रु सहजमें ही मित्र बन गया। उसने अपने वैद्यको उसकी दवा करनेको बुला भेजा और अपने नौकर उसकी सेवा करनेके लिये बुलाये। उससे विदा होकर राजाने साधुसे कहा - महाराज आपने मेरे प्रश्नोंका कोई उत्तर नहीं दिया, अच्छा प्रणाम, अब आज्ञा दीजिये।

साधु—आपके प्रश्नोंका उत्तर तो मिल चुका।

राजा—मैं नहीं समझा।

साधु—देखो, यदि तुम कल मुझपर तरस खाकर धरती न खोदते और शीघ्र ही लौट जाते तो यह मनुष्य राहमें तुम्हें कष्ट देता, और तुम पछताते कि मैं साधुके पास क्यों न ठहर गया। इसलिये विदित हुआ कि उचित समय वह था जब तुम धरती खोद रहे थे और उचित मनुष्य मैं था और मेरा भला करना तुम्हारा परम कर्त्तव्य था। उसके पीछे जब यह मनुष्य आया, तो उचित समय वह था जब तुम उसके घावको बन्द कर रहे थे, और वह उचित मनुष्य था और उसके घावको बन्द करना तुम्हारा कर्त्तव्य था। सारांश यह कि सदैव वर्तमान काल ही उचित काल है, क्योंकि केवल वर्तमान कालपर ही हमारा अधिकार है। जो मनुष्य मिल जाय वही उचित मनुष्य है। कौन

जानता है पन्नमें क्या हो जाये और कोई मिले अथवा न मिले सर्वोत्तम कर्त्तव्य परोपकार है, क्योंकि उपकारके ही लिये पुरुष इस मृतलोकमें शरीर धारण करता है।